Azim Premji University

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का प्रकाशन

लर्निंग कर्व

हिन्दी अंक 7 : अप्रैल, 2014



सीखने–सिखाने के

नवाचारी

तौर–तरीके

अन्दर : मानविकी, विज्ञान, सीखने का आनन्द तथा रिसोर्स किट

सम्पादन
अनन्दा एच. एन.
चन्द्रिका मुरलीधर
इन्दुमति एस.
मधुमिता सुधाकर
प्रेमा रघुनाथ

सलाहकार
रामगोपाल वल्लत
एस. गिरिधर

हिन्दी अनुवाद
सत्येन्द्र त्रिपाठी
मनोहर नोतानी
मदन सोनी
नलिनी रावल
भरत त्रिपाठी

हिन्दी अंक सम्पादन
राजेश उत्साही

डिजायन एवं मुद्रक
एससीपीएल डिजायन
बंगलौर - 560 062
+ 91 80 2686 0585
+ 91 98450 42233
www.scpl.net

आवरण
बलराज के.एन.
balraj@balrajkn.com
91 9900722004
www.balrajkn.com

कृपया ध्यान दें :

इस अंक में प्रकाशित लेख मूलतः लर्निंग कर्व (अँग्रेजी) Issue XIX, अप्रैल 2013 के लेखों का हिन्दी अनुवाद है। लेखों में व्यक्त विचार और दृष्टिकोण लेखकों के अपने हैं, उनसे अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन या अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

लर्निंग कर्व अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का एक प्रकाशन है। इसका उद्देश्य शिक्षकों, शिक्षक–अध्यापकों, स्कूल प्रमुख, शिक्षा अधिकारियों, अभिभावकों और गैर–सरकारी संगठनों तक ऐसे प्रासंगिक और विषयगत मुद्दों में पहुँच बनाना है जो उनके रोजमर्रा के काम से सम्बन्धित हैं। लर्निंग कर्व शैक्षिक जगत के विभिन्न दृष्टिकोणों, अभिव्यक्तियों, परिप्रेक्ष्यों, नई जानकारियों और नवाचार की कहानियाँ प्रस्तुत करने के लिए एक मंच प्रदान करता है। इसका मूल विचार 'शैक्षणिक' और 'अभ्यासकर्ता' के मध्य सन्तुलन हेतु उन्मुख पत्रिका के रूप में स्थापित होना है।

सम्पादक की बात



अध्यापक के प्रवेश करते ही कक्षा की गति कुछ अलग हो जाती है, जिसकी तुलना स्कूल में होने वाली अन्य किसी भी गतिविधि से नहीं की जा सकती। हम सब इससे परिचित हैं, आखिर बचपन की तरह ही स्कूल जाना भी हम सबका साझा अनुभव रहा आया है। माहौल में यह तात्कालिक बदलाव क्या और क्यों, ये दोनों ही सवाल, मुश्किल सवाल हैं। लेकिन – ऐसा होता तो है – घण्टी बजती है, एक टीचर चल देती है, अपने साथ अपना कुछ हिस्सा लिए–लिए, साथ ही कुछ पीछे छोड़ भी जाती है। दूसरी टीचर प्रवेश करती है, अपने साथ अपना कुछ लिए हुए – अपने विषय का और उसे पढ़ाने के अपने तरीके का कोई हिस्सा।

यहाँ तक कि कक्षा के पीरियड का भी कुछ मतलब होता है। विज्ञान और गणित के अध्यापक सुबह–सुबह की क्लास लेना पसन्द करते हैं, क्योंकि इन विषयों को ऐसे विषय माना जाता रहा है जिन्हें ग्रहण करने के लिए विद्यार्थियों को अपनी सर्वोत्तम और सबसे मेधावी मनस्थिति में रहना जरूरी होता है। वैसे यह बात विवादास्पद है।

कक्षा की चारदीवारी में अध्यापक का अपना रुतबा होता है – जहाँ, आमतौर पर, किसी विषय के प्रति, आजीवन रुचि बनती या बिगड़ती है। न जाने कितनी बार हम सुनते आए हैं कि फलाँ–फलाँ को गणित या भौतिकी या ज्यामिति पल्ले नहीं पड़ती, क्योंकि शुरुआत में ही उन्हें ऐसे असंवेदनशील अध्यापक मिले जिन्होंने उस विषय को कल्पनाहीन या उबाऊ तरीके से पढ़ाया था।

बस इसी मुद्दे पर है लर्निंग कर्व का यह अंक।

सम्पादक होने के नाते, यहाँ मुझे इस बात का खुलासा करना जरूरी लगता है कि लर्निंग कर्व में हम सबने महसूस किया कि किसी विषय को पढ़ाने के ऐसे तमाम तरीकों की पड़ताल करना निश्चित ही उपयोगी होगा जो उसे एक आजीवन आनन्द और ज्ञान के बतौर स्थापित करते हैं। सो बनती कोशिश, हम ज्यादा से ज्यादा अध्यापकों को अवसर देना चाहते थे ताकि वे समझा पाएँ कि किस चीज ने उन्हें व उनके विद्यार्थियों को आनन्द और सन्तोष प्रदान किया। जैसा कि कोई भी अध्यापक आपको बताएगा (और हर अध्यापक यह जानता है), जीवन में कम ही चीजें उस आनन्द की बराबरी कर सकती हैं जो आनन्द किसी और को वह चीज देने में आता है, जिसे हम जानते और पसन्द करते हैं। ज्ञान देने की यह प्रक्रिया सफल होने पर ही आगे की पढ़ाई की पृष्ठभूमि बन पाती है। कक्षा में बिताया हुआ समय सबसे मूल्यवान अनुभव भी हो सकता है तो सिरे से निरर्थक भी हो सकता है, अगर वह उबाऊ हो जाए या विचारोत्तेजक या कल्पनाशील न बन पाए।

हमारे इस चिन्तन–मनन का नतीजा है 'नवाचारी तरीकों' पर केन्द्रित लर्निंग कर्व का यह अंक – पाठ्य –पुस्तकों से लिए गए तरीके नहीं बल्कि ऐसी तकनीकें, तरकीबें हैं, जो समयसिद्ध और कारगर रही आई हैं। ये एकदम व्यावहारिक हैं और भारत की अधिकांश कक्षाओं में पाई जाने वाली साधारण से साधारण परिस्थितियों में भी इन्हें किया जा सकता है। अध्यापन की इन विधियों को आजमाने के लिए किसी विशेष उपकरण की जरूरत नहीं। विषय चाहे एक–दूसरे से कितने ही अलग क्यों न हों, पर इन सबको जोड़ने वाला सूत्र एक ही है – कुछ अलग करना, कुछ नया करना – जिसके चलते बच्चे सीखने की प्रक्रिया में इस कदर रम जाते हैं कि वे उम्मीद से ज्यादा करने की ठान लेते हैं।

इस अंक में देश भर से आए अलग–अलग स्तरों पर विभिन्न विषय पढ़ाने वाले अध्यापकों के लेख शामिल हैं। यही नहीं, प्रत्याशित से हटकर की गईं कुछ रोचक कोशिशें भी हमने इस अंक में शामिल की हैं – उदाहरण के लिए ब्रिज (ताश के पत्तों) के खेल के द्वारा गणित की अवधारणाओं और उसके सिद्धान्तों को समझने के प्रयोग को भी हमने यहाँ जगह दी है। अध्यापकों का कहना है कि उनके विद्यार्थी परिवर्तन लाने की दृष्टि से उन्हें और ज्यादा मेहनत करने के लिए प्रेरित करते रहते हैं।

एक राष्ट्र के बतौर विभिन्न क्षेत्रों में हुई प्रगति को लेकर हम निराश रहते हैं। लेकिन यहाँ आपको ऐसे लेख मिलेंगे जिनका सुर उम्मीद का सुर है – मुझे यकीन है कि इन्हें पढ़ने के बाद भारतीय शिक्षा को लेकर एक अच्छी–खासी उम्मीद बन्धने वाली है। दुनिया भर के अध्यापक, कक्षा की उपलब्धियों को बेहतर बनाने के लिए अपने सर्वश्रेष्ठ प्रयासों में लगे हैं। इस अंक में पाठकों को एक ऐसे स्कूल की झलक मिलेगी जो एक गतिशील व जीवन्त संस्था के रूप में आवश्यकताओं के हिसाब से बदलता रहता है।

हम आशा करते हैं कि अध्यापक इस अंक के लेखों को उपयोगी पाएँगे और इनके आधार पर वे अपने विद्यार्थियों के साथ कुछ ऐसे प्रयोग कर पाएँगे जिनके चलते सीखने की प्रक्रिया मजेदार और रोचक बन सकेगी। हमें आपकी प्रतिक्रियाओं और आलोचनाओं का इन्तजार रहेगा ताकि हम अपनी कोशिशों को और बेहतर कर पाएँ।

प्रेमा रघुनाथ

सम्पादक, लर्निंग कर्व

prema.raghunath@azimpremjifoundation.org

(अनुवाद : मनोहर नोतानी)

इस अंक में



खण्ड अ

मानविकी

खण्ड ब

विज्ञान



खण्ड स

सीखने का आनन्द

Pullout
Resource Kit


ENVIRONMENT
GEOGRAPHY
HISTORY
ENVIRONMENT
MATH
SCIENCE
HINDI
SCIENCE
ENGLISH
NEWSPAPER

[k.M v %e kufodh



01 "क्या कर सकते हैं?" से "कर सकते हैं!" तक की यात्रा

गौरी मिराशी और
पारुल पटेल

अक्टूबर 2009 की बात है। जोधपुर, राजस्थान के निकट लोरदी देजगरा नामक गाँव के दस–वर्षीय आठ बच्चों ने सोलह बाल–विवाहों को होने से रुकवाया।

सन् 2010 में लैंसेस्टर, पेनसिल्वेनया, संयुक्त राज्य अमेरिका के कुछ ग्यारह वर्षीय विद्यार्थियों ने स्थानीय शासन के साथ मिलकर अपने शहर में साइकिल मार्ग डिजाइन किया ताकि मोटापे की समस्या से छुटकारा पाया जा सके।

वर्ष 2011 में ताइपेइ, ताइवान के पाँच तेरह–वर्षीय विद्यार्थियों ने एक प्राचीन भूले–बिसरे गीत को पुनर्जीवित कर अपनी धरोहर को बहाल व संरक्षित किया।

विभिन्न देशों और संस्कृतियों के हजारों ऐसे किस्सों में से ये तीन किस्से ऊपर दिए गए हैं। ये तीनों किस्से जिस एक चीज को साझा करते हैं वह है, अपने समुदाय को बदल पाने की बच्चों की सामर्थ्य। इसे डिजाइन फॉर चेंज की संस्थापक, किरण बीर सेठी के शब्दों में कहें तो, 'हम कर सकते हैं' का संकल्प।'

किरण, डिजाइनर से शिक्षक, प्राचार्या से शिक्षा सुधारक और



हम कर सकते हैं!

एक पैरोकार से सामाजिक उद्यमी बनीं। राष्ट्रीय डिजाइन संस्थान (एन.आइ.डी.), अहमदाबाद की एक प्रशिक्षित ग्राफिक डिजाइनर होने के चलते किरण बड़े आराम से डिजाइन की भाषा – अभ्यास, प्रारूप, डिजाइन मानकों – का इस्तेमाल करते हुए न सिर्फ पाठ्यचर्या में नयापन लाती हैं बल्कि समुदाय–आधारित सामाजिक कार्यक्रम भी बना लेती हैं।

उनकी दलील बड़ी सरल है। जिस दुनिया में जीवन के शुरुआती पन्द्रह सालों में बच्चों से जब यह अपेक्षा होती है कि जो कहा जाए, सिर्फ वही करने के अलावा उनके पास और कोई **चारा नहीं** है, तो फिर ऐसी दुनिया में बच्चों से "वास्तविक दुनिया से दो–चार होने के लिए तैयार" होने की अपेक्षा रखना मूर्खता ही होगी। यदि एक स्कूल, बच्चों को **स्कूल में** अच्छे से नियंत्रित रखने के अलावा कुछ और नहीं कर पाता तो फिर ऐसा स्कूल किसी काम का नहीं। निश्चय ही, **सहज बोध** तो यही कहता है कि स्कूल का काम जीवन में बुद्धिमत्तापूर्ण काम करने हेतु विद्यार्थियों को तैयार करना है। लेकिन ऐसे प्रयोजन में दुनिया को समझने, उसकी विसंगतियों की पड़ताल करने और उसकी चुनौतियों से निपटने की तैयारी **अपरिहार्य** हो जाती है।

सहज बोध को सहज व्यवहार में ढालने के मकसद से किरण बीर सेठी ने जब 'रिवरसाइड स्कूल' शुरू किया तो वह 'अनुपम' शिक्षण और 'रूपान्तरकारी' विद्यार्थी सहभागिता को साकार करने वाली परिकल्पक प्रक्रियाओं के 'मॉडलों' की एक प्रयोगशाला बन गया। हर साल इस स्कूल का समूचा पाठ्यक्रम अनुकूलन की प्रक्रिया से गुजरता है, विद्यार्थियों के फीडबैक की रोशनी में यह परीक्षित और संशोधित होता है। प्रक्रियाओं और उनके परिणामों को कागज पर उतारकर भविष्य के लिए उनका डॉक्यूमेण्टेशन और परिष्कार किया जाता है।

सहज बोध की इस शैली ने यह दिखला दिया है कि आप बच्चों को द्विघात समीकरणों, प्रकाश संश्लेषण और कविता की कद्र करना सिखाने के **साथ–साथ** उन्हें प्रजातंत्र या बाल शोषण के प्रति सजग रहने और संवेदनशील बनने का संस्कार भी दे सकते हैं। केवल गणित या विज्ञान में सर्वश्रेष्ठ बनने या सबसे तेज और ताकतवर बनने के दिन अब लद गए। अब तो संवेदना, सहयोग, अनुकूलन जैसी प्रवृत्तियों और सामूहिक कार्य, समस्या–समाधान, कम्प्यूटर ज्ञान और कल्पनाशील सोच जैसे कौशलों के सन्दर्भ में हमारे बच्चों को जानना–परखना भी दिनोंदिन महत्वपूर्ण होता जा रहा है। प्रमुख शिक्षाविद इन कौशलों और प्रवृत्तियों को 'इक्कीसवीं सदी के कौशल' मानते हैं।

देने की मनोवृत्ति में बच्चों को भी शामिल करने की जरूरत को महसूस करते हुए और बदलाव लाने की उनकी क्षमता में भरोसा रखते हुए रिवरसाइड टीम ने सन 2009 में **डिजाइन फॉर चेंज (परिवर्तन की अभिलाषा डी.एफ.सी.)** *नामक कार्यक्रम शुरू किया। अपने पहले ही साल में डी.एफ.सी. कार्यक्रम भारत के 30,000 स्कूलों तक पहुँचा और विद्यार्थियों को इस बात के लिए प्रेरित किया*



FIDS Process

कि वे अपने आसपास परिवर्तन लाएँ। आज यह अभियान कोई 35 देशों तक फैल गया है और **करोड़ों बच्चों को प्रोत्साहित कर रहा है कि वे खुद वह परिवर्तन बनें जिसे वे दुनिया में देखना चाहते हैं।**

डी.एफ.सी. विद्यार्थियों से चार एकदम सहज चीजें करने को कहता है – महसूस करें, कल्पना करें, करके देखें और

साझा करें (**फील, इमैजिन, डू, शेअर – फिड्स**)। इस आसान–से ढाँचे का इस्तेमाल करते हुए तमाम आयु–समूहों के बच्चे पहल कर रहे हैं, खुलकर अपनी बात कह रहे हैं, ऐसी योजनाएँ बनाकर उन्हें क्रियान्वित कर रहे हैं जो वाकई उनके समुदायों पर असर करती हैं – जातिगत भेदभाव और स्त्री–भ्रूण हत्या सरीखी युगों से चली आ रहीं सामाजिक समस्याओं को निपटाने से लेकर स्कूली बस्ते का बोझ कम कराने तक, खतरनाक वायरस के विरुद्ध लड़कियों का टीकाकरण कराने से लेकर बेरोजगारों को रोजगार दिलाने तक, ज्ञानार्जन के हिसाब से स्कूलों में बेहतर वातावरण बनाने से लेकर अपने दादा–दादियों, नाना–नानियों को पढ़ाने के सामुदायिक कार्यक्रम की कमान अपने हाथ में लेने तक। इन तमाम उपयोगी कार्यक्रमों के आकल्पन व क्रियान्वयन के द्वारा बच्चे यह दर्शा रहे हैं कि मनवांछित भविष्य रचने का माद्दा उनमें कूट–कूटकर भरा है।

इस समूची प्रक्रिया का पहला चरण है **महसूस करना** – ऐसी कोई भी बात जो बच्चों को परेशान करती हो, ऐसी कोई चीज जिसे बच्चे बदलना चाहते हैं। सबसे पहले तो यह विश्लेषण किया जाता है कि यह समस्या बच्चों को परेशान क्यों कर रही है, इसके बाद समस्या की जड़ में निहित मानवीय व्यवहारों को खंगाला जाता है, तब फिर इससे सम्बद्ध विभिन्न भागीदारों से विचार–विमर्श किया जाता है।

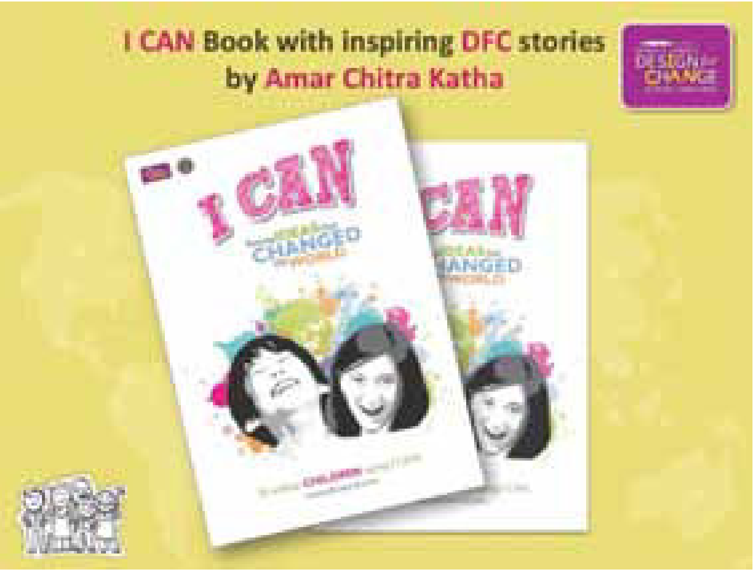
अगले चरण में समाधान के सर्वश्रेष्ठ घटनाक्रम की समूची **परिकल्पना** रखी जाती है। नतीजतन, बच्चों को यह सोचने की प्रेरणा मिलती है कि यदि इसे ठीक करने की तमाम जिम्मेदारी उन्हें सौंप दी जाए तो स्थिति क्या होगी! इस बिन्दु पर समाधान की व्यावहारिकता को लेकर दिमाग खपाने की जरूरत नहीं है। महत्वपूर्ण तो यह है कि वे अपनी कल्पना के घोड़ों को बेलगाम, बेहिसाब दौड़ने दें ताकि वांछित समाधान की सम्भावित मूरत की छवि वे **देख सकें**।

अगला कदम है **करना** – बच्चों की कल्पना को साकार करने का चरण। तमाम उपलब्ध संसाधनों को ध्यान में रखते हुए अपने सर्वश्रेष्ठ मनसूबे को हकीकत में बदलने की एक ठोस कार्ययोजना तैयार करते हैं। रणनीति बन जाने के बाद वे बस उसे क्रियान्वित करने में जुट जाते हैं।

और अन्तिम चरण है **साझेदारी**। इस चरण में विद्यार्थी अपने किए–धरे पर मनन करते हैं और फिर व्यापक स्कूली समुदाय, अभिभावकों और बाकी दुनिया से इस बाबत हुए अपने अनुभव बाँटते हैं। इसके चलते उसी समस्या से जूझ रहे अन्य लोग, बच्चों द्वारा गढ़े गए इस समाधान को अपने यहाँ भी लागू कर सकते हैं। और यही नहीं, इसके जरिए यह सन्देश भी जाता है कि अगर हम कर सकते हैं तो तुम भी कर सकते हो। इसके अलावा, इसमें सार्वजनिक समीक्षा और ऐसे सुझावों की गुंजाइश भी बनती है जो बच्चों द्वारा लिखी गई परिवर्तन की इस इबारत को एक तरह से समृद्ध ही करते हैं।

'रिवरसाइड' में बाँची गई कल्पनापूर्ण सोच (**डिजाइन थिंकिंग**) और **फिड्स** की कारगरता को दर्शाने वाली उत्कृष्ट कथा के पात्र तीसरी कक्षा के वे बच्चे हैं जो अपने स्कूल के प्रवेश द्वार के बाहर जमे कूड़े के ढेर को ठिकाने लगाना चाहते थे। बच्चों को इसका जो एकदम फौरी समाधान नजर आया वह था बाहर जाकर उस कूड़े के ढेर को अपने हाथों से साफ करना और उन्होंने यह किया भी। लेकिन एक हफ्ते बाद, कूड़े का ढेर फिर से आ धमका। बच्चों को यह तो एहसास हो गया कि उनके दिमाग में आने वाले सबसे पहले समाधान को जस–का–तस अपनाने की भूल उनसे हुई थी। दरअसल, उन्होंने कुछ बुनियादी चीजों का अनुसरण तो किया ही नहीं था, जैसे अव्वल तो यह पूछना कि ऐसा क्यों होता है, इसके बाद उस पर नजर रखना, और फिर उन मानवीय प्रवृत्तियों को चिह्नित करना जिनके चलते प्रथमतया यह समस्या खड़ी होती है। बस फिर क्या था, फिड्स प्रक्रिया के तहत वहाँ कचरा फेंकने वाले लोगों को ही अपने साथ शामिल कर उन्होंने इसका एक बेहतर और टिकाऊ समाधान खोज निकाला।

इस प्रक्रिया की सफलता के लिए मेण्टर (मार्गदर्शक) की



भूमिका बड़ी अहम होती है। ठेठ शुरुआत से ही वातावरण, विद्यार्थी स्वामित्व, सहयोग और रचनात्मकता के अनुकूल होना चाहिए। विद्यार्थियों को महसूस कराया जाना चाहिए कि वे ही प्रभारी हैं और जवाबदेह भी। जरूरी नहीं कि उनके द्वारा चुनी हुई समस्या वैश्विक महत्व रखती हो – जैसे जलवायु–परिवर्तन, गरीबी, बेरोजगारी – समस्या ऐसी होनी चाहिए जिसे विद्यार्थी खुद महसूस करते हों और उसे लेकर वे खुद चिन्तित रहते हों। मार्गदर्शक का काम है विद्यार्थियों को समस्या के लक्षणों में उलझा रहने देने की बजाय उसके मूल में जाने के लिए प्रोत्साहित करना। मार्गदर्शक का काम है विद्यार्थियों को खुद अपने बूते अपना मॉडल बनाने, गलतियाँ करने और उन्हें सुधारने और अपनी प्रक्रिया व अपने उत्पाद को परिष्कृत करने की आजादी देना। समस्या को सुलझाने ही नहीं उसे समझने में भी व्यापक समुदाय से परस्पर–संवाद की जरूरत का विद्यार्थियों को एहसास कराना भी मार्गदर्शक की जिम्मेदारी होती है। सार्थक सामुदायिक संवाद की प्रक्रिया को आसान बनाने से विद्यार्थी कक्षा से बाहर निकलकर एक व्यापक जन–समुदाय के समक्ष अपने विचार रखते हैं, उनकी पैरवी करते हैं और उनके साथ प्रयोग करते हैं।

डी.एफ.सी. अध्यापकों और विद्यार्थियों के लिए दो प्रारूपों में उपलब्ध है। डी.एफ.सी. स्कूल चैलेंज, एक हफ्ते की एक प्रतियोगिता है जिसमें बच्चों से कहा जाता है कि वे कोई ऐसी चीज पहचानें जो उन्हें परेशान करती है और वे इसका एक समाधान प्रस्तुत करें। यह पहला कदम है जहाँ बच्चे "मैं क्या कर सकता हूँ?" कहने की बजाय "हाँ, मैं कर सकता हूँ।" कहना सीखते हैं। समग्र डी.एफ.सी. सामग्री 9 भारतीय भाषाओं और 6 अन्तर्राष्ट्रीय भाषाओं में ऑनलाइन उपलब्ध है – कोई भी इसे निशुल्क डाउनलोड कर सकता है! डी.एफ.सी. वेबसाइट (**www.dfcworld.com**), परिवर्तन के प्रेरणापूर्ण प्रसंगों को साझा करने का एक ऐसा उत्कृष्ट मंच बनकर उभरी है जहाँ दुनिया भर के विद्यार्थी एक–दूसरे के काम से प्रेरित होते हैं।



BTC Conference

डी.एफ.सी. पाठ्यचर्या (डी.एफ.सी. करिक्युलम) वह दूसरा मंच है जो समूचे शैक्षणिक वर्ष के लिए अध्यापकों द्वारा संचालित होता है। इसमें विद्यार्थियों के लिए और अधिक दीर्घावधि समाधानों पर काम करने का सुभीता होता है। जिन स्कूलों में 'नैतिक शिक्षा' या 'सामाजिक रूप से उपयोगी उत्पादक कार्य' का विशेष कालखण्ड होता है उनके लिए डी.एफ.सी. पाठ्यचर्या, अत्यन्त कारगर मंच के बतौर प्रस्तुत होती है। पिअर्सन लॉन्गमैन नामक प्रकाशन समूह ने तो 'अ ब्यूटीफुल लाइफ' शीर्षक से अपनी माध्यमिक विद्यालयीन नैतिक शिक्षा पाठ्यपुस्तक श्रंखला में भी डी.एफ.सी. पाठ्यचर्या को शामिल किया है।

इसके अलावा, भारत में बच्चों की किताबों के अग्रणी

प्रकाशक अमर चित्रकथा (ए.सी.के.) ने तो इन विद्यार्थी–संचालित कथाओं को पूरी–की–पूरी एक किताब की सूरत में पेश किया है, जिसका शीर्षक है 'मैं कर सकता/सकती हूँ – बीस ऐसे तरीके जिनके द्वारा बच्चे पूरी दुनिया ही बदले दे रहे हैं।' इस किताब में 20 परिवर्तन कथाएँ हैं, जो सारी की सारी दुनिया भर के नवयुवा नागरिकों द्वारा कार्यान्वित हो रही हैं। एसीके ने कुछेक डी.एफ.सी. कथाओं को कॉमिक्स के रूप में भी ढाला है जो देश की सुप्रसिद्ध कॉमिक्स पत्रिका 'टिंकल' में प्रकाशित होंगी। पिअर्सन और एसीके के जरिए विद्यार्थी अपने हमउम्र नायकों के बारे में पढ़ रहे हैं और उनसे प्रेरणा ले रहे हैं।

सन 2012 में 'डिजाइन फॉर चेंज' ने अपनी प्रकार की पहली 'बी द चेंज कॉन्फ्रेंस (खुद परिवर्तन बनिए अधिवेशन)' का आयोजन किया जिसमें दुनिया भर के डिजाइनर, कर्ता, विद्यार्थी और शिक्षक शामिल हुए और उन्होंने अपने–अपने डी.एफ.सी. अनुभव साझा किए। इस अधिवेशन में वक्ताओं की औसत आयु महज 14 वर्ष थी। इसकी सफलता ने यह तो स्पष्ट कर दिया कि हम अगर बच्चों को अवसर दें तो वे हमें विस्मित कर देने का माद्दा रखते हैं।

अपनी शुरुआत के चार बरस बाद 35 से भी अधिक देशों का हमारा अनुभव हमारे इसी विश्वास की पुष्टि करता है कि **हर बच्चा कर सकता है!**



पारुल पटेल *डी.एफ.सी. की प्रशासनिक कर्ता–धर्ता हैं। सन 2011 से रिवरसाइड स्कूल से जुड़ीं पारुल डी.एफ.सी. कार्यक्रम की शुरुआत से ही इसमें सक्रिय रही आई हैं।*

गौरी मिराशी *डी.एफ.सी. इण्डिया की समन्वयक हैं। इन्हें india@dfcworld.com पर आपकी प्रतिक्रियाओं का इन्तजार है।* ***अनुवाद*** *: मनोहर नोतानी*



02 अध्यापन से मुक्ति

मीनाक्षी उमेश

भूमिका

मैं किसी चीज की विशेषज्ञ नहीं हूँ और ऐन शुरुआत में ही यह साफ कर दूँ कि मैं अभी भी सीख रही हूँ। स्कूल कैसा होना चाहिए, इस पर मेरे विचार एक स्कूल टीचर होने के नाते मेरी स्मृतियों पर टिके हैं। ईमानदार होकर कहूँ तो पूवीधाम शिक्षा केन्द्र शुरू करते वक्त मुझे पता न था कि बच्चों को पढ़ाया कैसे जाना चाहिए और बच्चों को कैसे वातावरण की जरूरत होती है, लेकिन मैं इतना तो जानती थी कि एक छात्रा के बतौर मैंने कक्षा में कोई काम की चीज नहीं सीखी। सो मोटे तौर पर मैं यह मानकर चली कि ऐसे वातावरण में सारे के सारे बच्चे कुछ नहीं सीख पाते।

मेरी इस धारणा के मद्देनजर जब मैंने पलटकर देखा तो पाया कि मेरी अधिकांश स्मृतियाँ स्कूल व अध्यापकों के प्रति गुस्से और असन्तोष की स्मृतियाँ थीं। बस उसी पल मैंने महसूस किया कि मैं कुछ अलग करना चाहती हूँ: मैं नहीं चाहती थी कि अपने स्कूली दिनों को याद करते वक्त कोई भी बच्चा मुझे ऐसी नकारात्मक भावनाओं से देखे।

तभी मैं एक प्रसिद्ध टीचर के सम्पर्क में आई जिन्होंने मुझे यह किस्सा सुनाया। *एक युवा भिक्षु ने उनसे पूछा, "गुरुजी, एक बात बताइए कि ये गुरु भला किसलिए होते हैं?" "तिस पर वे मुस्कराए और बोले," अरे! वे किसी काम के नहीं होते! वे तुम्हें वही पढ़ाते हैं जो तुम पहले से जानते हो और वही चीजें दिखाते हैं जो तुम देख चुके हो।"* और उनका यह जवाब मेरे साथ रहा आया।

फिर जब मैंने अपने बच्चों को देखा तो पाया कि बिन पढ़ाए ही वे किस तरह पढ़ जाते हैं, इस तरह मेरी शिक्षा आगे बढ़ी। मैंने देखा कि सीखने के लिए बच्चा अपने शरीर का इस्तेमाल करता है। शरीर सीखने का पहला माध्यम बनता है। शरीर मन को पढ़ाता है और मन चित्रों, अनुभवों और क्रियाओं का एक ऐसा संसार रचता है जिसमें शरीर शामिल रहता है। बाहरी दुनिया की तस्वीर मन के अन्दर बनाने के लिए शारीरिक अनुभव बड़े काम के होते हैं। भरोसा, आत्म–विश्वास, सहयोग, ईमानदारी, सच्चाई, संवेदनशीलता, स्वायत्तता और अन्य सकारात्मक (यहाँ तक कि नकारात्मक भी) प्रवृत्तियाँ, व्यक्तिगत अनुभवों से ही उपजती हैं। मैंने यह भी देखा कि कोई चीज सबसे तेज और सबसे अच्छे से तभी सीखी जाती है जब बच्चा तय कर चुकता है कि उसे वह चीज सीखना है। सीखने की इच्छा होने के बावजूद सीखना मस्तिष्क के लिए एक चुनौती तो होता ही है। शिक्षा की प्रकृति ऐसी होने के चलते शिक्षक की भूमिका मेरे लिए पहेली बन गई।

बच्चे का मन बहुत सक्रिय और जिज्ञासु होता है। मेरी बेटी कोई तीनेक साल की रही होगी जब मैं उस नन्ही बच्ची के अवलोकन से चकित रह गई। आसपास उड़ते हुए बगुलों को देखकर ही वह भाँप जाती थी कि गायें कहाँ चर रही हैं। वह जानती थी कि बगुलों को गायों की पीठ पर बैठने में मजा आता है। वह सारे तिनके और फूल चूसती थी और जान जाती थी कि उनमें से किस–किस में रस भरा है! वह बस उनकी किनार देखकर ही भिन्न–भिन्न घासपत्तियों में अन्तर करना सीख गई थी। मैं यदि उसे घास का कोई ऐसा तिनका देती जिसमें रस न होता तो वह कहती, "नहीं, ये वाला नहीं माँ!" मेरे बेटे को भी, जो उन दिनों दो बरस का था और अभी अपने सवाल भी बोलकर अभिव्यक्त नहीं कर सकता था, मैंने एक प्रयोग करते देखा। हमारे घर में कड़प्पा पत्थर के त्रिभुजाकार टुकड़े बड़ी संख्या में इधर–उधर पड़े रहते थे। तभी एक दिन मैंने उसे कड़प्पा पत्थर के ऐसे ही एक तिकोने टुकड़े को उसके आधार पर

खड़ा करते और उसे धचका मारकर नीचे गिराते देखा। उसका इस तरह पत्थर को छूकर गिराना, देखते ही बनता था। कई कोशिशों के बाद जाकर उसे यह बात समझ आई कि यदि थोड़े–से ही बल के द्वारा पत्थर को गिराना है तो पत्थर की नोक पर प्रहार करना होगा। इसके बाद जो हुआ वह तो और भी दिलचस्प था। पट्ठे ने कुछ पत्थर इकट्ठे किए और उन्हें लेकर वह थोड़ी दूर जाकर बैठ गया और इसके बाद वह वहीं से ही नोक को पत्थर मारकर अपने आधार पर खड़े उस पत्थर को गिराने की कोशिश करने लगा। इसके बाद तो अपने इस खेल में वह कोई एक घण्टे से भी ज्यादा समय तक रमा रहा! *और कुछ अध्ययन कहते हैं कि एक छोटे बच्चे की ध्यान–अवधि (अटेन्शन स्पान) केवल छह सेकण्ड होती है!*

धीरे–धीरे मैं इस निष्कर्ष पर पहुँची कि मुझे पढ़ाने की जरूरत तो नहीं पड़ेगी, अलबत्ता बहुत कुछ सीखने की जरूरत पड़ेगी। ऐसे में, मेरे बच्चों के लिए मेरा उपयोग, केवल मेरा वाचन कौशल ही रहा आया। कहानियाँ पढ़कर, गीत गाकर उन्हें सुनाना और विश्वकोश में उनके सवालों के जवाब ढूँढ़ निकालना, कुल मिलाकर, मैंने यही काम किए।

फलसफा

जब मैंने यह स्कूल शुरू करने का निर्णय लिया तब मैं हर बच्चे को गतिविधि करने, पूछने और सीखने के बराबर अवसर देना चाहती थी। लेकिन जो बच्चे पहले कभी स्कूल जा चुके थे और फिर स्कूल छोड़ चुके थे, वे सवाल पूछने से कतराते थे। तिस पर मैंने कुछ मॉण्टेसरी सामग्री बनाने का निर्णय लिया।

अपने हाथों से अपनी इच्छानुसार कक्षा के सुरक्षित वातावरण में काम करने का विचार बड़ा आकर्षक था। इसके समान्तर, सब्जियों की क्यारियाँ लगाने, कम्पोस्ट खाद बनाने, घासपात से ढकने (पलवार करने), वानस्पतिक स्प्रे करने और बीज चुनने जैसे काम बहुत मजेदार होने के साथ–साथ उपयोगी भी थे क्योंकि सबसे पहले तो हम सब किसान ही थे।

अब मेरे स्कूल को लेकर मेरा फलसफा स्पष्ट होने लगा था। शिक्षा का उद्देश्य हमारी जीवन शैली और जीवन को लेकर हमारे उद्देश्य से परिभाषित होता है। मनुष्य के जीवन का उद्देश्य भला क्या है? बहुत से दार्शनिकों ने इस प्रश्न का उत्तर देने का प्रयत्न किया है। वे सभी विभिन्न विचारधाराओं के द्वारा अपने अपने निष्कर्षों पर पहुँचे हैं। लेकिन एक प्रकार से कहा जाए तो सच्चाई यह है कि उद्देश्य का जन्म मनुष्य के पहले हुआ। जीवन–श्रृंखला का उद्देश्य, किसी जैवलोक (बायोस्फियर) में विभिन्न प्राणियों के परस्पर–सामंजस्य का उद्देश्य, जीवन के एक रूप द्वारा जीवन के अन्य रूप की आहारपूर्ति का उद्देश्य, सूर्य, पानी, पृथ्वी और वायु का उद्देश्य। इस सबसे निकलकर आने वाला मानव जीवन का एकमात्र उद्देश्य तो यही समझ में आता है कि वह अपने सीमित साधनों के द्वारा इन तमाम अन्य उद्देश्यों में अपना सहयोग दे।

'विकास' शब्द बड़ा ही विवादास्पद पद है। आमतौर पर जिसे हम विकास समझते हैं वह सड़क और बिजली की सुलभता के साथ–साथ इन दोनों के चलते उपलब्ध उत्पादों और सुविधाओं का प्रतीक होता है। लेकिन इस तरह का विकास प्रायः अपने साथ लालच नाम का रोग भी लिए आता है।

ऐसे में, जब हम इस विकास से अभी तक अनछुए रहे आए आदिवासी समुदायों को देखते हैं तो उनमें तृप्ति और आनन्द की ऐसी गुणवत्ता पाते हैं जो दुनिया के सर्वाधिक विकसित हिस्सों तक में दिखाई नहीं देती। शुरुआती समाजों में, जब तक मनुष्य की दृष्टि पर इस विकास की हड़बड़ी का कुहासा अभी छाया न था, हर किसी को अपने आसपास के पर्यावरण और उसमें निहित वानस्पतिक व जीव जगत के प्रति अपनी सामूहिक निर्भरता का एहसास था।

जैविक कृषि, सारी महान सभ्यताओं का आधार थी। जैविक खेती, मनुष्य द्वारा सबसे पहले सीखी गई कला, कारीगरी, तकनीक और आर्थिकी थी। उद्यम और ज्ञानार्जन की अन्य सारी विशेषज्ञताओं के उद्‌भव का आधार कृषि ही थी। इसके बावजूद, उन मशीनों और अन्तरिक्ष यानों के तुमुल में कृषि अब भुला दी गई है, जो कृषि के बिना किसी का

भला नहीं कर सकते। खेती इस धरती का सबसे महत्वपूर्ण उद्यम है, क्योंकि भोजन के बिना कोई भी जीव जिन्दा नहीं रह सकता। यह मामूली–सी सच्चाई नहीं बदली लेकिन समाज की प्रवृत्तियों में बड़ा भारी बदलाव आया है। खेती का काम अब उन लोगों के हवाले छोड़ दिया गया है जिन्हें और कोई काम करने योग्य नहीं समझा जाता। खेती को अब अच्छे कामों में नहीं गिना जाता। इसे अब सबसे घटिया काम माना जाने लगा है। इस भेदभाव में शिक्षा अपनी महती भूमिका निभाती है। उदाहरण के लिए, अधिकांश किसान, यह नहीं पढ़ पाते कि उनके खेत में डलने वाली चीजों में कौन–कौन से तत्व शामिल हैं। ज्यादातर लोग, कीटनाशकों के पैकेटों पर लिखी गई चेतावनियाँ नहीं पढ़ पाते। और न ही वे उन पर दिए गए आत्म–सुरक्षा के निर्देशों को पढ़ पाते हैं। आजकल किसानी ऐसे लोगों द्वारा की जा रही है जिन्हें मिट्टी, पानी और हवा के प्रदूषण का जरा भी बोध नहीं, और जो ग्लोबल वार्मिंग और मुक्त बाजार आर्थिकी का गोरखधन्धा कभी न समझ पाएँगे, और तो और, पेड़ लगाने का महत्व तक उनके पल्ले नहीं पड़ता।

हमारे विद्यालय में हम किसानी को एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कर्म की तरह बरतते हैं। डॉक्टर, इंजीनियर, शिक्षक बनने जैसे तमाम कॅरिअर विकल्पों में 'किसान बनने' को बड़े गर्व से शामिल किया गया है।



कीड़ों का अध्ययन

शुरुआत

मेरा जन्म और लालन–पालन मुम्बई में हुआ। मुम्बई में बिताए बीस बरसों ने शहरी जीवन के विभिन्न पहलुओं और उनके पीछे छिपी सच्चाइयों के प्रति मेरी आँखें खोलीं। सर जे.जे. कॉलेज ऑफ आर्किटेक्चर से वास्तुकला की डिग्री समाप्त करने के बाद, वैकल्पिक जीविका की मेरी चाह मुझे पॉण्डिचेरी के निकट ऑरोविल ले गई जहाँ मैंने कम–लागत, पारिस्थितिकी–स्नेही निर्माण तकनीकों पर काम किया। मेरा रुझान हमेशा से बच्चों और स्कूलों में रहा आया है और इसके चलते कई बार मैं 'इसै आम्बलम' स्कूल जाती रही जहाँ मेरी मुलाकात उमेश से हुई जो जैविक खेती कर रहे थे। आई.आई.टी चेन्नै से मैकेनिकल इंजीनियरिंग में बी.टेक करने के बाद उनका भी मोहभंग मेरी ही तरह हुआ था और वे भी एक वैकल्पिक जीवन शैली की तलाश में थे।

कुछ सालों तक कुछ संगठनों के साथ कम करने के बाद, हमने खेती, भवन निर्माण और शिक्षा के क्षेत्र में विभिन्न विकल्पों पर अपना कुछ करने का निर्णय लिया। सन 1992 में हमने तमिलनाडु के धर्मपुरी जिले में पूरी तरह से उजाड़ 12 एकड़ जमीन खरीदी। इस भूखण्ड में करीब दो एकड़ का एक ऐसा कृषि–योग्य टुकड़ा था जिसमें हम ऊसर फसलें ले सकते थे। बाकी की दस एकड़ जमीन में क्षरित पहाड़ी ढलान थे जहाँ हम पेड़ लगाकर जमीन को पुनर्जीवित करने की आशा ही कर सकते थे। पहले तीन साल तो अच्छी बारिश हुई जिसके चलते हम खेती और मिट्टी व जल संरक्षण का अच्छा–खासा काम कर सके। नतीजतन, पेड़ों और तिनकों की ढेरों देसी प्रजातियाँ पनप आईं। हमने जंगली पेड़ लगाए और पशु चारा भी बोया। पूरी तरह से अनुपजाऊ भूरे रंग का जमीन का वह टुकड़ा धीरे–धीरे खिलने लगा था और तभी बरसातें अविश्वसनीय छिटपुट छींटे बन चलीं। 1997 में तो वर्षा रानी सिरे से गायब रहीं। खेतों में लगीं हमारी सारी फसलें सूख–सुखा गईं। और तब जाकर हम किसान का दुख दर्द समझे।

उस साल हमने तय किया कि वर्षा–पोषित खेती पर पूरी तरह से ऐसे तो निर्भर नहीं रहा जा सकता और इसीलिए

हमने एक घाटी में पानी के विश्वसनीय स्रोत वाली एक जमीन खरीदी। लेकिन वहाँ पर पहले कभी हुए उर्वरकों और कीटनाशकों के भीषण इस्तेमाल के चलते, पहले दो सालों में तो सिंचित जमीन पर की गई जैविक खेती भी अच्छी पैदावार देने में असफल रही। तीसरे साल में जाकर वहाँ प्राकृतिक सन्तुलन स्थापित हो पाया। ऐसे में, जब हमें कुछेक लाभकारी कीड़े दिखे तो हमने वहाँ पर वानस्पतिक स्प्रे करना भी उचित न समझा। चौथा बरस आते–आते, हमारी जमीन सेहतमन्द बन चुकी थी और हमारी उपज भी काफी बेहतर हुई। बस उसी समय हमने स्थानीय लोगों को भी जैविक खेती के पाले में लाने का निर्णय लिया और इस काम में उनके बच्चों – **भविष्य के कृषकों** को शामिल किया।

इस प्रकार सन 2000 में हमने रबीन्द्रनाथ ठाकुर, महात्मा गाँधी और ई.एफ. शुमाखर के सिद्धान्तों पर आधारित एक स्कूल शुरू किया जहाँ मारिया मॉण्टेसरी, डेविड हॉर्सबर्ग, रुडोल्फ स्टाइनर और जैनेट व ग्लेन डुमैन द्वारा दिखाए गए तरीकों का इस्तेमाल होता है। वर्ष 2000 में हमारे पास 7 बच्चे होते थे, अब हमारे स्कूल में 90 बच्चे हैं। हमारा स्कूल, अभिभावकों की आजीविका और परिवार की आर्थिक स्थिति के हिसाब से फीस लेता है। प्रवासी श्रमिकों के बच्चों के लिए हम एक छात्रावास भी चलाते हैं। हमारे छात्रावास में 30 बच्चे हैं। ये बच्चे हमारे साथ ही रहते और शिक्षार्जन करते हैं। दिवाछात्र (डे–स्कॉलर्स), आसपास के किसानों के बच्चे होते हैं। हमारे सारे विद्यार्थी पहली पीढ़ी के विद्यार्थी हैं।

लेकिन एक समस्या भी थी। माँ–बाप चाहते थे कि उनके बच्चे अँग्रेजी सीखें सो उन्होंने हमसे आग्रह किया कि हम उनके बच्चों को इस तरह पढ़ाएँ कि उन्हें फटाफट नौकरी मिले और वे गाँव छोड़ें। उनके बच्चे जैविक या अन्य किसी किस्म की खेती करें, यह विचार उन्हें सिरे से नापसन्द था। अब असल दुविधा खड़ी हुई – इन बच्चों को क्या पढ़ना चाहिए? कौन तय करेगा?

वातावरण

किसी ने कहा भी है, *“केवल वही व्यक्ति शिक्षित है जिसने यह सीख लिया है कि सीखा कैसे जाता है; कि सामंजस्य बैठाते हुए बदला कैसे जाता है; जिसने जान लिया है कि वैसे तो कोई भी ज्ञान सुरक्षित नहीं है, पर केवल ज्ञानार्जन की प्रक्रिया ही सुरक्षा का सम्बल देती है। सो वर्तमान परिस्थितियों में शिक्षा के ध्येय के बतौर, ठहरे हुए, कर्महीन ज्ञान की बजाय जीवन्त प्रक्रिया पर भरोसा रखना ही सार्थक लगता है।”*

सो इन बुनियादी संवेदनाओं को ध्यान में रखते हुए हमने अपने स्कूल का वातावरण रचने और उसकी विषयवस्तु बनाने का काम शुरू किया। पूवीधाम शिक्षा केन्द्र में हम जो कुछ कर रहे हैं उस सबका लक्ष्य है एक ऐसे वातावरण का निर्माण जिसमें बच्चे की मौलिक संवेदनशीलता और सहजबुद्धि प्रखर बने और प्रोत्साहित हो, न कि हतोत्साहित होकर नष्ट हो जाए। प्रकृति के साथ काम करते हुए जीव–जन्तुओं, पेड़–पौधों, एक स्वतंत्र व सम्पूर्ण इकाई के रूप में प्रकृति, अन्य लोगों तथा अपने आन्तरिक व्यक्तित्व या स्व के प्रति संवेदनशीलता को जीवन्त बनाए रखा जाता है। हम बच्चे को समझने की कोशिश करते हैं। बच्चे पर हम पूरी तरह से भरोसा करते हैं। हमारे लाड़ और उनकी बालसुलभ सहजता पर हमारे विश्वास के फलस्वरूप बच्चे भी हमसे अच्छे से पेश आते हैं। इन्सान के बतौर हम



पूवीधाम में बच्चों की बागवानी

सबमें कुछ न कुछ कमी है, हमारी भी कमजोरियाँ हैं। लेकिन अपनी गलतियों से सीखने और अपनी आशंकाओं को दूसरों के सामने व्यक्त करने के लिए हम हमेशा तैयार रहते हैं।

हममें से हरेक अपनी–अपनी करनी के लिए जवाबदेह होता है और हर कोई, किसी भी कार्य पर सवाल खड़े कर सकता है। हमारे बीच सामुदायिकता की भावना कूट–कूटकर भरी है और अपने परिसर व शौचालयों की साफ–सफाई और उनका रख–रखाव हम आपस में मिल बाँटकर करते हैं। खाना बनाना, साफ–सफाई, हँसना–हँसाना, मस्ती; कुल मिलाकर हम बड़े मजे में रहते हैं।

संवेदनशीलता के चलते सृजन और वैज्ञानिक अनुसन्धान की गुंजाइश बनती है और यहीं से जीवन–दर्शन का द्वार खुलता है और आत्म–अन्वेषण की दिशा मिलती है।

सामान्य, औपचारिक स्कूलों में शिक्षा, खण्डित और जीवन से दूर हो चुकी है, वह कुछ ज्यादा ही अमूर्त बना दी गई है। यह बहुत बिरले ही होता है कि कोई बच्चा स्कूल में पढ़ाई जाने वाली चीजों और असल जीवन में होने वाली चीजों के बीच कुछ रिश्ता समझ या बना पाए।

हमारा उद्देश्य **जीवन और शिक्षा को एक–दूसरे से जोड़ना** और स्कूल के अन्दर या बाहर असल जीवन में हुए अनुभवों और अवलोकनों के द्वारा मिले संश्लेषित ज्ञान को समझने–बूझने में बच्चों की मदद करना है।



विषयवस्तु

उपरोक्त सारी जरूरतों को ध्यान में रखते हुए हमने अपने स्कूल की पढ़ाई को पाँच मूलभूत इकाइयों में बाँटा :

पाँच तत्व : अग्नि, पृथ्वी, जल, वायु और आकाश

जीवन बने रहने के लिए ये पाँच तत्व बड़े जरूरी हैं। अपनी पाँच इन्द्रियों के द्वारा बच्चे इन तत्वों को अनुभव करते हुए उनके भौतिक गुणों का ज्ञान प्राप्त करते हैं। यहाँ पर एक वयस्क की भूमिका सिर्फ इतनी होती है कि वह बच्चों का ध्यान तत्व के उन लक्षणों की ओर ले जाए जिनका सम्बन्ध वे उन अवधारणाओं से जोड़ रहे होते हैं जो अवधारणाएँ कक्षा में पढ़ाई जा रही हैं। बच्चों को सिखाई जाने वाली अवधारणाओं पर अध्यापक कहानियाँ और गीत लिखते हैं। हमारी पाठ्यचर्या इसी बुनियाद पर विकसित हुई है लेकिन इसमें कहानी सुनाने और गीत गाने की परम्परा का भी समावेश किया गया है ताकि सम्प्रेषण आसान हो।



सूर्य की परछाई से समय पता करना

शिक्षा मण्डलों व शिक्षण संस्थाओं द्वारा महत्वपूर्ण माने गए बुनियादी सिद्धान्तों को हम कथाओं व गीतों में पिरोते हैं जो कक्षा में दोहराए और बाँचे जाते हैं। इन कहानियों और गीतों से जो कुछ उन्हें समझ आया, बच्चे उसका सिद्धान्त चित्र बनाकर दिखाते हैं। खुद बच्चों के बीच और शिक्षक के साथ भी उनकी बहुत बातचीत होती रहती है।

बच्चों को कक्षा में आने–जाने की पूरी स्वतंत्रता रहती है, दूसरों की एकाग्रता में व्यवधान डाले बिना वे जब चाहें, अपने हिसाब से कक्षा में आ–जा सकते हैं। सारा जोर, कागज के पुनरुपयोग, शिक्षण सामग्री के सही इस्तेमाल, पर्यावरण में मौजूद अन्य प्राणियों के प्रति सम्मान पर रहता है। गिनने, श्रेणीबद्ध करने, वर्गीकरण करने, मापने, मापन ड्रॉइंग, पैमाना ड्रॉइंग, ज्यामितीय ड्रॉइंग (जैसे कि पारम्परिक रंगोली) आदि के द्वारा गणित को कक्षा की गतिविधियों में शामिल किया गया है। ड्रॉइंग, बच्चों की अन्दरूनी दुनिया की एक महत्वपूर्ण अभिव्यक्ति होती है। ड्रॉइंग में बच्चों को मजा आता है और हमें उनके द्वारा बनाए गए इन चित्रों से उनके सबसे निजी सपनों और उनकी वैयक्तिक उलझनों को जानने का अवसर मिलता है। पेड़–पौधों, फूलों व कीटों, प्राकृतिक स्थलों और इमारतों के चित्र बनाने पर काफी जोर व समय दिया जाता है। किसी भी वस्तु को ध्यान से देखते हुए उसका चित्र बनाते समय बच्चों को उस वस्तु विशेष के विभिन्न अवयवों की सविस्तार जानकारी मिलती है। अवलोकनों के दौरान, अन्य बच्चों की नजर में आईं लेकिन उनकी नजरों से छूट गईं चीजों पर बच्चों के बीच बड़ी बहस छिड़ जाती है और इसे लेकर बहुत सारे सवाल पैदा होने लगते हैं।

बहसबाजी, टहलकदमी, प्रेक्षण और सवाल–जवाब, रोजमर्रा की पढ़ाई के अभिन्न अंग होते हैं। बच्चों को उकसाया जाता है कि जिस चीज या विचार के बारे में जो कुछ वे जानते हैं, वे उसे अपने शब्दों में व्यक्त करें और इसके बाद उनके शिक्षक की मदद से उनके इस मौजूदा को विस्तार दिया जाता है।

बच्चों को समूहों में बाँटकर उनसे एक खाली भूभाग पर अपना वह पसन्दीदा हिस्सा चुनने के लिए कहा जाता है जिस पर वे पौधे उगाना चाहेंगे। इसके बाद जमीन के उस हिस्से की वे नपाई करते हैं और स्केल के हिसाब से उसे ड्रॉ करते हैं। क्यारियों की डिजाइन बनाकर वे तय करते हैं कि वे कौन–कौन से पौधे लगाना चाहेंगे। वे इस काम में लगने वाले बीजों की मात्रा की गणना करते हैं। इसके बाद वे अपने द्वारा लगाए गए पौधों की रक्षा के लिए उन्हें



पतवार से ढकते हैं, उन्हें पानी देकर सींचते हैं और फिर अपने पौधों को बढ़ता हुआ देखते हैं। वे पौधों के बढ़ने की दर की गणना करते हैं, उन पर आए फूलों की गिनती करते हैं और फलों की संख्या से उनकी तुलना करते हैं। वे पौधों के अंगों और उन पर मँडराने वाले कीटों और पक्षियों का अवलोकन कर उनके स्केच बनाते हैं। अन्ततः वे बागवानी पर खर्च हुए उनके समय और इसके फलस्वरूप उन्हें मिली सब्जियों की पैदावार की गणना करते हैं और फिर इसके आधार पर वे अपने इस सारे कामकाज का लागत–विश्लेषण करते हैं। इसके अलावा वे कीट नियंत्रण के प्राकृतिक अर्क व वर्मी–कम्पोस्ट खाद बनाना भी सीखते हैं। कुल मिलाकर वे उस क्षेत्र में पैदा होने वाले तमाम पौधों, जड़ी–बूटियों, पेड़ों और लताओं के बारे में काफी कुछ जान लेते हैं। इस प्रकार धीरे–धीरे वे उन्हें पहचानने लगते हैं तथा औषधियों या भोजन के लिए, कम्पोस्ट खाद बनाने या पलवार हेतु उनका उपयोग करने लगते हैं। इन अनुभवों के जरिए वे अपने आसपास से जुड़ते हैं और भौतिकी, रसायनशास्त्र, जैविकी, गणित, भाषा और ड्राइंग सम्बन्धी उनका सारा ज्ञान इन्हीं अनुभवों से उपजता है। यह ज्ञान स्थिर ज्ञान न होकर, हर पल बदलते और विकसित होते इस्तेमाल के लिए सदा तैयार रहता है।

अब चूँकि हमारा आग्रह ऐसे अद्‌भुत अनुभव रचने का होता है जिनके चलते बच्चों के मन में एक अद्‌भुत, आत्मीय, विश्वसनीय और ईमानदार दुनिया बन सके, इसलिए हम सुनिश्चित करते हैं कि बच्चों को आगंतुकों से मिलने और

उनके साथ संवाद करने के ज्यादा से ज्यादा मौके मिलें। यही नहीं, वे देश के अन्य भागों की यात्रा भी करते हैं और अलग–अलग सांस्कृतिक व जलवायु वाले इलाकों में 15–20 रोज गुजारते हैं। यात्रा के चलते वे नाना प्रकार की चीजें देख पाते हैं, नतीजतन, वे महक उठते हैं और उनकी इन खुशबुओं से हमारे जीवन सराबोर हो उठते हैं।

हमें विश्वास है कि ज्ञानार्जन की ऐसी प्रक्रिया बच्चे को समर्थ बनाएगी और वह महसूस करेगा कि स्कूल जाने से पहले अधिगम के जिन तरीकों ने उन्हें इतना सारा ज्ञान उपलब्ध कराया, वाकई सीखने के उपयुक्त तरीके हैं।

इस शैली के दो मुख्य उद्देश्य हैं – पहले तो, स्कूल में मिलने वाले अनुभवों को विद्यार्थियों के जीवन के हिसाब से सार्थक बनाना। दूसरे, यह विधि बच्चों के अपने ज्ञान को महत्व देती है जिसके चलते वे बिना किसी नकारात्मकता के ज्ञानार्जन की इसी ढब में आगे बढ़ते चलते हैं।

स्कूल के बाहर भी, घरेलू काम में मदद करते समय, अपने यार–दोस्तों के साथ अड्डेबाजी करते और खेलते समय, बच्चों को तरह–तरह के अनुभव होते हैं। इस तरह मिले उनके ज्ञान को आमतौर पर बेकार कहकर नकार दिया जाता है। लेकिन हमारे स्कूल में, बच्चों के इन अनुभवों पर भी चर्चा हो सकती है, उन्हें स्वीकारते हुए उनके बल पर सकारात्मक दृष्टि बनाई जा सकती है। बच्चे अपनी किन्हीं भी चिन्ताओं को कक्षा में उठा सकते हैं और उनकी इन चिन्ताओं, इन सरोकारों को उतनी ही संजीदगी से लिया जाता है जितनी संजीदगी से वे तमाम अवधारणाएँ बरती जाती हैं जिन्हें स्कूल में सीखना जरूरी समझा जाता है।

पर्यावरण को लेकर बच्चों के इस ज्ञान को सम्मानित करते हुए उसे उपयोग में लाकर और खेती को सामाजिक स्तर पर एक सकारात्मक विकल्प के बतौर प्रस्तुत कर हम अपने स्कूल के बच्चों को एक सन्तुलित दृष्टिकोण प्रदान करते हैं।

हम इस बात की आशा तो करते ही हैं कि उपरोक्त सब कामों पर हमारे बच्चों ने इतना ज्यादा अपना समय लगाया है कि वे अपने काम को सिर्फ पैसा कमाने का जरिया बनाने के बाजारू दबाव का प्रतिरोध कर पाएँगे। इतना ही नहीं, आज से शायद कुछेक सालों बाद वे खेती व हमारे स्कूल से मिले मूल्यों के आधार पर एक सादा, गरिमापूर्ण, आर्थिक हिसाब से सन्तुष्ट और सार्थक जीवन बिताने के रास्ते भी खोज निकालेंगे।

*मुम्बई में जन्मीं और पली–बढ़ीं **मीनाक्षी** सर जे.जे. स्कूल ऑफ आर्किटेक्चर से स्थापत्य कला की स्नातक हैं। वे पॉण्डिचेरी के निकट ऑरोविल में कम–लागत, पारिस्थितकी–स्नेही निर्माण–तकनीकों पर काम कर चुकी हैं। अपने साथी उमेश के साथ मिलकर उन्होंने कई सालों तक तमिलनाडु के सूखा–संवेदी जिले धर्मपुरी में खेती, भवन–निर्माण और शिक्षा के क्षेत्रों में वैकल्पिक विधियों पर काम किया है। सन 2000 में उन्होंने रबीद्रनाथ ठाकुर, महात्मा गाँधी और ई.एफ. शुमाखर के सिद्धान्तों पर आधारित एक स्कूल शुरू किया जहाँ मारिया मॉण्टेसरी, डेविड हॉर्सबर्ग, रुडोल्फ स्टाइनर और जैनेट व ग्लेन डुमैन द्वारा दिखाए गए तरीकों का इस्तेमाल होता है। अब वे दोनों पूवीधाम ग्रामीण विकास ट्रस्ट (पूवीधाम रूरल डेवलपमेण्ट ट्रस्ट) चलाते हैं जहाँ जैविक खेती की कारगर तकनीकों पर काम होता है और धर्मपुरी के नागरकूडल इलाके के बच्चों को एक मानवीय और बाल–केन्द्रित शैक्षिक वातावरण उपलब्ध कराया जाता है। अधिक जानकारी के लिए www.puvidham.org पर जाएँ। मीनाक्षी से puvidham@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवादः** मनोहर नोतानी*



03 जिम्मेदार नागरिकता की ओर

l sokxke d s v kuUh fud su esaukxfjd 'kkL= d h f'k{kk

सुषमा शर्मा

कक्षा में प्रवेश करते ही मुझे पाँचवीं कक्षा के बच्चों ने आ घेरा, “दीदी, हम आपसे कुछ जरूरी बात करना चाहते हैं।” उनके चेहरों से उनकी आतुरता साफ झलक रही थी। “कहो, क्या बात है?” मैंने पूछा। इस पर वे बोले, “हम लोग, पी.टी. टीचर के साथ, संघर्ष के आज सुबह के व्यवहार से खुश नहीं हैं। दीदी के साथ उसका व्यवहार बुरा और अपमानजनक था। हमारा मानना है कि उसे तुरन्त दीदी से माफी माँगनी चाहिए।”

सबने अपनी पीड़ा व्यक्त की। मैंने जानने की कोशिश की कि असल में सुबह हुआ क्या था और पाया कि सातवीं कक्षा का छात्र संघर्ष अपनी ही कक्षा के अपने दो अन्य मित्रों के साथ शनिवार की सुबह का साप्ताहिक शारीरिक व्यायाम न तो मन से कर रहा था और न ही समूह में अपना कोई सहयोग दे रहा था। मुझे बताया गया कि शारीरिक शिक्षा की अध्यापक, डिम्पल ने जब उससे कहा कि वह या तो समूह में रहे या अगर वह उसमें भाग नहीं लेना चाहता तो समूह से बाहर चला जाए। लेकिन वे तीनों माने नहीं और समूह में ही बने रहे। जब भी टीचर की नजर उन पर नहीं होती तो वे आपस में ही मस्ती करने लगते (उनके पास शायद व्यायाम से ज्यादा रोचक कोई चीज थी करने को)। कुछ देर तक तो टीचर यह सब सहती रहीं, लेकिन फिर उनकी यह उद्दण्डता खत्म न होते देख गुस्से में आकर उन्होंने संघर्ष को एक चाँटा जड़ दिया। निश्चय ही, स्कूल में ऐसी कोई बात आम न होने के चलते, संघर्ष ने अपमानित महसूस किया और पलटकर बोला कि वे उसे इस तरह मार नहीं सकतीं। वैसे अपमान तो साफ झलक रहा था, पर संघर्ष की वंचित पृष्ठभूमि में उस उद्वेलित शिक्षिका के थप्पड़ की तुलना में उससे उपजी पीड़ा शायद कहीं ज्यादा निचाट दीख रही थी; संघर्ष के पिता की नशे की लत ने उसके परिवार को हिंसा की गर्त में धकेल दिया था। डॉ. अम्बेडकर और गाँधी की शिक्षा के साथ–साथ बाल–अधिकारों से भी परिचित रहने के चलते वह एक ऐसा निडर, बुद्धिमान और संवेदनशील बच्चा बन गया था, जो कभी–कभार जबर्दस्त भावनात्मक उद्विग्नता व्यक्त करने लगता। सो बच्चों की इच्छानुसार, सारे अध्यापकों के साथ कक्षा पाँच, छह और सात की बैठक बुलाई गई और यह मसला विचारार्थ प्रस्तुत हुआ। मुद्दा यह नहीं था कि किसने किसका पक्ष लिया, लेकिन निश्चित ही उनकी सहानुभूति टीचर की तरफ थी, क्योंकि उन सबका सोचना था कि विद्यार्थी अगर किसी गतिविधि का महत्व न समझें और उसमें अपना सहयोग न दें तो विद्यार्थियों की एक बड़ी संख्या को व्यवस्थित रख पाना मुश्किल हो जाएगा। उनके मुताबिक दीदी के थप्पड़ की तुलना में संघर्ष का आचरण कुछ ज्यादा ही अशिष्ट था। बातचीत तीन घण्टे से भी ज्यादा चली और इस दौरान तरह–तरह के सवाल खड़े हुए और उन पर विचार–विमर्श हुआ, जैसे –

1. क्या अध्यापिका का बर्ताव ठीक था? क्या उन्हें यह पता नहीं था कि बच्चे को थप्पड़ मारना, बच्चे को काम की अहमियत समझाने का एक अच्छा तरीका नहीं है? किस बात के चलते उन्हें अपने विद्यार्थी को थप्पड़ लगाना पड़ा? ऐसे में, थप्पड़ का विकल्प भला क्या हो सकता था? इस मुद्दे पर उनकी अपनी राय क्या है?
2. क्या संघर्ष का आचरण सही था? किस चीज ने उसे ऐसा व्यवहार करने के लिए उकसाया? वह ऐसी क्या बात थी जिसके चलते उसका मन इस काम (शारीरिक व्यायाम) में बिलकुल भी नहीं लग रहा था? ऐसे में, संघर्ष के लिए खुद को व्यक्त करने का और कौन–सा बेहतर तरीका हो सकता था? इस मुद्दे पर वह क्या सोचता है?

3. एक गतिविधि के बतौर हमें शारीरिक व्यायाम रखना भी चाहिए कि नहीं? इसके क्या फायदे और नुकसान हैं? क्या हमें अपनी इस या अन्य किसी भी स्कूली गतिविधि को अनिवार्य कर देना चाहिए? कौन–कौन–सी गतिविधियाँ अनिवार्य होनी चाहिए और कौन–सी वैकल्पिक, और क्यों?

4. किसी काम का महत्व समझने के बावजूद यदि किसी दिन, किसी विद्यार्थी का का मन उस काम में नहीं लग रहा है और वह विद्यार्थी उस दिन वह काम नहीं करना चाहे तो? ऐसी परिस्थितियाँ कब हो सकती हैं? ऐसी स्थिति का सामना शिक्षक और वह विद्यार्थी किस तरह से करते हैं?

5. ऐसे में दूसरों के सामने अपनी स्थिति को बिना किसी डर या झिझक के व्यक्त करने के कौन–कौन–से स्वीकार्य तरीके हो सकते हैं?

6. स्वतंत्रता क्या होती है? मनमानी और आजादी के बीच क्या अन्तर होता है? क्या हम इस तरीके से काम करने के लिए स्वतंत्र हैं जिससे दूसरों को असुविधा होती हो?

7. जब–तब हम नकारात्मक व्यवहार क्यों करते हैं? क्या इससे कुछ भला होता है? तो फिर व्यवहार के बेहतर तरीके क्या हैं? सवाल–जवाब के दौरान, जान–बूझकर लिया गया एक अल्प विराम भी भला कैसे तमीज से पेश में आने में हमारी मदद करता है?

8. किसी व्यक्ति के लिए क्या अनुशासन जरूरी है? यदि हाँ तो किस तरह का अनुशासन बेहतर होगा – अन्दर से प्रेरित या बाहर से थोपा जाने वाला? अनुशासन की प्रक्रिया क्या बच्चों के लिए अलग होती है और शिक्षकों या बड़ों के लिए अलग?

9. ऐसी अप्रिय घटना होने पर वहाँ उपस्थित अन्य लोगों की भूमिका भला क्या हो सकती है?

10. एक स्कूल के बतौर, भविष्य में हम क्या कर सकते हैं?

इस सारी बातचीत के बात यह समझ बनी कि हरेक को एक प्रकार की परस्पर–सहमति बनाते हुए आगे बढ़ना चाहिए। संघर्ष अपने किए को लेकर बहुत दुखी था। उसने बताया कि चीजें उसके या उसकी इच्छा के अनुसार न होने पर कई बार वह अपना आपा खो बैठता है। उधर दीदी को भी अपने अधैर्य को लेकर पछतावा था और उन्होंने महसूस किया कि वे स्थिति को बेहतर तरीके से सम्हाल सकती थीं। अन्य सारे बच्चे इस सारी बातचीत को लेकर सन्तुष्ट थे और अध्यापक समूह भी संघर्ष के आचरण को लेकर अपनी आशंकाओं से मुक्ति पा सका। बातचीत में यह भी तय हुआ कि (उन सामान्य कारणों के अलावा जिनके चलते बच्चों को वैसे भी आराम करने की अनुमति दी जाती है) कोई बच्चा अगर अच्छी तरह से सोच लेने के बाद किसी गतिविधि विशेष में भाग लेना नहीं चाहता तो उसे तब तक ऐसा करने की अनुमति दी जानी चाहिए जब तक कि उस गतिविधि में उसके भाग लेने की जरूरत फिर से न महसूस हो। लेकिन, ऐसा होने पर, उस बच्चे को अपनी पसन्द की अन्य कोई गतिविधि चुननी चाहिए और उसे दूसरे लोगों को किसी प्रकार की कोई भी असुविधा नहीं पहुँचानी चाहिए। कुछ समय बीत जाने के बाद, वह बच्चा अपने पुराने निर्णय पर फिर से विचार कर सकता है। तिस पर भी, सब लोग इस बात पर तो सर्व–सम्मत थे कि (केवल स्वास्थ्य सम्बन्धी कारणों या अन्य किसी सामूहिक रूप से स्वीकार्य कारण को छोड़) साफ–सफाई के कामकाज से किसी को भी कोई छूट नहीं दी जानी चाहिए, कारण कि व्यक्तिगत विकास के लिहाज से इसे बहुत महत्वपूर्ण माना गया।

उपरोक्त समूचा प्रसंग, स्कूली कार्य को लोकतांत्रिक बनाने की हमारी तमाम कोशिशों का एक हिस्सा है। दरअसल, स्कूल एक छोटा समाज है जहाँ सबको कुछेक निश्चित नियमों का पालन करना होता है। अधिकांश स्कूल नियम बनाते हैं और वहाँ बच्चों से उन नियमों का पालन करवाया जाता है। किसी नियम का उल्लंघन होने पर बच्चों को सुने बिना ही दण्डित कर दिया जाता है, जबकि प्रसंग विशेष में नियम न पालन करने सम्बन्धी बच्चों का कारण उचित भी

हो सकता था। विशिष्ट नियमों के निहित कारणों पर भी कोई बातचीत नहीं की जाती। नागरिकशास्त्र एक महत्वपूर्ण विषय है जिसके जरिए हम बच्चों को इस तरह शिक्षित करते हैं कि आगे चलकर वे एक लोकतांत्रिक समाज के जिम्मेदार नागरिक बन सकें। इस प्रकार, जो लोग भी हमारे यहाँ शिक्षा से जुड़े हैं उनके लिए यह महत्वपूर्ण हो जाता है कि वे हमारे बच्चों के लिए ऐसी स्थितियाँ पैदा करें जिनके चलते वे अपनी इन नागरिक भूमिकाओं के हिसाब से तैयार हों। बच्चों के लिए 'सामाजिक गणतंत्र' जैसी अवधारणाओं का अभिप्राय समझना बड़ा जरूरी है। उन्हें अपने सामाजिक सन्दर्भों में निम्नलिखित संवैधानिक मूल्यों को समझना और उन्हें विश्लेषित करते भी आना चाहिए और इनकी जरूरत भी महसूस होनी चाहिए –

1. न्याय – सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक
2. स्वतंत्रता – विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास और धर्म की
3. समानता, समता – सामाजिक स्तर और अवसर की

बच्चों के लिए 'एकता' और 'अखण्डता' के अर्थ समझना भी जरूरी है। फिर, 'राष्ट्र' व 'देश' के बीच के फर्क को समझना भी उनके लिए जरूरी है; ताकि वे उन सामाजिक–राजनैतिक प्रक्रियाओं को समझ सकें जो लोगों के बीच एकता की भावना का पोषण करती हैं और जो घृणा की कीमत पर केवल भौगोलिक सीमाओं को ही महत्व देती हैं। हमारे बच्चों के लिए अपनी सम्पन्न सांस्कृतिक विविधता की परम्पराओं की विश्लेषणात्मक समझ जितनी जरूरी है, उतना ही जरूरी है उसी क्षण, उनमें निहित सांस्कृतिक भेदभाव को समझना भी, ताकि अपने अन्दर वे उन अच्छी प्रवृत्तियों का पोषण कर सकें, जिनके आधार पर दैनिक जीवन के फैसले करने में उन्हें आसानी हो। हमारे लिए यह भी एक महत्वपूर्ण चुनौती है कि हम अपने बच्चों को इस बात का अवसर दें कि वे हमारे सामाजिक वातावरण, हमारी आस्थाओं और हमारे व्यवहारों को प्रभावित करने वाली नई उभरती सामाजिक–सांस्कृतिक और आर्थिक प्रक्रियाओं को समझ–बूझ सकें।

हम वयस्क/शिक्षक जितना सोचते हैं, चीजों को विश्लेषित करने की योग्यता बच्चों में उससे कहीं अधिक होती है। उनकी क्षमताओं को कम आँकने की सबसे बड़ी वजह तो हमारी अपनी ही तैयारी की कमी होती है। इसके लिए हमें यह समझना होगा कि बच्चे खुद अपनी अवधारणाएँ बनाते हैं और इसीलिए हमें शिक्षण की अपनी बैंकिंग पद्धति छोड़कर कोई ऐसी विधि अपनानी होगी जिसमें उन्हें खुद करके देखने, अन्वेषण और सोचने का तथा अपने आसपास की दुनिया को गुनने–समझने का अवसर मिले। आसपास की प्राकृतिक और सामाजिक दुनिया और उनमें हो रही घटनाएँ एक बच्चे के लिए सीखने के अनन्त अवसर उपलब्ध कराती हैं। जरूरत है इस बात की कि हम शिक्षकगण सूचना–आधारित मानक पाठ्य–पुस्तकों पर अपनी अति–निर्भरता त्यागें। वैसे भी ये मानकीकृत पाठ्य–पुस्तकें मोटे तौर पर एक खास वर्ग व संस्कृति के हितों की परवाह ही करती आई हैं। स्कूल की खुली हवा में बच्चे खुद ही ऐसी अनेक चीजों का संज्ञान लेते हैं जो आगे की जाँच–पड़ताल और मार्ग–प्रदर्शन के प्रवेश–बिन्दु बन सकती हैं और इसके चलते ज्ञानार्जन की प्रक्रिया ज्यादा भागीदारीपूर्ण बन जाती है। स्थानीय से राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के समाचारों, सम्बद्ध आँकड़ों के संचयन, विभिन्न मसलों पर अनेक प्रकार के दृष्टिकोणों को सुनने व उनका इस्तेमाल करने, विचार–विमर्श आदि से बच्चों को अपने विचार और मत बनाने में मदद मिलती है। इस सबको सम्भव बनाने के लिए खुद अध्यापक का एक जिज्ञासु अध्येता होना निहायत जरूरी है। इसके लिए संवाद व अनुसन्धान की संस्कृति को विकसित और परिष्कृत करना होगा। यह तभी सम्भव है जब शिक्षक के मन में बच्चे के प्रति एक गहरा सम्मान व प्रेमभाव हो। इसी तरह की तैयारी के बूते ही, लोकतांत्रिक तरीके से बच्चों के साथ सहज भाव से रहा जा सकता है।

इसी तारतम्य में मुझे याद है आ रहा है कि कोई एक साल पहले चौथी कक्षा के विद्यार्थी मेरे पास आए। वे भ्रष्टाचार के खिलाफ एक स्कूल रैली का आयोजन करना चाहते थे। अन्ना हजारे के देशव्यापी आन्दोलन के चलते उनकी यह इच्छा उपजी थी। बच्चों की इस पहलकदमी को भ्रष्टाचार

की गम्भीरता को समझने के एक अवसर के बतौर लिया गया। स्कूल मीटिंग में जब इस प्रस्ताव को रखा गया तो चौथी कक्षा से लेकर सातवीं कक्षा तक के सारे बच्चों ने इसके प्रति अपनी सकारात्मक प्रतिक्रिया जताई। एक छोटी रैली तो हमने निकाली, लेकिन एक कठोर कवायद के बाद। वाद–विवाद के बाद, "अन्ना आप आगे बढ़ो, हम आपके साथ हैं," जैसे पके–पकाए नारों की शुरुआती सूची के बदले "मेहनत से खाएँगे, भ्रष्टाचार से लड़ेंगे" जैसे स्वनिर्मित और स्वचालित नारे उपयोग में लाए गए। गणतंत्र का ढाँचा और उसकी कार्यशैली को समझना भी इस प्रक्रिया का एक अंग बने। सड़कों पर गाए जाने वाले गीतों का चयन, बैनर बनाने, पुलिस की अनुमति लेने जैसे कामों में बच्चों को बड़ा मजा आया। इस प्रसंग के चलते बच्चों को इस बात का एहसास हुआ कि एक ओर जहाँ नागरिकों को सरकार के कामकाज को लेकर सचेत रहना चाहिए, वहीं दूसरी ओर उन्हें स्वानुशासित रहने की भी जरूरत होती है। यह सुनिश्चित किया जाना भी जरूरी है कि केवल जानकारी इकट्ठा करना और उसे समझना ही काफी नहीं है। उनकी क्षमता का आकलन करने के बाद ही बच्चों को कोई काम करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए वर्ना सारी कवायद महज एक कोरी कामना बनकर रह जाती है जिसमें हर कोई इसी प्रतीक्षा में रहा आता है कि कोई तो होगा जो आकर काम शुरू करेगा।



रैली : भ्रष्टाचार के विरोध में

भारत में शारीरिक श्रम को हेय दृष्टि से देखा जाता रहा है। चिन्तन–शक्ति को जरूरत से ज्यादा महत्व देने के साथ–साथ सफेदपोश नौकरी की आकांक्षा सदियों से एक भारतीय विशिष्टता रही आई है। नतीजतन, एक प्रकार के सामाजिक असन्तुलन की स्थिति बन गई है जिसमें अमीरों और गरीबों के बीच एक बड़ी खाई है। इसके चलते हम, किसानों, शिल्पियों और सेवाकर्मियों से बने समाज के एक बड़े तबके की सृजनात्मक ऊर्जाओं और उनके योगदान का अवमूल्यन करने लगे हैं। पारम्परिक ज्ञान के प्रति इस उपेक्षाभाव के चलते हमारा नुकसान भी बहुत हुआ है, कारण कि हमारी स्कूली शिक्षा किताबी, घिसी–पिटी, शुष्क व कल्पनाहीन है जिसके नतीजतन बड़े पैमाने पर हम भारतीय कौशलहीन हो चले हैं। सफेदपोश नौकरियाँ करने वाले लोगों का रवैया लापरवाह और दम्भपूर्ण हो चला है। इन प्रवृत्तियों से निपटने के लिए आनन्द निकेतन के पास 3Hs का फॉर्मूला है – हैण्ड (हाथ), हेड (दिमाग) और हार्ट (दिल), जैसा कि व्यक्ति के समग्र विकास के लिहाज से गाँधीजी का सिद्धान्त था। प्रचलित मुख्यधारा स्कूलों में पढ़ाए जाने वाले सामान्य विषयों के साथ–साथ, बागवानी, पाककला, वस्त्रकला (कताई, कढ़ाई, सिलाई, ब्लॉक प्रिन्टिंग आदि), कला व संगीत, मिट्टी कार्य, साफ–सफाई, साधारण मशीनों की मरम्मत और उनके रख–रखाव जैसी बुनियादी अनुभवजन्य शिक्षा न सिर्फ बच्चों के व्यावहारिक कौशल और उनकी बुद्धिमत्ता का विकास करने में सहायक होती है, बल्कि उन्हें अपने आसपास की दुनिया और उसकी जटिलताओं को समझने के अवसर भी प्रदान करती है। निश्चित ही इन शैक्षणिक विशिष्टताओं ने 'स्वराज' का अर्थ कुछ हद तक तो समझने में अध्यापकों व विद्यार्थियों की मदद की है।



मिट्टी के क्षरण का अध्ययन



सब्जियों की क्यारियों की देखभाल



करो और सीखो



सुषमा, *सेवाग्राम, महाराष्ट्र स्थित आनन्द निकेतन विद्यालय की प्राचार्य हैं। यह स्कूल गाँधीवादी दर्शन से प्रेरित है। तीन से तेरह वर्ष तक के बच्चों की शिक्षा के लिए आनन्द स्कूल की शुरुआत 2005 में हुई थी। गाँधी आश्रम के परिसर में स्थित आनन्द निकेतन एक मोहल्ला स्कूल है जहाँ आज 170 बच्चे पढ़ते हैं। मानवशास्त्र में एम.एससी और प्रारम्भिक शिक्षा में एम.ए. की शैक्षिक पृष्ठभूमि के साथ सुषमा जी पिछले 25 सालों से शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत हैं। उनसे* sushama.anwda@gmail.com *पर सम्पर्क किया जा सकता है।* ***अनुवाद*** *: मनोहर नोतानी*



04 सशक्तिकरण के लिए नई सोच

सुधा महेश

"हम यदि आज के बच्चों को भी वैसे ही पढ़ाते हैं जैसे कल के बच्चों को पढ़ाते थे, तो फिर हम उन्हें आने वाले कल से वंचित कराते हैं।"

– जॉन ड्युई

बच्चों की माँगें हजार और वे भी लगातार बदलती रहती हैं – सामान्य से विशिष्ट और साझी से निजी होती हुई। असीम जिज्ञासा, जबर्दस्त कल्पनाशीलता, ऐन पड़ोस को सिरे से छान मारने में गहरी रुचि, सोख्ते सरीखी ग्रहणशीलता, पसन्दीदा विषय में टिकाऊ एकाग्रता, धाराप्रवाह सवाल, शारीरिक ऊर्जा और बच्चों के अनेक ऐसे गुण मुझे हमेशा हैरत में डालते हैं। तब मैं सोचने लगती हूँ कि इतनी नन्ही जानों में कैसे क्या इतनी सारी जीवन्तता समाती है।

मैं देखती हूँ कि विद्यार्थी जब अपनी रुचियों में रमते हैं तब उनकी एक स्वतंत्र अस्मिता या उनका एक 'आत्मबोध' अस्तित्व में आता है। और यह बात सारे बच्चों पर लागू होती है – छोटे हों या बड़े, या फिर वे किसी भी पृष्ठभूमि से क्यों न आए हों। यदि उन्हें बौद्धिक क्षमता और अद्वितीय सामर्थ्य के विकास के अनुकूल वातावरण और अनेकानेक अवसर प्रदान किए जाएँ, तो निश्चित ही उनमें जीवन–कौशल विकसित होंगे, क्योंकि वे जो कुछ भी करते या सीखते हैं उसका उनके भविष्य पर प्रभाव पड़ता है।

यह मेरे इस विश्वास को और भी बल प्रदान करता है कि विद्यार्थियों को एक अध्यापक की नहीं, मददगार मित्र की जरूरत होती है जो सीखने की प्रक्रिया में उनका मार्गदर्शक बन सके। अपनी पहली नौकरी शुरू करते समय मुझे इस बात का जरा भी अहसास न था कि मुझे अनिवार्य रूप से गणित पढ़ाने को कहा जाएगा। मुझे तो धुकधुकी होने लगी। मुझे याद आया कि मैं तो कभी गणित की अच्छी विद्यार्थी नहीं रही। नई अवधारणाएँ जानने और दैनिक जीवन के हिसाब से उनकी प्रासंगिकता समझने में मुझे कुछ वक्त लगा। थोड़ा रुककर सोचने पर मुझे यह समझ आया कि आमतौर पर अध्यापन पारम्परिक 'चॉक ऍण्ड टॉक' विधि का इस्तेमाल करने वाली अध्यापक–केन्द्रित प्रक्रिया रही आई है जिसमें बच्चों को बस अच्छे नम्बर पाने लायक ज्ञान जुटाने सम्बन्धी हिदायतें दी जाती हैं। लेकिन यह विधि यह बात न समझ सकी कि सीखने का माध्यम दृश्य, श्रव्य और गतिबोधक भी हो सकता है। सो 'चॉक ऍण्ड टॉक' का तरीका तो मेरे काम न आया। सोचा तो पाया कि मुझे अपने पढ़ाने के ढंग में कौशल–निर्माण को शामिल करना पड़ेगा ताकि बच्चों को सीखने में मजा आए। बस फिर क्या था, मैंने ऐसी कई रचनात्मक तकनीकें अपने पढ़ाने के ढंग में शामिल कीं, जिनका सारा फोकस बच्चों में समस्या–समाधान और विवेचनात्मक चिन्तन के कौशल विकसित करने पर था।

मुझे यह भी समझ में आया कि इसके लिए विद्यार्थी की मानसिक तैयारी बड़ी जरूरी है, और यह तैयारी उनकी समय–आधारित उम्र पर निर्भर नहीं करती, बल्कि उनकी ग्रहणशीलता बढ़ाने के लिहाज से उन्हें मिलने वाले प्रत्यक्ष ज्ञान पर निर्भर करती है। सारे अध्यापकों के लिए इस अन्तर को समझना बड़ा जरूरी है। कोई भी, कुछ भी सीख सकता है। सीखने की कोई उम्र नहीं होती।

ज्योंही मैंने यह जाना, त्योंही गणित में मुझे मजा आने लगा। मजा भी इतना कि मैं कैम्ब्रिज के लिए किताबें तक लिखने लगी।

क्षमताओं के अलावा, बच्चों के लिए यह जानना भी जरूरी है कि जिस समाज में वे रहते हैं उसमें होने वाली चीजें होती क्या, क्यों और कैसे हैं और इसी समाज को उन्हें लौटाना भी तो है आखिर। समाज कोई ऐसा अखाड़ा तो है नहीं कि जहाँ लोग आएँ, अपनी क्षमताओं, प्रतिभाओं का प्रदर्शन करें ताकि हम जानें कि कौन बेहतर है। दरअसल, समाज तो विविध प्रकार की रुचियों, विचारों, मतों, सीमाओं और निराशाओं का नित–बदलता एक शक्ति–सन्तुलन है। हमारी शिक्षा समाज के इस सन्तुलन को पहचानने में हमारे विद्यार्थियों की मददगार होनी चाहिए, न कि महज उनकी शैक्षणिक योग्यताएँ बढ़ाने की कोई विधि। किसी व्यक्ति को तब तक सफल नहीं माना जाता जब तक वह एक साक्षर व्यक्ति के बतौर सबसे अलग–थलग खड़ा रहता है, उसे सफल तभी माना जाता है जब वह संवेदनशील होकर मार्गदर्शन करने वाले किसी समूह के साथ नहीं जुड़ जाता, फिर चाहे उस समूह में शामिल व्यक्तियों की निपुणताएँ, कमजोरियाँ और योग्यताएँ कुछ भी क्यों न हों। सार्वभौमिक सत्य यही है कि हम यदि अपने बच्चों को उनके अपने दोस्तों के साथ घुलमिल जाने और उनको स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं करेंगे तो आगे चलकर उन्हें बड़ी मुश्किलों का सामना करना पड़ सकता है।

जीवन–कौशलों पर आधारित शिक्षा की जरूरत को लेकर बढ़ी हुई जागरूकता के चलते आज हम एक दुविधा में हैं। यह बड़ा जरूरी है कि हमारे विद्यार्थी आने वाले कल के जीवन और समाज की माँगों और चुनौतियों का सामना कारगर ढंग से करने के योग्य बन सकें।

मेरे निजी अनुभवों और विद्यार्थियों को काबिल बनाने सम्बन्धी मेरी प्रबल धारणाओं के चलते मैं हमारे स्कूल की पाठ्यचर्या में अध्यापन के रचनात्मक तरीकों का भरपूर इस्तेमाल करते हुए कौशल–आधारित अध्यापन/अध्ययन कार्यक्रम चला सकी। इसे आसान बनाने के लिए ज्ञान को निम्न स्तर के कौशल व उच्च स्तर के कौशल में बाँटते हुए हम सीखने के उद्देश्यों का वर्गीकरण करते हैं। सो ज्ञान, समझ और प्रयोग को ग्रहण करने को हम निम्न स्तर के कौशल मानते हैं जबकि विश्लेषण, संश्लेषण और मूल्यांकन कर सकने की योग्यता को हम उच्च स्तर के कौशलों की तरह बरतते हैं। एक ओर जहाँ निम्न स्तर के कौशल होना अपरिहार्य है, वहीं हर बच्चे को सक्षम बनाने की दृष्टि से उसे उच्च स्तर के कौशलों से लैस करना भी जरूरी है।

कोई पूछ सकता है कि रचनात्मक अध्यापन भला क्या होता है। मेरे हिसाब से तो कोई भी अध्यापन जो वक्ता के विचारों को बिना किसी कठिनाई के स्पष्ट रूप से श्रोता तक पहुँचा सकता है और उसे ज्ञात और अज्ञात परिस्थितियों में अपने अर्जित ज्ञान को व्यवहार में लाने के काबिल बना सकता है वह अध्यापन, रचनात्मक अध्यापन है। ऐसी शिक्षा न केवल उस विद्यार्थी का स्तर ऊपर उठाएगी बल्कि उसके द्वारा अपने समाज व अपने देश को आगे ले जाने में भी मददगार सिद्ध होगी। महत्वपूर्ण बात यह है कि यह जागरूकता दूर–दूर तक फैले।

रचनात्मक तरीके से पढ़ाने का कोई नियत खाका नहीं है। हमारे चारों ओर जहाँ चुनौतियाँ ही चुनौतियाँ हैं, वहीं उतनी तरकीबें भी हैं। पिटी–पिटायी लीक छोड़कर सोचने से ही तरकीबें सूझती हैं; तरकीबों से रचनात्मकता बढ़ती है; रचनात्मकता से ज्ञान के विभिन्न पहलू जुड़ते हैं; ज्ञान से हम शक्तिशाली बनते हैं।

सीखने व सिखाने को मजेदार और कारगर बनाने के लिए हमारे स्कूल में की गईं कुछ गतिविधियाँ इस प्रकार हैं –

"माया सभ्यता में कैसा था बचपन"

माया सभ्यता का अध्याय पढ़ते समय, पाँचवीं कक्षा के बच्चों को छोटे–छोटे समूहों में बाँटकर उस समय के बचपन के विभिन्न पहलुओं से जुड़े साधारण चित्रों को दर्शाने वाले कार्ड उन्हें दिए गए। कक्षा का हर बच्चा बारी–बारी से माया सभ्यता में पलने वाला 'किम' नामक एक बच्चा बनकर उन कार्डों के क्रम को सही–सही याद

रख पाने की अन्य बच्चों की क्षमता परखता। इस मनोरंजक खेल के चलते सारे बच्चे उन चित्रों से अच्छे से परिचित हो गए। इसके बाद तो वे एक चित्र और उसके ऐतिहासिक वृत्तान्त के बीच का सम्बन्ध तुरन्त समझ लेते थे। तथ्यात्मक जानकारी 'फ्लैप उठाओ' जैसे एक पैटर्न में लिखी रहती थी और एक दृश्य–संकेत के आधार पर बच्चों से उन तथ्यों को याद करके कक्षा में बोलने के लिए कहा जाता। इस तरह यह सारी जानकारी आत्मसात कर लेने के बाद उन्हें यह बात समझ आई कि 2000 साल पहले माया सभ्यता में पल रहे एक बच्चे का जीवन कैसा होता होगा।

अस्सी मिनट में दुनिया की सैर

ताजमहल के ऑडियो गाइड भ्रमण पर अँग्रेजी में बने एक पाठ के विस्तार के बतौर सातवीं कक्षा के विद्यार्थियों ने



अपने सात समूह बनाकर एक सुनियोजित ऑडियो गाइड भ्रमण की मदद से सारी दुनिया की एक भव्य सांस्कृतिक झाँकी प्रस्तुत की। इस झाँकी के निर्माण के पहले चरण में उन्होंने संग्रहालय निदेशकों के व्याख्यान सुने और इन ब्योरों में कैद उनके औपचारिक लहजे एवं तथ्यात्मक वर्णनों को ध्यान में रखते हुए प्रत्येक महाद्वीप की कुछेक महत्वपूर्ण संस्कृतियों के अंशों के आलेख लिखे। इसके बाद, अपने द्वारा तैयार इन सब आलेखों की रिकॉर्डिंग कर उन्होंने, विद्यार्थियों और अध्यापकों के समक्ष इसकी एक प्रस्तुति रखी जिसमें कुछ चार्ट, नक्शे और शिल्प भी शामिल किए गए थे। कक्षा को सात ठिकानों (लोकेशन) वाले एक म्यूजियम की शक्ल दी गई थी। इस ऑडियो गाइड श्रंखला की फौरी शुरुआत के लिए एक जानकारी केन्द्र भी बनाया गया था। इन प्रस्तुतियों को अपने–अपने हेडफोन पर सुन सकने के पहले पर्यटकों को अपने पारपत्रों पर मुहर लगवाने की औपचारिकता भी पूरी करनी पड़ी। उनकी महत्वपूर्ण टिप्पणियों को संकलित कर बाद में उन पर एक चर्चा भी आयोजित की गई। यह रोचक और सुनियोजित उद्यम, उनका अपना मौलिक सृजन था। इस दौरान उन्होंने अपने शोधपरक, आख्यानपरक और संगठनात्मक कौशल माँज लिए थे। उन्होंने तो समझो बाजी ही मार ली थी।

सेल जेली (कोशिका जिलेटिन)

छठी कक्षा के विद्यार्थियों के लिए पशु कोशिकाओं पर विज्ञान का एक पाठ। विद्यार्थी, इस अवधारणा को बेहतर ढंग



से समझें इसके लिए उनसे पशु कोशिका का एक भोजनीय मॉडल बनाने और खाने के लिए कहा गया। कोशिका का कोशिकाद्रव्य (साइटोप्लाज़्म) दिखाने के लिए उन्होंने पाइनेपल जेली का उपयोग किया, अलग–अलग रंग की

टॉफियों से उन्होंने एण्डोप्लैज़्मिक रिटिक्यूलम (अन्तर्द्रव्यी जालिका), माइटोकोण्ड्रिया (सूत्रकणिका) व गोल्गी उपकरण, बटन के आकार की खट्टी–मीठी गोलियों से राइबोसोम और करीने से कटी नाशपाती से उन्होंने कोशिका–केन्द्रक के बनाया। जाने–पहचाने खाद्य पदार्थों के इस्तेमाल के द्वारा हाथ से की जाने वाली इस गतिविधि के चलते उन्हें विभिन्न कोशिकांगों के नाम आसानी से याद हो गए। यही नहीं, हरेक कोशिकांग की आपेक्षिक साइज और उससे सम्बन्धों का भी उन्हें अच्छा–खासा अनुमान हो चला। सबसे बड़ी बात तो आखिर में अपने इस 'बनाए' को खाने में उन्हें बड़ा आनन्द आया।

शब्दपट्टी

सम्मिश्र शब्दों की जोड़ियों के बारे में छठी कक्षा के बच्चे के ज्ञान को परखने का एक प्रयोगधर्मी खेल।



शब्दों की चुनी हुई जोड़ियाँ विद्यार्थियों द्वारा माथे पर पहनी पट्टियों पर छपी थीं। किसी विद्यार्थी की पट्टी पर लिखे शब्द बाकी सब विद्यार्थियों को तो दिखते थे लेकिन उस विद्यार्थी को नहीं, जिसने उसे अपने माथे पर पहन रखा था। लक्ष्य यह था कि किसी बच्चे द्वारा अपने माथे पर पहने शब्द का पूर्वानुमान लगाने में उसकी मदद की जाए और इसके लिए बाकी बच्चे उसे यथासम्भव संकेत देते जाएँ। जिन–जिन तरीकों से ये संकेत दिए जा रहे थे, उसे देखना एक अद्‌भुत अनुभव था। अब चूँकि सारे बच्चे अपने साथियों की मदद करने के लिए एड़ी चोटी का दम लगा रहे थे, यह सारा खेल एक टीम निर्माण सत्र में तब्दील हो चला। अगले दिन कक्षा में मिले क्रॉम्प्रिहेन्शन पैसेज में ये सारे शब्द पाकर उन्हें एक सुखद आश्चर्य हुआ। यही नहीं उद्धरण पर स्वतंत्र रूप से काम करने का उनमें आत्मविश्वास भी जागा।

स्कूल की इन्ट्रानेट वेबसाइट पर उनकी टीचर, यानी कि मेरे, द्वारा चढ़ाए गए एक वीडियो के जरिए पाँचवीं कक्षा के बच्चों का परिचय 'भिन्नांकों' से करवाया गया। अपने घर पर ही उस वीडियो को देख सकने के चलते हरेक बच्चे को उस वीडियो को कई बार देखने का मौका मिला जिसके चलते भिन्नांक की अवधारणा को वे अच्छे से समझ पाए। उन्होंने अपनी टिप्पणियों और इस पर बनी अपनी समझ की मुझसे व अपने सहपाठियों से ऑनलाइन साझेदारी की। यह तरीका, पाँचवीं कक्षा से लेकर आगे की सारी कक्षाओं के लिए स्कूल द्वारा अपनाई गई 'हवाई कक्षा (फ्लिप्ड क्लासरूम)' पद्धति का एक हिस्सा है, जिसमें, किसी विषय को कक्षा में पढ़ाने से पहले ही शिक्षक, ऑनलाइन ऑडियो/वीडियो/प्रस्तुति के द्वारा अपने विद्यार्थियों का परिचय उसकी अवधारणा से करा देते हैं। नतीजतन, सम्बन्धित विषय पर बातचीत की रूपरेखा पहले ही से स्थापित हो जाती है और प्रारम्भिक से उन्नत का सफर बहुत थोड़े समय में ही तय कर लिया जाता है। परीक्षा के समय इन वीडियो का इस्तेमाल वे रिवीजन के लिए भी करते हैं। इनमें से एक वीडियो यहाँ देखा जा सकता है –

http://www.youtube.com/watch?v=Xa2MFPT3bOo&list=uUUfVik3oDDMYFoYKD2X7rv7Q&index=1



सुधा महेश *'हेडस्टार्ट स्कूल', चेन्नै की संस्थापक हैं। सत्रह साल पहले शुरू हुआ यह स्कूल, अब यूनिवर्सिटी ऑफ कैम्ब्रिज से सम्बद्ध एच.एल.सी. इण्टरनैश्नल के नाम से जाना जाता है और इसकी गिनती चेन्नै के सर्वश्रेष्ठ स्कूलों में होती है। सुधा पिछले 36 सालों से अध्यापन पेशे में हैं, और इस दौरान वे विद्यामन्दिर, चेन्नै, वैली स्कूल व माल्या अदिति इण्टरनैश्नल स्कूल, बंगलौर से जुड़ी रही हैं। अध्यापकों के लिए वे अध्यापन के रचनात्मक तरीकों, ई.सी.ई. और गणित पर नियमित रूप से कार्यशालाएँ आयोजित करती रहती हैं। कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, यू.के. के लिए उन्होंने गणित की पुस्तकें लिखी हैं। बाल साहित्य के क्षेत्र में भी वे स्कॉलॉस्टिक, तूलिका पब्लिकेशन्स व करडी टेल्स के साथ तथा एक विशेषज्ञ व्यक्ति के बतौर विप्रो के कार्यक्रम 'अप्लाइंग थॉट्स इन एज्यूकेशन' और 'टी.एन. फोर्सेस' के अलावा वे ऑर्गेनाइज़ेशन ऑफ मुस्लिम एज्यूकेश्नल इंस्टिट्यूट्स एसोसिएशन ऑफ तमिलनाडु के साथ जुड़ी रही हैं। उनसे sudha@headstartschool.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।* ***अनुवाद*** *: मनोहर नोतानी*



05 सीखना-सिखाने पर मॉण्टेसरी पद्धति का प्रभाव

उमा शंकर

मॉण्टेसरी पद्धति एक सौ पाँच साल पुरानी पद्धति है सो इसके सन्दर्भ में पढ़ने–पढ़ाने के तरीकों को 'अभिनव' कहना अपने आप में एक विरोधाभास लगता है!

लेकिन यह सच है कि अन्यान्य कारणों से इसके सिद्धान्त व इसके तौर–तरीके अभी इतने व्यापक नहीं हुए कि कक्षा में पढ़ने–पढ़ाने की यह एक स्वीकृत पद्धति बन पाई हो। इसके बावजूद कक्षा में अगर इसे सही ढंग से लागू किया जाए तो आज भी यह पद्धति सिखाने के रचनात्मक तरीके और सीखने–समझने के उत्तम परिणाम दे सकती है।

दरअसल, मॉण्टेसरी ने शिक्षा को जीवन–सहयोग के बतौर परिभाषित किया था। अब यदि यही हमारा ध्येय है और हमारा सपना भी यही है कि हम ऐसी श्रेष्ठ संस्थाएँ बनाएँ जहाँ हमारे बच्चे अपनी विशिष्ट जरूरतों के अनुकूल वातावरण व अनुभव पाएँ और उनके स्वाभाविक विकास के उस चरण के अनुरूप तरीके उन्हें मुहैया हों, तो फिर तो मॉण्टेसरी के सिद्धान्त हमें आदर्श समाधान देंगे क्योंकि बरसों तक बच्चे का अवलोकन करने के बाद जाकर उनके तरीके की नींव डली थी।

3–6 साल तक के बच्चों के लिए कक्षा का स्वरूप, 6–12 साल के आयु–वर्ग वाले बच्चों से अलग होता है, क्योंकि उनकी व्यक्तिगत जरूरतें व स्वभाव एक–दूसरे से उतने ही अलग होते हैं जितने कि वे एक तितली के जीवन–चक्र के अलग–अलग चरणों में होते हैं। एक तरफ जहाँ हम यह मानते हैं कि एक नवजात शिशु की पोषण सम्बन्धी आवश्यकताएँ, चलना सीख रहे उस डेढ़ साल के एक बच्चे से जुदा होती हैं, जिसकी पोषण सम्बन्धी आवश्यकताएँ स्कूल जाने वाले एक बच्चे के मुकाबले अलग होती हैं, वहीं दूसरी ओर हमारे अधिकांश स्कूलों का ढाँचा इस सोच के तहत बनाया गया लगता है मानो 3 या 4 साल से लेकर 16 साल तक के सारे बच्चों के लिए एक ही प्रकार की कक्षा–व्यवस्था और पढ़ाने के एक ही प्रकार के तरीके से काम चल जाएगा।

लेकिन समय–समय पर, निजी और सार्वजनिक, दोनों ही क्षेत्रों के कई स्कूलों ने बच्चों को पढ़ाने–लिखाने के वैकल्पिक तरीके बनाए हैं।

कक्षा

कक्षा का स्वरूप, शिक्षक द्वारा ढाई से छह साल तक के बच्चों की जरूरतों को ध्यान में रखकर बनाया जाता है। कक्षा में इतनी जगह होती है कि बच्चे बड़े आराम से फर्श पर अपनी बैठक जमा सकें। इसके बाद तो हर बच्चे का बिछौना उसका अपना संसार होता है, अपना इलाका होता है। कुछ बच्चे चौकियों पर काम करना भी पसन्द कर सकते हैं। बच्चों का सारा सामान दीवार के सहारे रखी हुई तीन खानों वाली कम ऊँची अलमारियों में रखा रहता है। नतीजतन, कोई भी बच्चा अपने हिसाब से इन आलों में रखी हुई सामग्री देख सकता है, चुन सकता है और उससे खेल सकता है। इसके अलावा, दीवार पर कम ऊँचाई पर ही कुछ चित्र भी टँगे होते हैं जिन्हें बच्चे जब चाहें तब और जितनी देर चाहें उतनी देर तक देख सकते हैं। ये चित्र, चिर–परिचित कार्टून न होकर हाथ से बने चित्र होते हैं जिनमें बच्चों की रुचि के विषयों से जुड़ी जानकारियाँ दी जाती हैं। वह शिक्षक द्वारा सुन्दर हस्तलिपि में लिखी गई अँग्रेजी व क्षेत्रीय भाषा की वर्णमाला भी हो सकती है। क्लासरूम बड़ा न होने की सूरत में बच्चे अपनी चटाइयाँ और सामग्री लेकर अपनी कक्षा से लगे बरामदे में बैठ अपनी गतिविधियाँ करते हैं।

अध्ययन सामग्री

मॉण्टेसरी व्यवस्था में चार तरह की इन प्रमुख गतिविधियों से जुड़ी विविध सामग्री काम आती है – व्यावहारिक जीवन से जुड़ी गतिविधियाँ, अनुभूतिजन्य गतिविधियाँ, भाषा व अंकगणित सम्बन्धी गतिविधियाँ।

कई वर्षों तक बच्चों का अवलोकन करने और सीखने की संवेदी व निर्णायक उम्र पर गौर करने के बाद ही इन चीजों व गतिविधियों को इस व्यवस्था में शामिल किया गया है। व्यवस्था में शामिल होने के लिए इन चीजों व गतिविधियों का बच्चों के हिसाब से सार्थक होना भी जरूरी है और हम उन्हें सिर्फ इसी आधार पर शामिल नहीं करते कि वे दिखने में आकर्षक हैं। हमारा सारा ध्यान इस बात पर भी रहता है कि बच्चे को उसकी आयु के अनुरूप गतिविधियाँ और आवश्यक सामग्री दी जाए ताकि वह उसमें तल्लीनता से शामिल हो।

व्यावहारिक जीवन की गतिविधियों से जुड़ी सामग्री, बच्चे के जीवन में शामिल वयस्कों के दैनिक क्रियाकलापों के हिसाब से तय की जाती है और इसके चलते किसी नए वातावरण के अनुसार ढलने में बच्चे को मदद मिलती है। इन तमाम गतिविधियों के दौरान बच्चा चीजें पकड़ता है, उन्हें थामता और उठाता है, अनाज सरीखे छोटे–छोटे दानों–कणों और तरल पदार्थों को उँडेलता–पलटता है, झाड़न और



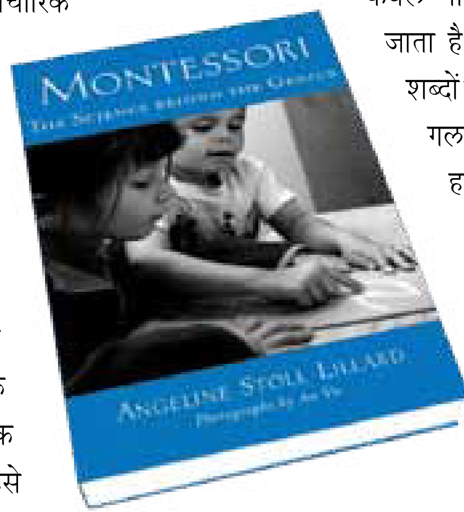
मारिया मॉण्टेसरी

तौलिया इत्यादि तह करना सीखता है, अलमारियों व आलों को झाड़ता–पोंछता है, फर्श साफ करता है, सब्जियाँ काटने और रोटियाँ बेलने जैसे रसोई के कामकाज करता है। गतिविधियों का चयन आसपास के इलाके के हिसाब से किया जाता है और इनका सारा दारोमदार शिक्षक की सृजनात्मकता पर होता है। मॉण्टेसरी की **अंकगणितीय सामग्री** और उनके **अनुभूतिजन्य संवेदी उपकरण** सब जगह आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं। लेकिन भाषाई सामग्री के साथ कोई कक्षा कितनी कल्पनाशील है, यह बात पूरी तरह से अध्यापक पर निर्भर करती है जो बच्चों की शब्द–सम्पदा बढ़ाने के लिहाज से विभिन्न विषयों पर कूटबद्ध चित्र बनाकर पेश करता है। आगे चलकर, बच्चा 'सैण्डपेपर लेटर्स (रेगमाल अक्षर)' और 'मूविंग ऐल्फाबेट (गतिशील वर्णमाला)' जैसी सामग्री (एक बक्सा जिसमें वर्णमाला के अक्षरों के कटआउट रखे होते हैं जिनको बच्चा किसी शब्द में आने वाले अक्षरों की ध्वनि सुन–सुनकर उसी क्रम में जमाता जाता है) और इस प्रकार बिना कुछ लिखे ही वह अपने आपको लिखने के अभ्यास के लिए तैयार करता है। पढ़ना सीखने की उम्र में पहुँचने पर बच्चे नाम की स्लिप लगे पिक्चर कार्ड भी बनाते हैं। विभिन्न विषयों पर छोटी–छोटी पुस्तिकाएँ बनाई जाती हैं, जिनके हर पन्ने पर एक शब्द या वाक्यांश लिखा रहता है और उसके ठीक सामने वाले पन्ने पर उस शब्द या वाक्यांश के सदृश्य एक चित्र बना होता है ताकि बच्चे को अपने द्वारा की जाने वाली पढ़ने की क्रिया में आत्मविश्वास आए।

कक्षा में अपनाए जाने वाले तरीके

सामग्री की एक औपचारिक 'प्रस्तुति' के द्वारा अध्यापक, बच्चों को सामग्री पर काम करने का तरीका सिखाते हैं। व्यक्तिगत और सामूहिक प्रस्तुतिकरण के अवसर भी मिलते हैं। विकास के इस चरण पर यह देखा गया है कि बच्चे अपने आप ही काम करना पसन्द करते हैं, यहाँ तक कि जब दो मित्र एक–दूसरे के करीब बैठकर भी काम करना चुनते हैं, तब भी उनका तरीका एक–दूसरे के साथ काम करने का न होकर, अपना–अपना काम खुद से करने का ही होता है, लेकिन सौहार्दपूर्ण ढंग से।

मॉण्टेसरी माहौल में ढाई साल की उम्र वाले और उससे बड़े बच्चों को काम करने, चलने–फिरने, बातचीत करने वगैरह की पूरी आजादी मिलती है। लेकिन इन आजादियों की कुछेक सीमाएँ भी होती हैं। मान लीजिए एक बच्चा सामग्री विशेष के साथ काम करना चाहता है। पहले तो उसके अध्यापक द्वारा उसे उस सामग्री का औपचारिक परिचय कराया जाएगा और इसके बाद वह सामग्री अलमारी में उपलब्ध भी होनी चाहिए। अगर कोई और बच्चा उस सामग्री के साथ कुछ काम रहा है तो इस बच्चे को या तो अपनी बारी आने तक इन्तजार करना पड़ेगा या फिर उसे अपनी पसन्द की कोई और चीज पसन्द करनी पड़ेगी। बच्चों में सामाजिक जिम्मेदारी का जज्बा पैदा करने का यह एक सहज तरीका लगता है और मॉण्टेसरी इसे 'सामाजिक इकाई का परस्पर–सहयोग' का नाम देती हैं। बच्चे की इच्छाशक्ति विकसित करने के एक उतने ही महत्वपूर्ण तरीके के बतौर भी इसे देखा जा सकता है।



मॉण्टेसरी माहौल, बार–बार उलट–पलट कर देखने, जुगाड़ भिड़ाने और काम करने के अवसर देता है जिसके चलते बच्चा काम में निपुणता हासिल तो करता ही है, साथ ही गणित व भाषा की बुनियादी अवधारणाओं की एक गहरी समझ भी पाता है। नतीजतन, आगे की पढ़ाई के साथ–साथ वृहत्तर जीवन के लिए भी वह तैयार होता है।

शिक्षा के परिणाम

शिक्षा में गुणवत्ता के सवाल को देखने का एक तरीका यह भी है कि जब हमारे बच्चे प्री–प्राइमरी से प्राइमरी, प्राइमरी से एलिमेण्टरी की ओर बढ़ें और इस तरह बढ़ते–बढ़ते जब वे अपनी पढ़ाई पूरी कर स्कूल छोड़ रहें हों तब अपने शाला–प्रस्थान प्रमाणपत्र के साथ हम उन्हें किस तरह के ज्ञान से लैस देखना चाहते हैं या उन्हें किस तरह के व्यक्ति के बतौर देखना चाहते हैं।

विप्रो ई.आई. द्वारा किए गए एक अध्ययन पर द हिन्दू नामक अखबार में (12 दिसम्बर, 2011) छपे एक लेख का शीर्षक है 'उत्तम स्कूलों में रट्टे का प्रचलन'। बहुत से अभिभावकों का कहना था कि प्राइवेट स्कूलों की प्राइमरी कक्षाओं में जाने वाले उनके बच्चों को अपने उत्तर केवल पाठ्यपुस्तकों में से लिखने को कहा जाता है और अगर वे अपने जवाब 'अपने शब्दों' में लिखते हैं तो उनके जवाबों को गलत बताया जाता है। ऐसे में, जब वे हाईस्कूल में हों, हम अपने बच्चों से, उनके शिक्षकों द्वारा लगाई गईं इन शुरुआती अपेक्षाओं की जकड़ से मुक्त हो एकाएक 'कठघरे से बाहर' सोच पाने की उम्मीद भला कैसे कर सकते हैं?

मॉण्टेसरी का कहना है, "विकास गतिविधि के चलते होता है, न कि बौद्धिक समझ से। इसीलिए, छोटे बच्चों, खासकर तीन से छह साल की उम्र तक के बच्चों की शिक्षा महत्वपूर्ण होती है, क्योंकि चरित्र व समाज निर्माण की यही प्रारम्भिक अवस्था होती है ..." (दि ऍब्सॉर्बेण्ट माइण्ड, मारिया मॉण्टेसरी – अवशोषी मस्तिष्क, मारिया मॉण्टेसरी)।

यूनिवर्सिटी ऑफ वर्जीनिया की मनोविज्ञानी एंजलीन लिलार्ड (*मॉण्टेसरी : दि साइंस बिहाइण्ड द जीनियस की लेखक*) और सम्प्रति विलानोवा यूनिवर्सिटी की मनोविज्ञानी निकोल–एल्से–क्वेस्ट ने उन बच्चों का अध्ययन किया जिन्होंने मिलवॉकी के एक पब्लिक मॉण्टेसरी स्कूल में जाने के लिए एक लॉटरी में भाग लिया था। इस अध्ययन की एक रिपोर्ट साइंस नामक पत्रिका के 28 सितम्बर, 2006 के अंक में छपी। इसका कहना है–

"एक पब्लिक इण्टरसिटी मॉण्टेसरी स्कूल में पढ़ने वाले बच्चों के परिणामों की तुलना पारम्परिक स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चों के नतीजों से करने वाले एक अध्ययन के मुताबिक पारम्परिक स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चों की तुलना

में .... मॉण्टेसरी शिक्षा से बेहतर सामाजिक व शैक्षिक योग्यताओं वाले बच्चे तैयार होते हैं .... "मॉण्टेसरी पद्धति की विशिष्टताएँ हैं : बहु–आयु कक्षाएँ (मल्टी–एज क्लासरूम्स), खास तरह की शैक्षणिक सामग्री, लम्बे कालखण्ड में विद्यार्थी द्वारा चयनित कार्य, मार्गदर्शकों के चलते एक सहयोगपूर्ण वातावरण, परीक्षाओं व ग्रेड्स का न होना तथा शैक्षिक व सामाजिक दक्षताओं हेतु व्यक्तिगत व सामूहिक निर्देश। यू.एस. में 300 पब्लिक स्कूलों समेत 5000 से भी ज्यादा स्कूल मॉण्टेसरी पद्धति का प्रयोग करते हैं।"

"प्रारम्भिक स्कूल के हिसाब से पढ़ने और गणित सम्बन्धी निपुणताओं के मामले में पाँच साल की उम्र वाले बच्चों में गैर–मॉण्टेसरी विद्यार्थियों की तुलना में मॉण्टेसरी विद्यार्थी कहीं बहुत बेहतर पाए गए हैं। प्रबन्धकीय प्रकृति के कार्यों में भी मॉण्टेसरी बच्चे बेहतर पाए गए यानी ज्यादा जटिल और परिवर्तनशील समस्याओं के साथ तालमेल बैठा पाने की योग्यता उनमें अधिक पाई गई, जो कि स्कूल व जीवन, दोनों क्षेत्रों में उनकी भावी सफलता का सूचक है।"

लेखिकाओं का निष्कर्ष था, "... ठीक–ठीक अमल में लाने पर मॉण्टेसरी शिक्षा ऐसी सामाजिक व शैक्षणिक क्षमताएँ विकसित करती है जो दूसरी तरह के स्कूल–समूह द्वारा विकसित की जाने वाली क्षमताओं के मुकाबले या तो बेहतर होती हैं या कम से कम उनके बराबर होती हैं।"

ऐसे वातावरण में बच्चे कितनी आसानी से अपनी सामाजिक निपुणताएँ विकसित कर पाते हैं, इस बात का मर्म समझने के लिए मैं यहाँ श्री रामचरण ट्रस्ट की अध्यक्ष श्रीमती पद्मिनी गोपालन को उद्धृत करती हूँ : "हमारे ट्रस्ट के एक मित्र, कॉर्पोरेशन ऑफ चेन्नै के चेन्नै स्कूल्स, माइलापुर में जहाँ हमने एक मॉण्टेसरी कक्षा स्थापित की थी, अपना एक पारिवारिक कार्यक्रम करना चाहती थीं। एक दोपहर को वे बच्चों के लिए कुछ मीठा व कुछ नमकीन ले आईं। बच्चों को कक्षा में चारों ओर एक कतार बनाकर बैठने को कहा गया और आगंतुक लोग उन्हें नाश्ता परोसने लग गए। मैं इस बात पर हैरान रह गई कि 3 से 5 साल की उम्र के बच्चे बड़े संयम से अपनी बारी आने का इन्तजार कर रहे थे। कोई हल्लागुल्ला न हुआ, कोई चीख–पुकार न हुई, कोई रोना–धोना न था और ऐसा भी न था कि उन बच्चों के मन में टीचरों या आगंतुकों को लेकर कोई डर था। बल्कि उनमें से एक ने तो परोसे जाने वाले स्वल्पाहार को लेकर अपनी विशेषज्ञ टिप्पणी तक कर डाली, 'यह वड़ा बहुत अच्छा है, जरूर यह किसी अय्यर परिवार से आया है, क्योंकि इसमें कोई प्याज जो नहीं हैं!' यह क्या इसलिए है कि उन्होंने अपनी बारी आने तक इन्तजार करना सीख लिया है, और अब उन्हें यह भरोसा हो चला है कि उन्हें भी उनका हिस्सा मिलेगा?"

अपना पहला मॉण्टेसरी वातावरण छोड़कर आगे की कक्षाओं जाने वाले एक छह वर्षीय बच्चे में जिन गुणों की झलक मिलती है वे हैं : आत्मविश्वास, स्वाभिमान, जिम्मेदारी का बोध, अपने विचारों को सफाई व्यक्त कर पाने की योग्यता, स्वप्रेरित ज्ञानार्जन, अपने द्वारा उठाए गए काम को पूरा करने के प्रति समर्पण और सबसे बढ़कर अभी चल रहे काम पर एकाग्र बने रहने की क्षमता। इनमें से प्रत्येक गुण को हम शिक्षा के एक परिणाम के बतौर कक्षा से प्राप्त अपने अनुभवों के साथ जोड़कर देख सकते हैं।

अपने समूचे स्कूली जीवन से मिलने वाले ज्ञान हेतु बच्चे के लिए जो चीज सबसे ज्यादा अनिवार्य होती है वह है एकाग्र रह पाने की उसकी क्षमता। अध्यापकों व अभिभावकों से हर बच्चे को कम से कम यह एक डाँट तो पड़ती ही रहती है, "अगर तुम सिर्फ ध्यान ही देते तो इससे कहीं बहुत अच्छा कर पाते!" लेकिन सहजता से एकाग्र रह पाने के अवसर बच्चों को आखिर मिलते ही कितने हैं?

मॉण्टेसरी वातावरण में पले बच्चे एकाग्रता व दत्तचित्तता का एक खास स्तर प्राप्त करने में सक्षम हो जाते हैं। मॉण्टेसरी स्कूल में किए जाने वाले सबसे पहले क्रियाकलाप जिनमें बच्चे ध्यान लगाकर काम करना सीखते हैं वे हैं – धागे में मनके डालकर माला बनाना और फिर आगे चलकर अनाज को एक डिब्बे से दूसरे डिब्बे में स्थानान्तरित करना। शुरुआती जीवन में बन गई यह आदत आगे चलकर

तब बड़े सहज रूप से बच्चे में विकसित होती है, जब व्यावहारिक जीवन की इन गतिविधियों में वह स्वेच्छा से भाग लेता है।

और अन्त में, अध्यापक होने के नाते यदि हमारा सपना सार्थक शैक्षिक वातावरण बनाना है तो हमें इस पर तुरन्त ही काम शुरू कर देना चाहिए, क्योंकि अब तो हमने साथ चलने की ठान ही ली है। बचपन की प्रारम्भिक अवस्था को जब हम इस नजरिए से देखते हैं तो हमें यह साफ दिखाई देने लगता है कि हमें ऐसे कार्याभ्यास विकसित करने होंगे जो स्वाभाविक रूप से बच्चों के समग्र विकास पर केन्द्रित रहते हैं और जिनमें बच्चों के सहज विकास हेतु पर्याप्त समय व स्थान होते हैं।

l Un HkZ

1. http://montessori-science.org/
2. http://montessori-science.org/montessori_science_journal.html
3. http://montessori-science.org/montessori_science_journal.html



सुश्री उमा *शंकर सेण्टर फॉर मॉण्टेसरी ट्रेनिंग, चेन्नै की निदेशक और इण्डियन मॉण्टेसरी सेण्टर की महासचिव हैं। मॉण्टेसरी शिक्षण पद्धति में उन्हें 25 वर्षों से भी अधिक समय का अनुभव है और इसके प्रामाणिक रूप से बाल–केन्द्रित पद्धति होने के चलते वे इसकी कारगरता में विश्वास करती हैं। 1998 से वे 3–6 साल के बच्चों के साथ काम करने हेतु शिक्षकों को प्रशिक्षण देती रही हैं। उनसे umashanker46@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।* ***अनुवाद*** *: मनोहर नोतानी*



06 इतिहास का सृजन

bfrgkl dh d{kk esa vUos"k.k d¨ çsfjr djuk

श्रीपर्णा तम्हाणे

विद्यार्थियों द्वारा इतिहास को नापसन्द करने का एक कारण यह है कि वे इसके साथ अपना नाता नहीं जोड़ पाते। वे अतीत को इस लिहाज से समझ नहीं पाते जो उन्हें घटनाओं, कालखण्डों और व्यक्तियों की परस्पर तुलना करने और उनके भेद समझने के काबिल बनाता हो या समय की धारा पर सेतु बनाने में उनकी मदद करते हुए उन्हें अतीत की रोशनी में वर्तमान को देखने की दृष्टि देता हो।

विषय को नापसन्द करने का दूसरा कारण यह है कि अक्सर विद्यार्थियों को ऐसे अभ्यास नहीं कराए जाते जो उन्हें पड़ताल के लिए प्रेरित करें। पड़ताल की प्रक्रिया का अभ्यास ही विद्यार्थियों को इतिहास अध्ययन का वास्तविक महत्व समझाने में सहायक होता है – समस्या की समझ और उसका विश्लेषण, प्रश्न पूछना, अनुसन्धान करना, प्रासंगिक साक्ष्यों की पहचान और उनकी विश्वसनीयता का आकलन, इन साक्ष्यों के बल पर कामचलाऊ से टिकाऊ निष्कर्षों तक पहुँचना, अपने कामचलाऊ व टिकाऊ निष्कर्षों को कारगर ढंग से अभिव्यक्त कर पाना। इस समूची प्रक्रिया के दौरान उन्हें एक इतिहासकार की तरह सोचने और इतिहास की पुनर्रचना करने का अवसर मिलता है।

पुणे में जे. कृष्णमूर्ति फाउण्डेशन द्वारा संचालित एक स्कूल में कक्षा छह के विद्यार्थियों का परिचय, इतिहास से कराते हुए, मैं अक्सर कहा करती कि हर चीज का एक इतिहास होता है। स्वयं बच्चों को ही लें तो उनका परिवार, उनका स्कूल, स्थान व चीजें जिनके सम्पर्क में वे आते हैं; ये सब मिलकर उनका एक इतिहास रचते हैं। मैं उन्हें अपने इस इतिहास के एक हिस्से को खंगालने और उसे रचने के लिए प्रेरित करती।

इसी प्रक्रिया के तहत हमें पड़ोस के एक ऐसे मन्दिर का इतिहास खंगालने और उसे लिखने का अनुभव हुआ जिसके बारे में हमारे पूरे स्कूल समुदाय में से किसी को भी ज्यादा कुछ मालूम न था। देखा जाए तो यह काम चुनौती भरा था, क्योंकि एक कम चर्चित मन्दिर चुनकर अपने अनुसन्धान हेतु पर्याप्त साक्ष्य जुटा पाने को लेकर मैं बहुत आश्वस्त तो न थी। बहरहाल, मैंने शुरुआत तो की यह महसूस करके कि इसके नतीजतन कम से कम बच्चे अनुसन्धान की प्रक्रिया से तो दो–चार होंगे और इतिहासकारों के काम करने के तरीकों की कुछ थाह भी वे पाएँगे।

हमारे पास ऐसा कोई साहित्य नहीं था जिसके सहारे हम उस मन्दिर के बारे में कुछ जानकारी जुटाते। सो हमने अपनी यात्रा की शुरुआत 'शम्भू पहाड़ी' पर दो घण्टे की चढ़ाई से की जिसका नाम उस शिव मन्दिर पर रख गया था, जिसकी पड़ताल के अभियान पर हम निकले थे। मैं और मेरे बारह वर्षीय 20 बच्चे अपनी–अपनी स्केचबुक्स, नोटबुक्स और पेंसिलों के साथ अनुसन्धान यात्रा का उछाह अपने दिलों में लिए–लिए, लस्तम–पस्तम ही सही उस पहाड़ी पर चढ़ गए।

मन्दिर के पुजारी से मैं पहले ही निवेदन कर चुकी थी कि



एक पुराना हिन्दू मन्दिर



शम्भू पहाड़ी से सूर्योदय

हमारे वहाँ पहुँचने पर मन्दिर के बारे में बताने वगैरह के लिए वे वहीं उपस्थित रहें। हमारे अभियान के शुरुआती चरण में मन्दिर के परिसर की टोह लेना भी शामिल था। अपने सर्वेक्षण के दौरान बच्चों ने मन्दिर के विभिन्न हिस्से देखे और उनके बारे में जाना –

1. गर्भगृह, जहाँ मुख्य मूर्ति स्थापित है,
2. 'साधना स्थल' जहाँ प्रार्थनाएँ होती हैं,
3. बीच में 'मण्डप' जहाँ लोग एकत्र होते हैं,
4. 'तुलसीस्थान' किसी भी भारतीय मन्दिर में जिसका अपना महत्व होता है,
5. दर्शनार्थियों की शरण हेतु मन्दिर के साथ लगा 'भक्तनिवास',
6. मन्दिर के चारों तरफ परिक्रमा लगाने के लिए 'परिक्रमा पथ',
7. उत्तर भारत के मन्दिरों की एक विशिष्टता 'शिखर', आदि–आदि।

इसके अलावा, उन्होंने मन्दिर के निर्माण में लगी सामग्री के बारे में भी जानकारी इकट्ठी की। एक तरह से, मन्दिर वास्तुकला के विषय में यह उनका पहला पाठ था। बच्चों ने अपनी स्केचबुक्स में मन्दिर के अलग–अलग हिस्सों के स्केच भी बनाए। इनमें से कुछ रेखाचित्रों को देखना अपने आप में एक सुखद अहसास था। कई जगह उनके चित्रण इतने बारीक व जटिल थे कि उनसे न सिर्फ उनकी कलात्मक दक्षताएँ झलकती थीं, बल्कि उनकी पैनी व मुस्तैद नजर के भी दर्शन होते थे।

गर्भगृह में महिलाओं का प्रवेश वर्जित होने की अफसोसजनक बात सुनकर तो उनके सवालों की झड़ी–सी लग गई और ग्रुप की लड़कियों में एक रोष–सा छा गया। शारीरिक/सांस्कृतिक कारणों के चलते पूजाघरों में व्याप्त इस लैंगिक भेदभाव से अचानक हुई इस मुठभेड़ ने हमारे इन उदीयमान नन्हे चिन्तकों को उद्वेलित कर दिया। फिर तो बस सभी बच्चों द्वारा सवाल पर सवाल दागे जाने लगे, "भगवान की पूजा करने के लिए क्या मन्दिर जाना जरूरी है?" "ज्यादातर पुजारी पुरुष ही क्यों होते हैं, स्त्रियाँ क्यों नहीं?", "ईश्वर को खुश करने के लिए हमें कुछ खास धर्मानुष्ठान क्यों करने पड़ते हैं?", "एक निर्दोष की बलि भला कैसे पूजा–अनुष्ठान का कोई हिस्सा हो सकती है?", "सारे धर्मों का उद्देश्य यदि शान्ति है तब फिर हम लोग



मन्दिर की दीवार पर लेख

क्यों अलग–अलग धर्मों को लेकर एक–दूसरे से इतना लड़ते–झगड़ते हैं?" अगले कुछ दिन इन सभी सवालों पर खुलकर बहस होती रही। स्पष्ट ही कुछ विश्वास और रीति–रिवाज ऐसे थे जिनसे वे परिचित थे और कुछ ऐसे जो उनके लिए अजाने थे। यह बात आश्वस्त करती थी कि इनमें से कुछेक आस्थाओं व परम्पराओं पर सवाल खड़े करने से वे झिझकते नहीं थे।

पुजारी ने वहाँ लगने वाले सालाना मेले के सामाजिक, सांस्कृतिक व आर्थिक पक्षों की भी जानकारी दी। मेले के

दिनों में अन्यथा सुनसान पड़े उस मन्दिर पर अचानक रौनक सी छा जाती और आसपास के गाँवों से लोग जत्थों में उमड़े चले आते और हमारा यह मन्दिर चहलपहल का केन्द्र बन जाता। अब आया मन्दिर के प्रबन्धन का सवाल। ये सारे कार्यक्रम आयोजित कौन करता है? मन्दिर का दैनिक प्रबन्धन किसके जिम्मे होता है? मन्दिर के रख–रखाव के लिए पैसा वगैरह कहाँ से आता है? पुजारी ने बताया कि मन्दिर के मामलों के प्रबन्धन हेतु एक ट्रस्ट बनाया गया है।

इस भ्रमण के दौरान, हम लोग लगातार ऐसे अभिलेखों की खोज में लगे रहे जिन पर उस मन्दिर का इतिहास अंकित हो। दो–ठो अभिलेख हमें मिले भी जिनके अनुसार वह मन्दिर कोई 200 बरस पुराना था, और यह भी कि एक होल्कर राजा को आखेट के दौरान संयोग से चार शिवलिंग मिल गए थे और इस मन्दिर का निर्माण अहिल्याबाई होल्कर ने करवाया था। इस सुराग के सहारे बच्चों ने फिर होल्कर राजघराने और उनके राजक्षेत्र के सम्बन्धों की पड़ताल की।

पुजारी से हमने इतिहास के बारे में भी पूछताछ की। उसके द्वारा बताया गया विवरण टुकड़े–टुकड़े था जिसमें कई रोचक प्रसंगों का छौंक भी लगा था, जिन्हें हमने एक तारतम्य में बाँधने की कोशिश की। लेकिन और अधिक जानकारी जुटाने के लिए हमें सवालों की एक बौछार–सी लगानी पड़ी। अन्ततः हमारा अभियान समाप्त होते–होते हमारे पास उस मन्दिर का एक अदद ब्योरा हो चला था। लेकिन, बच्चों के लिए यह समझना भी जरूरी था कि जिसे उन्होंने 'इतिहास' के बतौर सुना है वह कुछ और नहीं बस एक व्यक्ति की यादों से बुना एक संस्करण मात्र है जो हमें मौखिक रूप में दिया गया है। सो, निश्चित ही ऐसे और भी साक्ष्य होंगे जो इस संस्करण की पुष्टि करेंगे या इसका खण्डन करेंगे।

इस बाबत किंचित लिखित साहित्य जुटा पाने सम्बन्धी हमारी ईमानदार कोशिशें हालाँकि शुरू में तो व्यर्थ गईं, क्योंकि इस बाबत हम एक भी स्रोत जुटा न पाए।

तब हमने इस बारे में अन्य लोगों के पास उपलब्ध संस्करणों को जानने का निर्णय लिया। हम पास के एक गाँव गए और वहाँ जाकर गाँव के मुखिया और एक पुराने स्कूल टीचर से मुलाकात की। इतिहास की जो झलकियाँ उन्होंने हमें दीं उनमें से अधिकांश तो पुजारी के आख्यान से मिलती–जुलती लगती थीं। हम लोग ट्रस्ट के कम से कम एक सदस्य से तो मिलना ही चाहते थे। आखिरकार हमारी मेहनत रंग लाई और बड़े ही चमत्कारिक ढंग से हमारे हाथ एक महत्वपूर्ण स्रोत लगा – एक ऐसे दस्तावेज की प्रति, जो हमारे लिए बड़ी मूल्यवान थी।

अब इस दस्तावेज का सृजन भी अपने आप में एक ऐतिहासिक घटना थी। किसी समय, उस जगह की विरासत को जीवित रखने की दृष्टि से, मन्दिर के न्यासियों ने मन्दिर का जीर्णोद्धार करने का निर्णय लिया क्योंकि मन्दिर अब काफी पुराना हो चला था। उनकी योजना पीने का पानी उपलब्ध कराने, अधिक संख्या में पेड़ लगाने, बाहर से आए श्रद्धालुओं के ठहरने के लिए कमरे और वाहन–पार्किंग बनाने की थी। लेकिन उन्हें यह जल्दी ही समझ में आ गया कि जिस जमीन पर मन्दिर बना था, वह दरअसल वन विभाग की थी सो मन्दिर के जीर्णोद्धार के लिए केन्द्र सरकार की मंजूरी जरूरी थी। अब भारत सरकार को भेजे जाने वाले प्रस्ताव के साथ मन्दिर के इतिहास और उसके ऐतिहासिक भवन के धार्मिक व सामाजिक महत्व के बारे में भी बताया जाना था। परियोजना की कुल लागत 15 लाख रुपए ठहरी। चूँकि उस स्मारक को 'सी श्रेणी' के तीर्थाटन का दर्जा प्राप्त था सो उन्हें सरकार से पुनरुद्धार की राशि मिलने की पूरी उम्मीद थी।

हमारी इस यात्रा का सबसे सुखद पड़ाव था इस दस्तावेज का एक पुराना, धूल सना, जिल्द चढ़ा संस्करण हाथ लगना। बच्चों ने इत्मीनान से इस प्रस्ताव का अध्ययन कर वह तमाम जानकारी हासिल की जिसकी उन्हें तलाश थी और फिर इससे मिलान करके पूर्व में मिली जानकारी की पुष्टि की गई।

दरअसल, दस्तावेज ने लोगों द्वारा मौखिक रूप से प्रदत्त अधिकांश जानकारी को सम्पुष्ट ही किया। स्मारक पर

प्रत्यक्षतया कोई औपचारिक पुस्तक लिखी न जाने की सूरत में 'शम्भू महादेव' मन्दिर का एक तदर्थ इतिहास लिखने की दृष्टि से हम शायद इतनी ही दूर जा सकते थे। लेकिन हमें पढ़ाया जाने वाला अधिकांश इतिहास भी तो शायद इतना ही 'तदर्थ' या उतना ही 'अन्तरिम' होता है; नहीं क्या? इतिहास यानी कुछ ऐसे अन्तरिम निष्कर्ष जो तब तक 'सही' माने जा सकते हैं जब तक कि नए साक्ष्य की रोशनी में वे 'गलत' प्रतीत न हो जाएँ?

उपलब्ध स्रोतों के बल पर अतीत का लेखा लिखे जाने की प्रक्रिया के दौरान बच्चे यह सीखते हैं कि अतीत के विभिन्न संस्करण एक–दूसरे से अलग–अलग हो सकते हैं। क्योंकि साक्ष्य अपूर्ण हैं और अतीत का पुनर्निर्माण प्राय: अलग–अलग दृष्टिकोणों से होता है। यह प्रक्रिया और यह बोध बच्चों के साथ बना रहे, मैं यही चाहती थी।

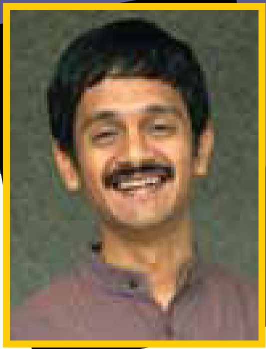
शुरुआत में हमें यह नहीं मालूम था कि इतिहास चिनने के हमारे इस उद्यम में हम मौखिक परम्पराओं की हदों से परे जा भी पाएँगे या नहीं; हमें यह भी नहीं पता था कि लिखित साहित्य या शिलालेख की शक्ल में हमें कोई सम्पुष्टकारी साक्ष्य मिलेगा या नहीं! लेकिन अगर हमें यह सब नहीं भी मिला होता तो भी हमारे अनुभव ने इतिहास सम्मत विवेचना के आधारभूत सिद्धान्तों से हमारा परिचय तो करा ही दिया होता।

इस अनुभव से मुझे और क्या मिला?

ऐतिहासिक स्मारकों के प्रति एक जिज्ञासा पैदा करने, मन्दिर वास्तुकला के कुछ बुनियादी तत्त्वों से बच्चों का परिचय करवाने, साक्ष्यों की पड़ताल करने और उनके निहितार्थ समझने, ऐतिहासिक इमारतों के जरिए विभिन्न अनुशासनों के बीच सम्बन्ध बनाने, हमारी स्थापित विरासत के प्रति उनकी जागरूकता बढ़ाने और उसके प्रति उन्हें संवेदनशील बनाने तथा हमें सुपुर्द मूल्यों व परम्पराओं के विवेचनात्मक परीक्षण को प्रोत्साहित करने के अलावा मैं अपने बच्चों को तथ्यान्वेषण करने, जाँचने–परखने और अपने सीमित दायरे में इतिहास को सृजित करने हेतु प्रोत्साहित कर पाई।



__श्रीपर्णा__ इन दिनों अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बंगलौर में एक विषय विशेषज्ञ की हैसियत से काम कर रही हैं। अपनी इस भूमिका में वे शिक्षकों के लिए बनी एक वेबसाइट www.teachersofindia.org हेतु डिजिटल व डिजिटलेतर सामग्री का सृजन करती रही हैं। जे. कृष्णमूर्ति फाउण्डेशन स्कूलों में अँग्रेजी व सामाजिक अध्ययन पढ़ाने का उन्हें 15 वर्ष लम्बा अनुभव रहा है। पाठ्यक्रम निर्माण व शिक्षक ज्ञान–संवर्धन के उपक्रमों से भी वे जुड़ी रही हैं। उन्होंने शिक्षक–मार्गदर्शन (टीचर मेण्टरिंग) के क्षेत्र में भी काम किया है और कई शिक्षक–संवधर्न कार्यशालाएँ (टीचर एनरिच्मेण्ट वर्कशॉप्स) भी संचालित की हैं। उनसे सम्पर्क करने का ई–पता है : sriparna.tamhane@azimpremjifoundation.org / __अनुवाद:__ मनोहर नोतानी



07 'नवाचार' एक शिक्षक के नाते

ऋषिकेश बी.एस.

यह लगभग 15 साल पहले की बात है जब मैं इस 'समूह' का सदस्य था – ऐसे मानवों की प्रजाति जिन्हें वह काम बड़ा अच्छा लगता था जो वे अपनी आजीविका के लिए करते आए थे, जबकि कॅरिअर की दृष्टि से वह बड़ा ही अनिश्चित और पैसे की दृष्टि से बड़ा ही कृपण था! बहरहाल, इस समूह के हर सदस्य में एक खासियत साझा थी – कक्षा की चारदीवारी में विद्यार्थियों के साथ संवाद करने के दौरान मिलने वाला आनन्द। विद्यार्थियों के साथ इस परस्पर–संवाद के दौरान हम उस खास विषय की पड़ताल कर रहे होते जिसके हम 'एक्सपर्ट' माने जाते थे। लेकिन सामान्य टीचर भी तो यही सब करते हैं तो फिर भला क्यों मैं अपने समूह को उन अध्यापकों से अलग करके देख रहा हूँ? यह सही है कि हम भी कुछ काम ऐसे करते थे जो एक आम अध्यापक करता है। मिसाल के लिए, हम भी अपने विद्यार्थियों को एक अध्यापन–अध्ययन ढाँचे में रमाए रखते थे, लेकिन 'शिक्षक' होने के अलावा हम और भी 'कुछ' थे। हमारे 'और भी कुछ' होने के कई कारणों में से तीन प्रमुख थे। एक तो जब भी हम विद्यार्थियों के किसी समूह के साथ चर्चा करते तो इस बात की सम्भावना हमेशा और अच्छी–खासी बनी रहती कि कक्षा के वातावरण में उनसे बात करने का हमारा वह पहला व अन्तिम मौका साबित हो सकता था। यानी हम यदि सफल होना चाहते थे तो हमारे पास सिर्फ वही एक घण्टा या उससे भी कुछ कम समय था जिसमें हम बच्चों पर किसी भी तरह का स्थायी प्रभाव छोड़ सकते थे, जबकि एक आम शिक्षक के पास कम–से–कम एक साल तो रहता ही है, कहीं किसी भी तरह की भरपाई करने के हिसाब से। दूसरे, शिक्षक, पाठ्य–पुस्तक को अपने खास औजार के बतौर इस्तेमाल करते हैं जबकि हमारे पास ले–दे के उस दिन का अखबार ही रहता था अपने काम में लाने के लिए (हाँ, यह बात जरूर है कि हमारा यह हथियार नित नए रूप धारण करता था)। और तीसरे, तमाम आम स्कूली शिक्षकों के पास अपने–अपने विषय सम्बन्धी संसाधन होते हैं, जबकि हमारी उस 'टोली' के हर सदस्य के पास वही एक संसाधन (दैनिक समाचारपत्र) होता था, फिर चाहे हम भौतिकी पढ़ा रहे हों या जैविकी या फिर संगीत, रंगमंच, इतिहास या कुछ भी।

जिस समूह की मैं बात कर रहा हूँ वह 'एन.आई.ई. कंसल्टण्ट्स' के नाम से लोकप्रिय है जहाँ इन प्रथमाक्षरों का विस्तार है यह वाक्यांश 'न्यूजपेपर इन एज्यूकेशन (अखबार के जरिए पढ़ाई)'। एन.आई.ई. के सलाहकार देश के सभी प्रमुख शहरों में हैं और कई राष्ट्रीय अखबार उनकी सेवाएँ लेते हैं। तरीका एकदम सीधा–सादा है – किसी समाचारपत्र के साथ एन.आई.ई. विशेषज्ञ के बतौर जुड़ते ही उस व्यक्ति को हर सप्ताहान्त उन स्कूलों की एक सूची दी जाती है जिन स्कूलों में उसे अगले हफ्ते जाना है। इस सूची में मुख्यत: विभिन्न प्रकार के प्राइवेट स्कूल होते हैं और कुछेक शहरों में तो केन्द्रीय विद्यालयों (के.वी.) के भी नाम होते हैं।

विशेषज्ञ का काम है, इन स्कूलों में जाकर विद्यार्थियों के साथ कक्षा–आधारित सत्र करना। ये सत्र कक्षावार होते हैं और एक विशेषज्ञ को कक्षा एक से कक्षा बारह तक कोई भी कक्षा की जिम्मेदारी सौंपी जा सकती है। देश के सभी प्रमुख शहरों में अधिकांश राष्ट्रीय अखबार आज एन.आई.ई. कार्यक्रम से जुड़े हैं। अस्सी के दशक की शुरुआत में में न्यूयॉर्क टाइम्स द्वारा किए गए एक नवाचारी प्रयोग से इस अद्भुत कार्यक्रम की शुरुआत हुई थी। फिर

उस दशक का अन्त आते–आते टाइम्स ऑफ इण्डिया के तत्वावधान में यह कार्यक्रम भारत भी आ पहुँचा। जल्द ही द हिन्दू व डेक्कन हेराल्ड जैसे देश के अन्य बड़े अखबारों ने भी इसे अपना लिया। जब भी कोई स्कूल एन.आई.ई. कार्यक्रम से जुड़ता है तो वही तय करता है कि उसकी कौन–सी कक्षाएँ कार्यक्रम का हिस्सा होंगी। हर स्कूल का अपना तर्क होता है जिसके आधार पर वह कक्षाएँ चुनता है। उदाहरण के लिए के.वी. के लिए कक्षा ग्यारह व कक्षा बारह इस कार्यक्रम का हिस्सा होती थीं क्योंकि उनका मानना था कि अनेकानेक विषयों पर एक 'विश्व दृष्टि' व विविध प्रकार के परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत करने वाला यह कार्यक्रम उनके किशोर बच्चों के लिए कहीं ज्यादा लाभदायक होगा। दूसरी ओर, कुछ अन्य स्कूलों की नजर में यह कार्यक्रम, उनकी निम्नतर प्राथमिक कक्षाओं के लिए ठीक न होकर, उनकी उच्चतर प्राथमिक कक्षाओं के बच्चों के लिए बेहतर होता। जबकि ऐसे भी स्कूल थे जो यह सोचते थे कि इस तरह का कार्यक्रम, प्रारम्भिक (एलिमेण्टरी) स्तर की सभी कक्षाओं के लिए तो उपयोगी होगा लेकिन बड़ी कक्षाओं के लिए नहीं। कई स्कूलों की सोच में हाईस्कूल की कक्षाओं को इस तरह के कार्यक्रमों के साथ जोड़ना बिलकुल भी अच्छा न होता, क्योंकि उनके हिसाब से इन कक्षाओं के बच्चे अपनी आने वाली बोर्ड की परीक्षाओं के लिए तैयारी में लगे रहते हैं और उनकी यह एकाग्रता बिलकुल भी भंग नहीं की जानी चाहिए। यह तो साफ था कि ये स्कूल, एन.आई.ई. कार्यक्रम को एक पाठ्येतर विविधा के बतौर देख रहे थे।

लेकिन ऐसे स्कूल बहुत थे जिन्हें यह कार्यक्रम, अपने विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास की उनकी योजना से एकदम मेल खाता लगता था। जहाँ तक एन.आई.ई. विशेषज्ञों की बात है तो इस सारी विविधता का मतलब था नाना प्रकार के स्कूली परिवेश में तरह–तरह के विद्यार्थियों के साथ जुड़ने का अवसर। यह सब एक चुनौती भी देता था तो एक रोमांच भी। मैं बंगलौर में इस 'विशेषज्ञ सलाहकार' समूह का एक सदस्य था और उन चार सालों में जब मैं इस कार्यक्रम का हिस्सा था, मुझे 100 से भी ज्यादा स्कूलों के कक्षा एक से लेकर कक्षा बारह तक के बच्चों के साथ काम करने का मौका मिला। चार सालों के दौरान हर रोज विद्यार्थियों के साथ संवाद करने के अनुभव और कक्षा से मिले रोमांचक अनुभवों तथा हर कक्षा से पहले लगने वाली तैयारी की स्मृति के सहारे ही मैं यह लेख लिख रहा हूँ। मैं कोशिश करूँगा कि क्लास में लगने वाली तैयारी को आपके साथ बाँटते हुए बताऊँ कि कक्षा के पहले की गई यह सारी तैयारी कैसे उस कक्षा की चारदीवारी के भीतर अपने रंग में आती थी। उम्मीद करता हूँ कि इस सारी जद्दोजहद में मैं उन लोगों को अपने इन तजुर्बों का कुछ अहसास करा पाऊँ जो पढ़ाने की इस विधि को आजमाना चाहते हैं।

अधिकांश एन.आई.ई. विशेषज्ञों के दिन की शुरुआत उस दिन के समाचारपत्रों के विस्तृत अवलोकन और ऐसे समाचारों, प्रसंगों के चयन से होती है जिन्हें उस दिन के लिए टी.एल.एम. सामग्री के बतौर इस्तेमाल किया जा सकता है। इसके बाद, स्कूल सूची देखकर यह पता लगाया जाता है कि कौन–कौन–से स्कूल व उन स्कूलों की कौन–कौन–सी कक्षाएँ उस दिन पढ़ाने के लिए निर्धारित की गई हैं। इसके बाद, डायरी या याददाश्त के आधार पर यह देखा जाता है कि वे स्कूल या कक्षाएँ पढ़ाने के लिए



उन्हें पहली बार मिली हैं या पहले भी कभी मिल चुकी हैं। इसी के आधार पर, एन.आई.ई. विशेषज्ञ को अपना 'सुबह का फटाफट होमवर्क' करना पड़ता है जिसमें कक्षा की पाठ्यचर्या व उनकी योग्यता के हिसाब से समाचार पत्र में दिए गए समाचारों का चयन किया जाता है। इसका एक उदाहरण देना यहाँ ठीक होगा : इन दिनों अन्तर्राष्ट्रीय समाचारों में मिस्र की राजनैतिक खलबली छाई हुई है। मान लीजिए कि दिन विशेष के अखबार की प्रमुख खबर मिस्र को लेकर ही है और उसके केन्द्र में राष्ट्रपति मोर्सी द्वारा निरंकुश सत्ता पाने की कोशिशों का हवाला है, और उस दिन की समय सारणी के अनुसार उच्चतर प्राथमिक कक्षाओं में से किसी एक कक्षा के साथ बातचीत होना है, ऐसे में मेरे जैसे इतिहास के विशेषज्ञ की स्वाभाविक रुचि विद्यार्थियों को प्राचीन मिस्र की 'यात्रा' कराना होता! 'सामान्य युग (कॉमन इरा)' से पहले कई हजार सालों तक मिस्र और उसके आसपास के क्षेत्रों पर फरूनों (फैरो – प्राचीन मिस्र में राजवंश के शासकों की उपाधि) के शासन का सन्दर्भ, राष्ट्रपति के फतवे के खिलाफ मिस्र में हो रहे मौजूदा विद्रोह से उस प्राचीन काल की तुलना और फिर वर्तमान में प्रचलित राजनैतिक आदर्शों पर विद्यार्थियों के साथ चर्चा करना, मेरी योजना में शामिल होते। लेकिन, अपनी कार्ययोजना को लचीला रखना भी बहुत महत्वपूर्ण होता है, कारण कि कई बार एन.आई.ई. विशेषज्ञ को पता नहीं होता कि विषयवस्तु को किस हद तक फैलाया जाए। हाँ, आगे चलकर, दोबारा मुलाकातों के चलते यह समस्या जरूर हल हो जाती है क्योंकि तब हमें इस बात का अच्छा–खासा अनुमान हो जाता है कि स्कूल विशेष के बच्चों को किस स्तर के वार्तालाप में रमाए रखा जा सकता है।

मेरा अपना अनुभव कहता है कि विद्यार्थियों के साथ हमारे वार्तालाप का स्तर, कक्षा के स्तर की बजाय अमूमन शाला के स्तर के अनुसार ही रखा जाना चाहिए। दिलचस्प बात तो यह है कि कई बार बड़े जतन से बनाई गई हमारी योजना खटाई में पड़ जाती है; कभी–कभी थोड़ी–थोड़ी, तो कई बार पूरी तरह से। इसलिए पहले से ही कार्ययोजना बनाने की जरूरत तो है लेकिन वैकल्पिक योजना का साथ होना और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। मिसाल के लिए, उपरोक्त मिस्र प्रसंग को सातवीं कक्षा हेतु पाठ योजना के सन्दर्भ में लें, हमें यह समझ में आ सकता है कि जो बात आप करना चाहते हैं उसके बारे में विद्यार्थियों की जानकारी बहुत कम है – उन्हें शायद यही पता न हो कि ये 'कॉमन इरा' क्या बला है, सो जैसे ही आप उन्हें उस काल के बारे में बताना शुरू करते हैं तो आपको लग जाता है कि उन्हें तो ग्रेगरी कैलेण्डर, ईसा पूर्व समय आदि के बारे में भी नहीं पता। ऐसी सूरत में, एक तरीका तो यह हो सकता है कि बातचीत को सातवीं कक्षा के स्तर के मुकाबले बहुत निचले स्तर पर ले जाते हुए विद्यार्थियों को 'समयरेखा (टाईमलाईन)' की अवधारणा समझाई जाए। फिर उस पर अभी हाल की प्रमुख घटनाओं से शुरू कर अतीत में पीछे की तरफ जाते हुए तमाम महत्वपूर्ण प्रसंगों को अंकित किया जाए। इसके बाद जाकर बच्चों को अपनी चर्चा में शामिल किया जाए और इस तरह उन्हें इस बात का अहसास कराया जाए कि हजारों बरस पहले प्राचीन मिस्र में स्थितियाँ कैसी थीं। जबकि कुछ स्कूलों में बातचीत का यह स्तर, तीसरी कक्षा के विद्यार्थियों के लिए उपयुक्त हो सकता है! इन्हीं बातों के चलते ही एन.आई.ई. सलाहकार का काम रोचक और चुनौतीपूर्ण हुआ करता है।

इसके उलट, किसी स्कूल में हमारा सामना इन मुद्दों से पूरी तरह से परिचित विद्यार्थियों से भी हो सकता है। ऐसा स्कूल एक अभिजात स्कूल भी हो सकता है जहाँ के विद्यार्थियों को न केवल कक्षा में तकनॉलॉजी सुलभ हो जाती है बल्कि उनके घर का माहौल भी उन्हें विषयवस्तु की अच्छी–खासी जानकारी उपलब्ध करा देता है। ऐसी स्थिति में, मुद्दे पर एक सार्थक बातचीत करने के लिहाज से एन.आई.ई. विशेषज्ञ के लिए एक ताजा परिप्रेक्ष्य व वैकल्पिक विचार लाना जरूरी हो जाता है। दरअसल,

इन्हीं परिस्थितियों के मद्देनजर ही एन.आई.ई. विशेषज्ञ को अपना 'सुबह का फटाफट होमवर्क' जमकर करना पड़ता है। एन.आई.ई. एक्सपर्ट के लिए इससे ज्यादा शर्मनाक बात कोई और नहीं हो सकती कि वह अपनी पूरी तैयारी के साथ कक्षा में जाए और यह पाए कि निर्दिष्ट विषय पर विद्यार्थियों का ज्ञान उससे बढ़कर नहीं तो कम से कम उस जितना तो है ही।

कई एन.आई.ई. विद्वानों द्वारा किया जाने वाला एक दिलचस्प प्रयोग था अपनी चर्चाओं में विभिन्न विषयों को एक–साथ गूँथना। खुलासे के लिए, चलिए अपने उसी मिस्र वाले विषय पर बने रहते हैं। इतिहास का एक विशेषज्ञ होने के नाते अगर मैं तकनीकी रूप से भूगोल व नागरिकशास्त्र जैसे सामाजिकविज्ञान के अन्य विषयों में पढ़ाए जाने वाले पहलुओं को अपनी चर्चाओं में शामिल नहीं करूँगा तो मैं एक अच्छे खासे अवसर को अपने हाथ से गँवा रहा होऊँगा। मिसाल के लिए, मिस्र को ही लें। एक तरफ भूमध्य सागर की परिधि पर स्थित होने के कारण पानी के जरिए यूरोप से जुड़ने और दूसरी तरफ रेगिस्तान के सहारे अफ्रीकी महाद्वीप से जुड़ा होने के उसके ये दो विशिष्ट भौगोलिक दिशांक, उसके इतिहास में स्वैज नहर से जुड़ी हालिया घटनाओं से लेकर क्लिओपॅट्रा और सीज़र की त्रासद कथा सरीखी रोमन तथा मिस्री शासकों से सम्बन्धित विभिन्न घटनाओं से जा जुड़ते हैं। ठीक इसी तरह, तानाशाही पर चर्चा के दौरान शासन के विभिन्न स्वरूपों तथा शासन के लोकतांत्रिक प्रादर्शों पर भी बातचीत हो सकती है ताकि विद्यार्थी अपने ज्ञान को एक गहराई देते हुए उसे भलीभांति खंगाल सकें। नतीजतन, कुल मिलाकर ऐसे नए–नए परिप्रेक्ष्य उभरकर आ सकते हैं जो खालिस इतिहास पर टिकी बातचीत के द्वारा उभर नहीं सकते थे।

अपने इन अनुभवों से मैं कई सबक ले सकता हूँ। मुझे विश्वास था कि मेरे व्याख्यानों ने मेरे विद्यार्थियों पर एक चिरस्मरणीय प्रभाव छोड़ा है और मेरे इस विश्वास की पुष्टि होती, जब भी मेरा कोई विद्यार्थी (जिसे मैं निश्चित ही भूल चुका होता) या किसी स्कूल का कोई कर्मचारी (जो प्राय: मेरे व्याख्यान सुनने के लिए मेरी कक्षाओं में आकर बैठ जाता) न केवल मुझे एन.आई.ई. टीचर के बतौर पहचान लेता बल्कि कई बरस पहले लिया गया मेरा वह सत्र भी उन्हें याद रहता। अब यदि वयस्क और अवयस्क दोनों ही मस्तिष्कों पर केवल एक ही सत्र में ऐसी अमिट छाप छोड़ी जा सकती है तो सवाल उठता है कि एक नियमित शिक्षक के बतौर हम लगातार ऐसी ही अमिट छाप भला किस तरह छोड़ सकते हैं। इसका जवाब हमारे उन असाधारण अध्यापकों की तैयारियों में निहित है जो अध्यापक अपनी सच्ची लगन, कड़ी मेहनत, रचनात्मकता और विद्यार्थियों के प्रति अपने अपार स्नेह के बल पर अपने विद्यार्थियों के साथ जुड़ने से पहले बस उन्हें समझने भर के लिए ही अतिरिक्त समय लगाते हैं। मुझ जैसे एन.आई.ई. विशेषज्ञों के लिए बस यही गुर काम आया। क्लास शुरू होते ही जितनी जल्दी हो सके यह ताड़ लेना कि विद्यार्थियों को क्या पता है और क्या नहीं, और इसके बाद उनकी पसन्द–नापसन्द के हिसाब से उनके साथ अपनी बातचीत को आगे बढ़ाते जाना।

एन.आई.ई. विशेषज्ञों के लिए कड़ी मेहनत इस रूप में बनी रही कि हमारी आधार सामग्री निरन्तर परिवर्तनशील थी। यहाँ कोई यह कह सकता है कि अगर यह चुनौती न होती और पाठ्य–पुस्तक जैसी अपेक्षाकृत स्थायी सामग्री का उपयोग अगर स्वीकृत होता तो हम विशेषज्ञ पहले से ही तैयारी कर सकते थे और इस समूचे कार्यक्रम को और भी बेहतर ढंग से चला सकते थे। लेकिन सफल विशेषज्ञ अन्तत: वे ही रहे जिन्होंने इस कठोर परिश्रम के बल पर चुनौती को एक सुनहरे अवसर में बदल दिया, और वह भी कुछ इस अन्दाज में बदला कि बाकियों को लगा मानो दैनिक समाचार पत्र को शैक्षिक सामग्री बनाने से पढ़ाना कुछ आसान हो जाता है। 'मृत' अतीत का निर्वाह करने वाले मुझ सरीखे 'इतिहास' विशेषज्ञ के लिए सामग्री के रूप में दैनिक समाचार पत्र का इस्तेमाल एक

सन्दर्भ में तो बड़ा ही सहज रहा आया – बिना अलग से समझाए, विद्यार्थियों को स्वत: ही यह समझ आ गया कि जिस 'अजीवित' अतीत से उनका पाला पड़ा है उसकी प्रासंगिकता एकदम सामयिक है, जीवित है!

तिस पर तुर्रा यह कि जो चीज एन.आई.ई. विशेषज्ञों के लिए अनिवार्य है वह चीज बाकी सभी शिक्षकों के लिए एक 'विकल्प' के बतौर खुली है। फिर वे चाहे किसी भी स्कूल में क्यों न पढ़ा रहे हों, कोई भी पाठ्यक्रम क्यों न अमल में ला रहे हों या फिर किसी भी स्तर के विद्यार्थियों को क्यों न पढ़ाते हों। तो अगली बार अपने श्रोताओं के साथ संवाद के लिए एक अखबार को सामग्री के बतौर इस्तेमाल करने के बारे में क्या ख्याल है आपका जनाब?



__ऋषिकेश__ वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन के 'इंस्टिट्यूट फॉर असेस्मेण्ट ऍण्ड अक्रेडिटेशन' से सम्बद्ध हैं। गुजरे दस सालों में वे शैक्षिक अनुसन्धान, अध्यापक प्रशिक्षण, संस्थागत मूल्यांकनों के अध्यापन व आकल्पन में संलग्न रहे हैं, जिनमें से आठ साल फाउण्डेशन के साथ गुजरे हैं। जे.एन.यू. नई दिल्ली से भारतीय इतिहास में स्नातकोत्तर उपाधि लेने के बाद वे बंगलौर में टाईम्स ऑफ इण्डिया के एन.आई.ई. कार्यक्रम से जुड़े। इसके चलते बंगलौर शहर के 100 से भी ज्यादा स्कूलों के विद्यार्थियों के साथ उनका सार्थक संवाद बना। उनसे rishikesh@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। __अनुवाद__ : मनोहर नोतानी



08 भाषा का संगीत-संगीत की भाषा

नलिनी रावल

संगीत ब्रह्माण्ड को देता है आत्मा
बुद्धि को देता पंख
कल्पना को देता है उड़ान,
देता हर शै को जीवनदान.
—प्लेटो

संगीत वह सब कुछ अभिव्यक्त करता है
जिसे कहा नहीं जा सकता लेकिन
जिस पर कुछ न कहना भी असम्भव है..
—विक्टर ह्यूगो

संगीत मानव जीवन का अविभाज्य अंग है। इसका प्रयोग हम मनोरंजन, सम्प्रेषण, शिक्षा आदि विभिन्न क्षेत्रों में करते हैं। इस सम्बन्ध में किए गए अध्ययनों से ज्ञात होता है कि संगीत संज्ञानात्मक प्रक्रिया में सहायक होने के साथ–साथ अधिगम के लिए आवश्यक सभी तत्वों को प्रभावित करता है।

मेरा हमेशा से यही मानना है कि भाषा को सीखने–सिखाने के लिए संगीत एक बहुत शक्तिशाली साधन है। फिर चाहे वह शास्त्रीय संगीत हो, लोक संगीत हो, फिल्मी संगीत हो, पॉप संगीत हो या पढ़ते–पढ़ाते समय पृष्ठभूमि में बजने वाली हल्की–हल्की संगीत लहरियाँ हों–इन सभी से भाषा के कौशलों का विकास होता है। इसीलिए अपनी कक्षाओं में मैंने संगीत का बहुत प्रयोग किया है और इसके सकारात्मक परिणाम भी देखे हैं।

बचपन से ही मुझे संगीत में बहुत रुचि थी और घर का वातावरण संगीतपूर्ण था। जहाँ–जहाँ भी पिताजी की बदली होती हम वहाँ के संगीत और भाषा से अपने को आसानी से जोड़ लेते। रेडियो में बच्चों के कार्यक्रम में सिखाए जाने वाले 'महीने के गीत' हम चुटकियों में सीख लेते और अपनी मित्र मण्डली में इन गीतों की प्रतियोगिता करते। आपस में बात करने के लिए कभी–कभी हम बच्चे गा–गाकर बोलने का शगल भी करते। जीवविज्ञान के प्रेक्टिकल रिकार्ड में चित्र बनाते समय विविध भारती या रेडियो सीलोन पर गाने सुनना जरूरी लगता। हमें तानसेन की कहानियाँ सुनाई जाती थीं कि कैसे उनके राग मल्हार गाने से वर्षा होने लगती थी और राग दीपक गाने से दिए जल उठते थे। किंवदन्ती यह भी है कि उनके संगीत को वन्य प्राणी बहुत ध्यानपूर्वक सुनते और मन्त्रमुग्ध रह जाते थे। ऐसी थी उनके संगीत की शक्ति! इसलिए शिक्षा जगत में शिक्षिका बनकर प्रवेश करने पर वहाँ भी संगीत की भूमिका जस–की–तस बनी रही क्योंकि मैं कक्षा की प्रक्रियाओं में संगीत के महत्व एवं उसकी शक्ति से भली प्रकार से परिचित थी। इसी दौरान मैंने कुछ ऐसे लेख भी पढ़े जिनमें यह सुझाव दिया गया था कि संगीत संज्ञानात्मक प्रक्रिया में योगदान देने के साथ–साथ अधिगम को भी प्रभावित कर सकता है एवं शोधकर्ताओं ने पता लगाया है कि संगीत मस्तिष्क के उन विशिष्ट क्षेत्रों को उद्दीपित करता है जो स्मृति, मोटर नियन्त्रण तथा भाषा के लिए जिम्मेदार हैं।

संगीत ही क्यों?

लय,ताल,तुक और गीत–संगीत की आवृति – ये ऐसे स्वयं सिद्ध साधन हैं जो बच्चों के ध्यान और कल्पना को तो अपनी ओर खींचते हैं ही, साथ ही पढ़ाई की मूलभूत अवधारणाओं को आत्मसात करके उन्हें याद रखने में भी सहायक होते हैं। संगीत के प्रयोग से बच्चों का अधिगम हर्षपूर्ण हो जाता है और वे नई जानकारी को आसानी से आत्मसात करने में सक्षम हो जाते हैं। एक वयस्क के रूप

में भी हम इस बात का अनुभव करते हैं।

मेरे विचार से लोगों का ध्यान अपनी ओर खींचने के लिए संगीत का सफल प्रयोग विज्ञापनों में देखने को मिलता है। क्या हम उन लोकप्रिय "जिंगल्स" को कभी भूल सकते हैं जिनमें विज्ञापनकर्त्ताओं ने अनेक वर्षों से अपने उत्पादों के लिए संगीत का सहारा लिया है? "लाइफबॉय है जहाँ, तन्दुरुस्ती है वहाँ", "विक्स की गोली लो, खिच–खिच दूर करो", "बादशाह मसाला" तथा "निरमा...वाशिंग पाउडर निरमा", "हमारा बजाज", या "कर्रम कुर्रम लिज्जत पापड़" आदि लय–ताल निबद्ध 'जिंगल' इसी उद्देश्य" को ध्यान में रखकर बनाए गए हैं कि हम उत्पादों को याद रख सकें। अगर विज्ञापनकर्त्ता संगीत की शक्ति का उपयोग उपभोक्ताओं का ध्यान अपने उत्पादों की ओर खींचने और उन्हें याद रखने के लिए कर सकते हैं तो हम शिक्षक उसी संगीत का उपयोग बच्चों का ध्यान पढ़ाई की ओर खींचने और जो कुछ पढ़ा है उसे याद रखने के लिए क्यों नहीं कर सकते? हम किसी लोक धुन, श्लोक गायन, कविता या फिर फिल्मी गाने का प्रयोग करके बच्चों को भाषायी कौशल एवं अवधारणाएँ क्यों नहीं सिखा सकते? क्योंकि–

- संगीत प्रारम्भिक भाषा कौशलों का विकास कर सकता है। जैसे गीत के बोलों को ध्यान से सुनना श्रवण कौशल का विकास कर सकता है। साथ ही इससे सुनकर सीखने की क्षमता का विकास हो सकता है।
- यह अधिगम को रोचक बनाकर कक्षा में मजेदार वातावरण का निर्माण कर सकता है।
- एकाग्रचित्तता को बढ़ा सकता है।
- स्मरणशक्ति को बढ़ाकर सीखी हुई बात का आवश्यकतानुसार स्मरण करा सकता है।
- मानसिक थकान को कम करके चिन्तन शक्ति का विकास और सृजनात्मकता में वृद्धि कर सकता है।
- बच्चों के पढ़ने, लिखने और सोचने के कौशलों में सुधार ला सकता है।
- बहुसंवेदी अधिगम में सहायता दे सकता है (जैसे श्रव्य–सुनना, दृश्य–नृत्य करना, गति संवेदना–ताली बजाना और स्पर्श–वाद्ययंत्र बजाना)।
- गीत गाने से उच्चारण शुद्ध हो सकता है।
- गीत गाने से शब्द भण्डार में वृद्धि हो सकती है।
- शारीरिक या मानसिक रूप से असमर्थ बच्चों को विशेष रूप से दी जाने वाली शिक्षा पद्धति में संगीत महत्व पूर्ण योगदान दे सकता है।

बस इन्हीं बातों ने मुझे दिशा दी और शुरू हो गया संगीत का प्रयोग शिक्षण में!

पर शुरुआत कैसे हो?

यह सवाल परेशान करता रहा। पर सवाल हैं तो जवाब भी हैं। तो पहल करने के लिए मैंने बच्चों की पाठ्य–पुस्तक में दी गई कविताओं को सरल धुनों में गाना और बच्चों से गवाना शुरू किया। अगले दिन कक्षा में जैसे ही गाना शुरू हुआ एक बच्चा डेस्क पर थाप देने लगा। फिर क्या था। सभी बच्चे तबलची बन गए। कोई अपने टिफिन का डिब्बा बजाने लगा तो कोई चम्मच–गिलास, किसी ने ताली बजाई तो किसी ने पैरों से जमीन पर ताल देना शुरू कर दिया। शोर तो हुआ पर बड़ा आनन्द आया। तभी से कविताओं को गाकर प्रस्तुत करना एक नियमित अभ्यास बन गया, फिर चाहे वह पहली कक्षा हो या बारहवीं।

अब मैंने सोचा कि पाठ्य–पुस्तकों की कविताएँ तो ठीक, लेकिन अगर कुछ नई अवधारणाएँ सिखानी हों तो उसके लिए गीत–संगीत का प्रयोग कैसे किया जाए? तो यह बात समझ में आई कि बच्चों को जो कुछ सिखाना है उस दक्षता से सम्बन्धित तथा बच्चों के स्तर और रुचि वाले कुछ शब्दांश चुने जाएँ ताकि मैं स्वयं ही गीत लिख सकूँ। यह काम इतना कठिन भी नहीं होना चाहिए, क्योंकि आखिर इन गीतों में हम केवल इतना ही तो चाहते हैं न कि–

- वे बच्चों के लिए संगत, अर्थपूर्ण और रुचिकर हों।
- उनकी धुन सरल हो।
- वे आगामी अधिगम के लिए आधार हों।
- वे ज्ञानदायी हों एवं कौशलों का अभ्यास कराएँ।

- वे बच्चों की आयु के अनुकूल हों।

इन मापदण्डों से मुझे सहायता मिली और मैंने गीत लिखने का बीड़ा उठा ही लिया। जल्द ही मुझे इसका अवसर भी मिल गया। मुझे अपने इंग्लिश मीडियम स्कूल में कक्षा दो को दिनों के नाम सिखाने थे। तो मैंने कुछ इस तरह के शब्द चुने जैसे 'छुक–छुक–छुक–छुक चलती रेल' और 'आओ खेलें दिनों का खेल' आदि। इन शब्दों की सहायता से गीत रचा। अब एक ऐसी धुन चाहिए थी जो किसी सरल लोकगीत, बालगीत या फिर प्रसिद्ध फिल्मी गीत पर आधारित हो और रचित गीत पर ठीक बैठती हो। चूँकि यह इंग्लिश मीडियम स्कूल था, इसलिए बच्चे 'लन्दन ब्रिज इज फॉलिंग डाउन.......फॉलिंग डाउन..... फॉलिंग डाउन.. ..' इस गीत से बखूबी परिचित थे। अतः रचित गीत को इसी धुन में गाया और गवाया। इस प्रकार दिनों के नाम सिखाने के लिए जो गीत बना वह यूँ था–

छुक छुक छुक छुक चलती रेल, चलती रेल....
चलती रेल......
छुक छुक छुक छुक चलती रेल, सरपाटी भागी
आओ खेलें दिनों का खेल......दिनों का खेल.....
दिनों का खेल.....
आओ खेलें दिनों का खेल......दिनों का खेल.....
दिनों का खेल.....
हर इक दिन

सोमवार को सोना छोड़ो......सोना छोड़ो.....
सोमवार को सोना छोड़ो, सुस्ती छोड़ो
जागो–जागो स्कूल को दौड़ो....स्कूल को दौड़ो.....
जागो–जागो स्कूल को दौड़ो,घण्टी बज गई

मंगल का दिन बड़ा निराला.....बड़ा निराला....
मंगल का दिन बड़ा निराला, कितना प्यारा
मस्ती में डूबा जग सारा.....हाँ जग सारा..... हाँ जग सारा....
मस्ती में डूबा जग सारा, नाचो गाओ

बुधवार को बुद्धि चमकी.....बुद्धि चमकी.....
बुद्धि चमकी.......
बुधवार को बुद्धि चमकी,पढ़ लो पोथी
सब बच्चों ने ली है ठुमकी.....ली है ठुमकी....
.ली है ठुमकी......
सब बच्चों ने ली है ठुमकी,नाचो तुम भी

बृहस्पति ने हमें सिखाया....हमें सिखाया....हमें सिखाया.....
बृहस्पति ने हमें सिखाया, क्या है सिखाया
पेड़ों का मत करो सफाया.....नहीं सफाया.....नहीं सफाया.....
पेड़ों का मत करो सफाया, इनको बचा लो

शुक्रवार को कहो शुक्रिया......कहो शुक्रिया.....
.कहो शुक्रिया.......
शुक्रवार को कहो शुक्रिया, अपने प्रभु का
प्रभु ने क्या कुछ हमें दिया.......हमें दिया.......
हमें दिया.....
प्रभु ने क्या कुछ हमें दिया, सोचो सोचो

शनिवार को आधी छुट्टी ....आधी छुट्टी.......आधी छुट्टी.....
शनिवार को आधी छुट्टी,आधी छुट्टी
कम पढ़ते हम पोथी पट्टी ....पोथी पट्टी......पोथी पट्टी.......
कम पढ़ते हम पोथी पट्टी,पोथी पट्टी

आखिर आया है रविवार......हाँ रविवार......हाँ रविवार......
आखिर आया है रविवार, छुट्टी छुट्टी
खेलो,खाओ,झूमो यार.......झूमो यार........झूमो यार.......
खेलो, खाओ, झूमो यार, छुट्टी छुट्टी

बच्चे एक कतार बनाकर नाचते–गाते, उछलते–कूदते,

ताली बजाते एक रेलगाड़ी की तरह चलने लगे और खेल–खेल में दिनों के नाम सीख गए !

बाद में मैंने मात्रा, संयुक्त व्यंजन आदि अवधारणाओं पर भी गीत लिखे और कक्षा में उनका प्रयोग किया ।

(इनमें से कुछ गीतों को अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन द्वारा निर्मित सी.डी. "हू–ब–हू" में सुना/देखा जा सकता है। फाउण्डेशन की कुछ अन्य सी.डी. भी हैं जिनमें हिन्दी भाषा सम्बन्धी कुछ और गीतों को सुना/देखा जा सकता है।)

अन्य विषयों में संगीत का प्रयोग

एक बार उत्तरप्रदेश की गणित की पाठ्य–पुस्तक में मैंने "भिन्न" पर दो गीत देखे जो इस प्रकार थे–

अ) पापा जी बाजार से आए, संग में एक सेब ले आए
चुन्नी बोली मैं खाऊँगी, मुन्नी बोली मैं खाऊँगी,

बँटवारा अब कैसे हो, सेब एक है लड़की दो, इतने में आई नन्हीं राधा, सुझाया उसने आधा–आधा ।

ब) बाबा लाए एक तरबूज, बोले चखकर खाओ खूब, उस घर में हैं लड़के चार, कैसे बाँटें करें विचार,

बाबा बोले आओ यार, इसके टुकड़े कर दें चार, अलग–अलग तुम खाओ भाई, इसको ही कहते चौथाई ।

इन गीतों से प्रेरित होकर मैंने "जोड़" पर एक गीत लिखा और धुन वही रखी.... लन्दन ब्रिज इज फॉलिंग डाउन... ...वाली ।

जोड़ का गीत

ठेलमठेल भई ठेलमठेल,
ठेलमठेल भई ठेलमठेल,

आओ खेलें जोड़ का खेल,
आओ खेलें जोड़ का खेल,

एक है मुर्गी अण्डे चार,
एक है मुर्गी अण्डे चार,

कुल हैं कितने बोलो यार ?

हो गए पाँच, सुन मेरे यार ।

गणित पढ़ाने वाली मेरी सहेली को यह गीत बहुत पसन्द आया और फिर अन्य विषयों की शिक्षिकाओं को भी लगा कि उन्हें भी अपने–अपने विषयों में इस प्रकार का प्रयास करना चाहिए। उनके उत्साह को देखकर मुझे इस बात का विश्वास हो गया कि संगीत का प्रयोग सभी विषयों के शिक्षण–अधिगम के लिए किया जा सकता है।

2001–2002 के आसपास जब कक्षा में पढ़ने–पढ़ाने के लिए कम्प्यूटर का प्रयोग शुरू हुआ तब तो बच्चों को और भी मजा आया। कम्प्यूटर लैब में जाकर अपनी आवाज में गाना रिकार्ड करना, उसका प्रयोग अपने पॉवर पॉइण्ट प्रेजेण्टेशन में करना, खुद ही गाने लिखने और उसे संगीतबद्ध करने का प्रयास करना, संगत के लिए हारमोनियम, तबला, मृदंग, कैशियो, वायलिन आदि का प्रयोग करना–इन सबसे बच्चों की सृजनात्मकता को नए आयाम मिले और मुझे मिली अपूर्व तृप्ति।

कभी–कभी ऐसा भी हुआ कि गीत लिखने या उसकी धुन बनाने में मुश्किल हुई। ऐसे में मैंने अपने अक्षय बैंक यानी बच्चों का सहारा लिया। उन्हें मैं विषय दे देती और छोट–छोटे गीत लिखने को कहती। चार–पाँच दिनों के बाद जो गीत सामने आते उन्हें मिला–जुलाकर एक अन्तिम रूप दे दिया जाता। इसमें बच्चे भी मदद करते। जो बच्चे गीत नहीं लिख पाते थे वे धुन बनाने की कोशिश करते। अपने जाने–पहचाने गीतों की धुनों पर वे इन गीतों को बिठाते। अपने लिखे और स्वरबद्ध किए हुए गीतों को गाने में बच्चों को जितना आनन्द मिलता उतना ही गर्व भी महसूस होता। बच्चों की प्रतिभा को मुखर करने का कितना सशक्त साधन था यह !

यह तो हुई गीत लिखने, धुन बनाने और उन्हें गाने की बात। इसके अलावा भी मैंने संगीत का प्रयोग अपनी कक्षाओं में किया है। एकाध उदाहरण देकर बात स्पष्ट करना चाहूँगी। जैसे शास्त्रीय वाद्य संगीत का एक छोटा–सा टुकड़ा कक्षा में बजाना और बच्चों से कहना कि उसे सुनकर उनके मन में जो भी विशेषण शब्द आएँ उन्हें लिख लें। बाद में वे

उन शब्दों को आपस में पढ़कर सुनाते, उसके अर्थ और विभिन्न प्रयोगों पर बातचीत करते और अपना शब्द ज्ञान बढ़ाते। अगर बड़ी कक्षा होती तो अपने लिखे हुए शब्दों में जो सूक्ष्म भेद है, उस पर चर्चा करने को कहा जाता जैसे पीड़ा–व्यथा या शान्त–शान्ति का बारीक अन्तर।

एक गतिविधि और भी है जो बच्चों को बहुत पसन्द है। किसी गीत को कक्षा में एक बार बजाकर बच्चों से उसे ध्यानपूर्वक सुनने को कहना। बाद में उन्हें इसी गाने का हैंडआउट देना जिसमें बीच–बीच में खाली स्थान हों। बच्चे अपनी याददाश्त का प्रयोग करके इन रिक्त स्थानों को भरते और फिर उस गीत को गाने का प्रयास करते। इसी में जरा –सा परिवर्तन करके मैं कुछ बड़े बच्चों से कहती कि वे गीत में आए मूल शब्दों के स्थान पर कोई और संगत शब्द रखें। लेकिन तुक–मात्रा आदि का ध्यान रखें। इस प्रयास ने अनेक आशु–कवियों को भी जन्म दिया !

इसी दौरान हमने स्कूल में प्रार्थना सभा के शुरू होने से पहले, मिड डे मील के दौरान और छुट्टी की घण्टी बजने के बाद हल्का–हल्का संगीत बजाना भी प्रारम्भ कर दिया। इस प्रयोग को भी बच्चों और अभिभावकों ने बहुत सराहा।

भाषा शिक्षण में संगीत का प्रयोग तरह–तरह से किया जा सकता है। हमें उन तरीकों का पता लगाकर अपने सन्दर्भ के अनुसार सर्वाधिक उपयुक्त तरीके को अपनाना चाहिए। यकीन मानिए, ऐसा करने से विद्यार्थी अपनी भाषा की कक्षा और शिक्षक को कभी नहीं भूलेंगे क्योंकि ये गीत उनके मानस में आने वाले कई वर्षों तक गुंजायमान रहेंगे।

तो साथियों, अगर संगीत, अधिगम की शुरुआत करने, बच्चे की रुचि और उसके सोचने की क्षमता को बढ़ाने में सक्षम है तो फिर इन्तजार किस बात का? बाँहें पसारिए और समेट लीजिए इस असीम शक्ति को अपने में !

संगीत कला का वह रूप है जो भाषा से भी श्रेष्ठ है –हर्बी हैंकॉक।

संगीत भाषा की आत्मा है –मैक्स हींडल।

(यह लेख वर्ष 2010 – 11 में पहली बार *www.teachersofindia.org* पर प्रकाशित हुआ था।)



नलिनी रावल *अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन में 2003 से सलाहकार के रूप में कार्यरत हैं तथा फाउण्डेशन के सभी विभागों को हिन्दी भाषा सम्बन्धी सहायता प्रदान करती हैं। उन्होंने मैसूर विश्वविद्यालय से हिन्दी में स्नातकोत्तर उपाधि स्वर्ण पदक के साथ प्राप्त की है। मूलतः वे शिक्षिका हैं और उन्हें केन्द्रीय विद्यालय समेत कई अन्य प्रसिद्ध निजी विद्यालयों में हिन्दी अध्यापन करने का 31 साल का दीर्घ अनुभव है। वे हाईस्कूल तथा धन दो की कक्षाओं को हिन्दी पढ़ाती रही हैं। उन्हें अध्यापन कार्य बहुत प्रिय है तथा भाषा शिक्षण हेतु वे अभिनव तरीकों को अपनाती रही हैं। उनके लेख,कविताएँ केन्द्रीय विद्यालय संगठन की पत्रिकाओं तथा हिन्दी की अन्य पत्र–पत्रिकाओं में छप चुके हैं। उनकी वार्ताएँ आकाशवाणी के भोपाल एवं बंगलौर केन्द्रों से प्रसारित हो चुकी हैं। बच्चे की भाषायी क्षमताओं ने उन्हें सदा ही आकर्षित किया किया है तथा उनका मानना है कि "बच्चा उस समय और सन्दर्भ में भाषा सीखता है जब वास्तव में उसका ध्यान भाषा पर केन्द्रित नहीं होता।" उनसे* nalini.ravel@azimpremjifoundation.org *पर सम्पर्क किया जा सकता है।*



09 भाषा शिक्षण में मेरे प्रयोग : प्रोजैक्ट विधि से अँग्रेजी पढ़ाना

निवेदिता बेदादुर

छठी कक्षा में मेरे पहले दिन तीस आतुर चेहरों से मेरा पाला पड़ा। बस फिर क्या था वे और भी बेलगाम हो गए और चिल्लाकर–चिल्लाकर मेरी डेस्क के चारों ओर हुड़दंग मचाने लगे, मिस, मिस, मिस! क्या हम अपनी किताबें अपने बस्ते में से बाहर निकाल लें? आज आप कौन–सा पाठ पढ़ाने वाली हैं? हमारी टीचर कहाँ हैं? क्या आप हमें अँग्रेजी पढ़ाएँगी? आरहन अपनी स्पेलिंग नहीं सीखता। सीमा को डिक्टेशन में अच्छे नम्बर नहीं आते। क्या हमें रोज डिक्टेशन देकर पढ़ाया जाएगा? अतुल अपने सवाल जवाब कण्ठस्थ याद कर लेता है।

मैं यहाँ क्यों कर हूँ? मैं हैरत से सोचने लगी। मैं बारहवीं कक्षा में क्यों नहीं हूँ जहाँ मैं प्रभावोत्पादक लेखन या पत्रलेखन की विभिन्न शैलियों पर चर्चा कर रही होती? इस शैतान टोली से भला कैसे निपटूँगी? वे तो अपनी जगह टिककर बैठे भी नहीं रह सकते थे। क्या मैं चिल्लाकर इन्हें शान्त करूँ, इन्हें डराऊँ? मुझे क्या करना चाहिए? उधर बच्चों का शोर बढ़ता जा रहा था और इधर अनिर्णय की इस मनस्थिति में, अचानक मुझे एक तरकीब सूझी। मैं बोली, "चलो, स्कूल के लॉन में उस बोधिवृक्ष के नीचे चलकर बैठें। तुम लोग मेरी सेना मैं तुम्हारी सेनाध्यक्ष। चलो, पूरे अनुशासन में सीढ़ियाँ उतरें।" बच्चों को आइडिया पसन्द आया। उनके लिए शब्दों के हिज्जे सीखने से तो नया कुछ करना बेहतर था। इधर वे मेरे पीछे चल रहे थे उधर मेरे दिमाग में कुछ योजना खदबदा रही थी। हम लोग बोधिवृक्ष के नीचे जा विराजे और बच्चों की चटरपटर जब कुछ धीमी पड़ी तो मैंने उनसे कहा हम लोग पाठ्य–पुस्तक की पूरी पढ़ाई, प्रोजैक्ट्स के जरिए करेंगे। पुस्तक का हर पाठ एक प्रोजैक्ट होगा और सारे प्रोजैक्ट एक–दूसरे से अलग होंगे। तिस पर बहुत पूछताछ हुई – सवाल–जवाब को लेकर, अर्थ समझने को लेकर, हिज्जों और डिक्टेशन के सम्बन्ध में। हमने तय किया कि हम यह सब करेंगे लेकिन पहले हम अपने प्रोजैक्ट्स पूरे करेंगे।

पहला प्रोजैक्ट

पहला प्रोजैक्ट क्या था? पहला पाठ था कोलम्बस और अमेरिका की खोज। हमने इस पर एक नाटक करने का निर्णय लिया। सो हमने समूह बनाए। एक समूह ने पोस्टर बनाए, दूसरे समूह ने मंच सामग्री बनाई, तीसरे समूह ने संवादों को कथावस्तु से जोड़ा और अन्तिम चौथे समूह ने वेशभूषा व साजसज्जा का काम सम्भाला। उस समय लोग क्या पहनते थे? वे क्या खाते थे? उस समय का जहाज कैसा दिखता था? अपने खोजी अभियान के लिए वे लोग अपने साथ क्या–क्या चीजें ले जाया करते थे? ऐसे कई सवाल हमें परेशान किए दे रहे थे। हम लोग पुस्तकालय गए और इनमें से कुछ सवालों के जवाब ढूँढ़ लाए। हमने किताबें छान–छानकर चित्र बनाए और संवाद लिखे। अतुल रुआँसा हो गया था क्योंकि वह कोलम्बस बनना चाहता था। पोस्टर पसन्द न आने पर वीणा उन्हें बनाने वाले समूह से लड़ पड़ी थी। मुझे मध्यस्थता करनी पड़ी, बच्चों को शान्त कराना पड़ा और नियम बनाने पड़े लेकिन कुल मिलाकर हम लोगों को मजा बहुत आया। इसके बाद हमने एक छोटा सा प्रहसन किया। कहीं हम लड़खड़ाए, तो कहीं हमारी साँसें ऊपर–नीचे हुईं, और कभी हम हड़बड़ी में अपने लिखे हुए संवाद देखने लग जाते; इस तरह हमने सीखा और वल्लाह क्या सीखा!

बाद वाले प्रोजैक्ट फिर खटाखट हो चले

एक पाठ जैविक विकास पर था। उन दिनों एलसीडी प्रोजैक्टर नहीं होते थे। हमारे पास एक ओवरहेड प्रोजैक्टर था सो उसके लिए हमने जैविक विकास के विभिन्न चरणों पर ट्रांसपरंसियाँ बनाईं और एक सेमिनार का आयोजन

किया। प्रत्येक समूह ने जैविक विकास के किसी एक चरण पर अपना प्रेजेण्टेशन दिया। मुझे नहीं लगता कि आज के इस कट–कॉपी–पेस्ट युग में यूनिवर्सिटी के विद्यार्थी भी इससे बेहतर प्रेजेण्टेशन बना सकते हैं। निश्चित ही हमें मुश्किल सवालों का सामना करना पड़ा – सामग्री कहाँ से लाएँगे, चित्र और सीधी सरल व्याख्याएँ कहाँ से मिलेंगी? ऐसे में हमारी योजना में पुस्तकालाध्यक्ष को भी शामिल करना जरूरी था। वे बड़े दयालु निकले। अगले प्रोजैक्ट और हम किताबी कीड़ों के अगले आगमन की सूचना उन्हें पहले से ही दे दी जाती। बस फिर क्या था, हर बार वे अपनी तमाम किताबों से सारी सम्भावित जानकारी बटोरकर हमारे आगामी धावे के लिए तैयार मिलते। जैसे–जैसे साल बीतते गए, मुझे कम्प्यूटर लैब का अतिरिक्त प्रभार दे दिया गया, हम लोगों ने पॉवरपॉइण्ट पर अपना हाथ साधना शुरू कर दिया और डेण्टल हेल्थ से मेण्टल हेल्थ तक फैले तमाम विषयों पर स्लाइडें बना–बनाकर इस विधि की तमाम सम्भावनाएँ खंगाल लीं। यहाँ तक आते–आते मैं और बच्चे अपनी इस खोज–यात्रा के सहयात्री बन चुके थे।

अपनी खोजयात्रा के हम सहयात्री

अगले पाठ का हम क्या करें? अगला पाठ है किस विषय पर? सेहत और साफ–सफाई। चलो, एक पार्टी करते हैं! इसमें एक सलाद शो का आयोजन करते हैं! इसके चलते चर्चा चल पड़ी – समूह–निर्माण, किस प्रकार के सलाद हम ला सकते थे, खाद्यपदार्थ और कैलोरी, स्वास्थ्यकर खाना और जंक फूड। सो बच्चों ने समूह बनाए, सामान की लिस्ट बनाई, अपने घरवालों से सलाह–मशविरा किया, फिर वे सारा सामान लेकर आए, पाक विधियों पर चर्चा की और उन्हें दर्ज किया, फिर उन्हें अन्तिम रूप देकर उनका परीक्षण किया, उन्हें बदल–बदलकर स्थिर किया, उन्हें चखा, फिर इसके बाद उनके रेसिपी चार्ट बनाए, उनके ऊर्जा–मूल्य (कैलोरिफिक वैल्यू) लिखे और अन्त में सभी अध्यापकों के लिए एक 'सलाद शो' किया ताकि वे स्वाद लें और मजें करें। अध्यापकों ने उस दिन छककर खाया और सुनते हैं कि वह दिन सभी कक्षाओं के लिए बड़ा मजेदार रहा!

सारा जहाँ हमारा

ऐसा भी समय आया जब हमने सर्वे किए – अध्यापकों की भोजन–सम्बन्धी आदतें, धूम्रपान करने वाले अभिभावकों का सर्वे, टीवी दर्शन का सर्वे, पौधे–प्रेमियों का सर्वे। पाई चार्ट और बार ग्राफ्स के द्वारा हमने इन सर्वेक्षणों के परिणाम दर्शाए। संक्षिप्त रिपोर्टें बनाकर हमने उन्हें वितरित किया। स्कूल पत्रिका में इन रिपोर्टों को छापकर हमने धूम्रपान, खाने की खराब आदतों और बेमतलब टीवी देखने के कुप्रभावों जैसे मुद्दों के प्रति जागरूकता बढ़ाने का प्रयास किया।

समस्या और समाधान

हमने हर प्रकार की समस्या पर गौर करना शुरू किया और अखबारों में सम्पादक के नाम पत्र लिखकर उन्हें हल करने की कोशिश की। हमारे स्कूल के आजू–बाजू में दो झुग्गी बस्तियाँ थीं और जब भी स्कूल प्रशासन, स्कूल परिसर के चारों तरफ एक दीवार खड़ी करने लगता, आधी रात के वक्त आसपास के झुग्गीवासी आकर उसे तोड़ देते, कारण कि दीवार बन जाने के चलते उन दोनों झुग्गी बस्तियों के बीच के आवागमन में बाधा पहुँचती। इसके अलावा, हमारे स्कूल के मैदान के दूर वाले हिस्से का इस्तेमाल, झुग्गीवासी शौचालय के बतौर करने लगे थे। तिस पर हमने इन सब स्थितियों का हवाला देते हुए इण्डियन एक्सप्रेस के सम्पादक के नाम पत्र लिखे। एक छात्रा एक्सप्रेस कार्यालय के पास ही रहती थी, सो उसने उन पत्रों को एक्सप्रेस के कार्यालय तक पहुँचाने का बीड़ा उठाया। सम्पादक ने



जब सातवीं कक्षा के विद्यार्थियों (अब तक हम छठी कक्षा से सातवीं कक्षा में आ गए थे) के द्वारा लिखे गए पत्रों का इतना बड़ा जखीरा देखा तो वे भी स्तब्ध रह गए। फलस्वरूप उन्होंने उनमें से कुछ पत्र चुनकर, सेंध लगी दीवार के चित्रों सहित अपने अखबार में छाप दिए। बस फिर क्या था, कुछ ही दिनों में झुग्गी बस्ती में शौचालय बन गए। झुग्गीवासियों के आने–जाने का रास्ता छोड़ते हुए, स्कूल के प्रांगण की दीवार की भी मरम्मत कर दी गई। बस्ती के बच्चों को तो एक प्रकार से स्कूल के मैदान में क्रिकेट खेलने का एक खुला न्यौता ही मिल गया। कुछ काम पार्षद द्वारा सम्पन्न हुए, कुछ सेना की उस इकाई द्वारा जिनके बच्चे हमारे स्कूल में पढ़ते थे और कुछ काम दोस्तों ने कर दिए। और इन सारे कामों की प्रेरणास्रोत थी रॉबर्ट फ्रॉस्ट की एक कविता!

बच्चों को सक्रिय होकर जीवन के कुछ अनुभव हासिल करने चाहिए ताकि वे शिक्षित हों!

सवाल यह था कि इस सबसे मेरे बच्चे अँग्रेजी सीख रहे थे क्या? इसके नतीजतन, क्या उनके हिज्जे दुरुस्त हो रहे थे? क्या वे सवाल–जवाब लिख रहे थे? क्या वे निबन्ध व पत्र लिख रहे थे? इसका जवाब 'हाँ' और 'न', दोनों ही था। हम यह तो जानते थे कि हमें ये सारे अभ्यास तो करने ही पड़ेंगे क्योंकि यह सब परीक्षा में पूछा जाने वाला है। सो हमने एक बीच का रास्ता निकाला – परीक्षा में आने वाले ऐसे सारे सवाल हम कभी अपने किसी प्रोजैक्ट के बीच में करेंगे या फिर कुछ आगे चलकर। लेकिन अब मैं सोचती हूँ कि हिज्जे श्रुतलेखन (स्पेलिंग डिक्टेशन) से क्या मेरे बच्चे कुछ सीख पाए, या फिर वास्तविक पात्रों को लेकर वास्तविक लोगों के लिए रिपोर्ट या पत्र लिखने के जरिए ही वे अपने हिज्जे भी सीखते चले? ऐसे में पाठ खत्म होने के बाद नियमित रूप से हम अपने बच्चों से जो सवाल–जवाब लिखने को कहते हैं उस सबका भला क्या मतलब है? अपने विचार व्यक्त करने, नाटिकाओं के लिए कथानक, संवाद व पोस्टर जैसी मौलिक रचनाएँ करने तथा सर्वेक्षणों के लिए उपयुक्त प्रश्न लिखने व सेहत और साफ–सफाई के नुस्खे लिखने जैसे अभ्यास क्या बेहतर नहीं होते? फिर चाहे वह समूह में ही क्यों न किए गए हों, लेखन की एक छोटी–सी मौलिक कृति में भी मूल पाठ की सीमाओं से पार चले जाने की सम्भावनाएँ होती हैं। हम पाठ/इबारत को पूरा करते हुए महज लिपिबद्ध ही नहीं करते हम उसका खुलासा करते हुए उसकी व्याख्या करते हैं! हम उसका पुनरुद्धार करते हुए उसे ताजा बनाते हैं। और हमारा यह सारा उद्यम कहीं निर्वात में नहीं होता बल्कि अन्य कक्षाओं में होने वाली घटनाओं से उसका कुछ नाता जरूर बनता है। स्वास्थ्य और स्वच्छता कोई निरे प्रसंग या लेख नहीं जिन्हें हम श्रुतलेखन के द्वारा लिपिबद्ध करते हैं। बल्कि यह सारा उद्यम एक जीती–जागती रचना है जिसका सम्बन्ध, विज्ञान की कक्षा में शिक्षक द्वारा दिए गए व्याख्यान, अखबारों में लिखी खबरों और टीवी पर हमारे द्वारा सुनी गई बातों से है।



मेरे बच्चे क्या सीख रहे थे? वे परस्पर–सहयोग के द्वारा काम करने, तरह–तरह की क्षमताओं को स्थान व सम्मान देने, किसी मुद्दे पर तर्क–वितर्क करने, रिपोर्ट, विवरण लिखने, जानकारी खोजने और इस जानकारी को विभिन्न रूपों में प्रस्तुत करने जैसे कौशल सीख रहे थे। मैंने सोचा, ये सारे कौशल क्या अन्य विषयों के लिए भी उपयोगी हो सकते हैं। फिर एक दिन मेरी सहकर्मी ने मुझसे पूछा, "ये तुम बच्चों को भला क्या सिखा रही हो? तिस पर घबराकर

मैंने पूछा, “वे क्या एकदम बेलगाम हो गए हैं?” बात यह थी कि इसके पहले कई शिक्षक मेरी कक्षा में मचने वाले हल्ले की शिकायत करते आए थे। मेरी प्राचार्य भी मुझसे पूछ चुकी थीं कि मेरी कक्षा में यह सब क्या होता है, और मैं उन्हें अपनी सफाई दे चुकी थी। लेकिन मेरी इस सफाई से वे बिलकुल भी आश्वस्त होती न लगीं और उन्होंने बड़ी सख्ती से मुझसे कहा कि इन बच्चों के अभिभावकों की नाराजगी का सामना करने के लिए मैं तैयार हो जाऊँ। लेकिन रजनी ने तो मुझे एक सुखद आश्चर्य में डाल दिया था। “नहीं, वे अराजक तो नहीं हुए हैं, लेकिन तुम उन्हें साँख्यिकी क्यों पढ़ा रही हो?” लेकिन मैं तो ऐसा कुछ भी नहीं कर रही थी। मैं तो बस सर्वेक्षणों का विश्लेषण करते हुए उन्हें चित्रात्मक रूप से प्रस्तुत कर रही थी और बच्चों को आँकड़ों का तुलनात्मक विश्लेषण कर उन्हें ग्राफ पर अंकित करना सिखा रही थी। रजनी को इससे अपनी साँख्यिकी की कक्षा में पढ़ाने में बड़ी मदद मिली लगती थी।

बस फिर क्या था, अगले कुछ दिनों के लिए लंच के दौरान हमने अपने इन नन्हे बन्दरों को स्कूल के प्रांगण की दीवार पर बैठा दिया और उनसे पर्यावरण को प्रदूषित करने वाले भारी व छोटे वाहनों की गिनती करने के लिए कहा ताकि कक्षा में हम प्रदूषण के कुप्रभावों पर बात कर सकें। रजनी और मैंने तय किया कि जब भी सम्भव होगा हम विज्ञान और भाषा की कक्षा को एक साथ जोड़ेंगे। बच्चों के साथ हुई हमारी इन चर्चाओं के फलस्वरूप बच्चों ने आँकड़ों के साथ अपनी रिपोर्टें बनाईं। इसके चलते, हमारे बच्चों ने एक ठोस व प्रामाणिक दलील पेश करने की काबिलियत आ गई थी। इस दौरान, बच्चों ने भाषा के अभ्यास के साथ–साथ अवलोकन करने, आँकड़े जुटाने, विश्लेषण करने प्रमाण खोजने, उसे दर्ज करने और अन्तत: अपनी प्रामाणिक दलील प्रस्तुत करने जैसे वैज्ञानिक कौशल भी सहज ही हासिल किए।

मैं अक्सर सोचा करती कि क्या हम अपने बच्चों को अँग्रेजी महज एक विषय के बतौर पढ़ाते हैं या फिर इसके जरिए हम उन्हें अपने बूते कुछ सोच पाने का कौशल भी सिखा रहे होते हैं? भाषा की कक्षा में पाठ्य–पुस्तक पढ़ाना क्या इतना जरूरी होता है? आखिर मैं क्या पढ़ा रही थी? एक पाठ्य–पुस्तक या फिर भाषा–कौशल, एक अध्याय या फिर सोचने का कौशल? पाठ्य–पुस्तक की सीमाओं में मेरा दम घुटता लगता था। मैं अपने बच्चों को उड़ते हुए देखना चाहती थी और यह उड़ान मैं उन्हें खुद अपने बल पर पाते हुए देखना चाहती थी। पाठ्य–पुस्तक के किसी अध्याय का बच्चे की दुनिया से कुछ रिश्ता बनता भी है या नहीं? क्या कोई अध्याय बच्चे को अपने खेल के मैदान के बारे में सोचने की फुर्सत देता है? क्या किसी अध्याय के चलते बच्चे को विज्ञान, गणित व भूगोल सीखने में मदद मिली है? क्या अध्यायों का रिश्ता बच्चों की पसन्द–नापसन्द, उनके शौक और उनके मित्रों से बनता है? क्या वाकई कुछ हिज्जे, कुछ सवालों के जवाब, शब्द–निर्माण या व्याकरण पर कुछ अभ्यास हमारा विचार–कौशल, या केवल भाषा कौशल ही सही, बढ़ाते हैं? दरअसल भाषा कौशल होता क्या है? क्या कुछ नियमों के जमावड़े को हम भाषा कौशल का नाम दे सकते हैं? या फिर उनका सम्बन्ध सही शब्द, सही जुमला चुनने और हमारे विचारों को एकदम सही और सटीक ढंग से लिखने, किसी खास मौके पर मौजूद एक खास तरह के समूह को क्या और कैसे बोलने के ज्ञान से होता है? अब यदि मेरे विद्यार्थियों के लिए इन कौशलों को अर्जित करना जरूरी है तो क्या स्कूल के भीतर और स्कूल के बाहर उनके जीवन से जुड़ीं रचनात्मक गतिविधियाँ हमारे इस मकसद को बेहतर ढंग से पूरा नहीं करतीं?

इस सोच के मद्देनजर पाठ्य–पुस्तक मुझे एक ऐसा सहायक लगी जिसके जरिए अध्यापक अपने विद्यार्थियों की सोच को प्रेरित कर सकता है, शब्द–भण्डार व पढ़ने और लिखने का कौशल बढ़ाने सम्बन्धी मार्गदर्शन दे सकता है। शिक्षक का काम है अपने विद्यार्थियों में सोचने–विचारने का सहज कौशल विकसित करना, अपने विचारों को संगठित करते हुए व्यक्त करने का कौशल विकसित करना, अपनी दलील को सुगठित कर पाने का कौशल विकसित करना, किसी लेख या रिपोर्ट की रूपरेखा के बारे में सोचकर

लक्षित पाठकवर्ग, उद्देश्य और विषयवस्तु के अनुसार अपने विचारों को स्पष्ट और सटीक रूप से व्यक्त कर पाने का कौशल विकसित करना। भाषा–शिक्षक अन्य विषयों से कटकर अपना काम नहीं कर सकते। देखा जाए तो विषय कोई भी हो – गणित, विज्ञान या भूगोल – भाषा ही सब विचारों की जननी होती है। ऐसे में विद्यार्थियों को सोचने की शक्ति के साथ लैस करना क्या भाषा शिक्षक का कर्तव्य नहीं बनता? और यदि ऐसा है तो फिर भाषा को सक्रिय होकर ऐसी चीजें करनी होंगी जिनका नाता बच्चे की दुनिया, उसकी मुश्किलों, अन्य विषयों सम्बन्धी उसके ज्ञानार्जन से बनता है। लेकिन ऐसा तभी होगा जब हम पाठ को एक ऐसे तैराकीबोर्ड के बतौर बरतेंगे जिससे उछलकर हम जीवन सागर में एक डुबकी लगा सकते हों!



निवेदिता *वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय के विश्वविद्यालय संसाधन केन्द्र में एकेडमी एण्ड पैडॉगॉजी विशेषज्ञ के बतौर काम कर रही हैं। भाषिक ज्ञानार्जन में मोबाइल फोन के इस्तेमाल पर अनुसन्धान में उनकी रुचि रही है और एस.एम.एस. के द्वारा भाषा ज्ञान विषय पर उन्होंने कुछ प्रयोग भी किए हैं, और इस पर उनका शोध अध्ययन ब्रिटिश काउंसिल द्वारा प्रकाशित कण्टीन्यूइंग प्रोफेश्नल डेवलप्मेण्ट – लेसन्स फ्रॉम इण्डिया नामक पुस्तक में शामिल है। भारत व भारत के बाहर, केन्द्रीय विद्यालयों में माध्यमिक व उच्चतर माध्यमिक स्तर पर अँग्रेजी पढ़ाने का उनका 29 वर्षीय अनुभव है। अपने अब तक के कॅरिअर में वे केन्द्रीय विद्यालयों और एक निजी सी.बी.एस.ई. स्कूल में उप–प्राचार्य व प्राचार्य के पद पर भी कार्य कर चुकी हैं। केन्द्रीय विद्यालय, काठमाण्डू में अध्यापन के दौरान उन्हें 'शिक्षक प्रोत्साहन पुरस्कार' भी मिल चुका है। उनसे nivedita@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।* ***अनुवाद*** *: मनोहर नोतानी*



10 रचनात्मक शिक्षण एवं तृप्ति

एन. नागराजू

सन्दर्भ और चुनौती

मेरे जीवन के अब तक के सबसे ज्यादा तृप्तिदायक दिन वे हैं जब मैं आन्ध्र प्रदेश में अनन्तपुर जिले के दूरदराज के एक गाँव में प्राथमिक स्कूल के बच्चों को पढ़ाया करता था। सरकारी प्राथमिक स्कूल के शिक्षक के रूप में छह वर्ष पूरे करने के बाद आज मैं यह बात कह सकता हूँ। अपनी नौकरी के पहले दिन से ही मुझे यह एहसास हुआ कि अपनी पढ़ाई के दौरान जो भी उत्कृष्ट तरीके मैंने सीखे थे उन्हें कक्षा में लागू करना मुश्किल था। न तो यह सही समय था और न ही सही सन्दर्भ। लेकिन मुझे यकीन है कि जो ज्ञान मैंने अपनी पढ़ाई के दौरान प्राप्त किया वह सभी प्रकार की स्थितियों से निपटने के लिए काफी अच्छा है। अपनी सेवा के प्रारम्भिक वर्षों में, जब मुझमें व्यवस्था और समुदाय की माँगों का सामना करने साहस नहीं था; मैंने स्थितियों से समझौता किया एवं बड़ी व्यवस्था का हिस्सा बन गया। खैर, अधिगम के परिणामों को लेकर समुदाय की स्कूल से जो माँगें होती हैं, उन्हें जल्दी पूरा करने के लिए गति पकड़ने में मुझे कुछ वर्ष लग गए। एक "प्रारूपिक" गाँव के स्कूल के सम्बन्ध में मेरे कुछ अवलोकन इस प्रकार हैं:

1. कई माता–पिता कुछ ही समय के भीतर (एक सप्ताह भर में) अपने बच्चों के अधिगम के परिणामों को देखना चाहते हैं।
2. कई बच्चे पाठ्य–पुस्तक में दी हुई कविताओं का पाठ बस पाठ करने के लिए कर देते हैं (किसी वर्ण, अवधारणा, सन्दर्भ और अर्थ के परिचय पर कोई ध्यान न देते हुए)।
3. वे पाठ्य–पुस्तक में सूचीबद्ध सभी शब्दावलियों को उचित ज्ञान या पहचान के बिना मौखिक रूप से बता सकते हैं।
4. पाठ्य–पुस्तक में दिए गए अभ्यासों को घर के बड़े या पड़ोसी पूरा कर देते हैं।
5. समुदाय में यह भावना प्रचलित है कि खेल खेलना (गतिविधियाँ) शिक्षा के लिए अच्छा नहीं है और शिक्षक स्कूल में केवल बच्चों के साथ खेलने के लिए आते हैं।
6. उनकी यह समझ कि स्कूल में शोर का होना अनुशासनहीनता की निशानी है।

विभिन्न हितधारक स्कूल को एक विशेष दृष्टिकोण से देखने के आदी हो चुके हैं। छह महीने के ईमानदार प्रयासों के बाद गाँव वालों ने यह बात मानी कि स्कूल में जो कुछ हो रहा है वह बच्चों की बेहतरी के लिए ही है। मैं नियमित रूप से माता–पिता के साथ बातचीत करने में बहुत सारा समय बिताता और उन्हें शिक्षा के प्रयोजन, महत्व आदि के बारे में बताता। माता–पिता को बात आसानी से समझाने के लिए मैंने उन्हें कृषि का उदाहरण दिया जिसमें बुवाई से कटाई तक छह महीने तक कड़ी मेहनत करनी पड़ती है, तभी अच्छी फसल प्राप्त होती है और हर चरण में बहुत ध्यान देने एवं देखभाल करने की जरूरत होती है। बच्चे को शिक्षित करना भी ऐसा ही है, इसके लिए बहुत सारा समय चाहिए; साथ ही ध्यान एवं देखभाल की आवश्यकता होती है। शिक्षा देना बिजली के एकदम विपरीत है कि आपने स्विच दबाया और तुरन्त बल्ब चमकने लगा। शिक्षक के रूप में मुझे अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ा। पर इस सन्दर्भ में मैंने उन्हें वरदान माना और एक रचनात्मक शिक्षण–अधिगम के तरीके को लागू किया जिसमें समाचार पत्रों का उपयोग शिक्षण के लिए एक संसाधन के रूप में किया गया (ईनाडू नामक तेलुगू दैनिक समाचार पत्र के बच्चों के लिए निकलने वाले रविवारीय परिशिष्ट "हाइ बुज्जी" को धन्यवाद)।

वर्णमाला का परिचय एवं पहचान

चरण ब: एक कविता के माध्यम से वर्णमाला का परिचय कराना लेकिन यह जरूरी नहीं कि कविता पाठ्य–पुस्तक की ही हो।

चरण 2: चार या पाँच ऐसे प्रश्न पूछना जिसके उत्तर ऐसे शब्द हों जो उसी वर्ण से शुरू होते हों जिस वर्ण को सिखाना है।

चरण 3: चुने हुए वर्ण को अलग करते हुए उत्तरों को श्यामपट्ट पर लिखना।

उदाहरण तेलुगू का प्रथम स्वर : అ (अ)

మీ ఇంట్లో వంట ఎవరు చేస్తారు? (అమ్మ, అక్క, అవ్వ)

मी इण्ट्लो वण्टा एवरु चेस्तारु? (अम्मा, अक्का, अव्वा)

నీవు ఇంటికి వెళ్ళగానే పుస్తకాలను ఎక్కడ పెడతావు? (అరుగు)

नीवु इण्टिकि वेळ्ळगाने पुस्तकालनु एक्क्डा पेडतावु? (अरुगु)

మీనాన్న ఉదయాన్నే పొలానికి దేనిని తీసుకొని వెళతాడు (అరక)

मी नान्ना उदयान्ने पोलानिकि देनिनि तीसुकोनि वेळताडु? (अरका)

పులి, సింహం ఎక్కడ ఉంటాయి (అడవి)

पुलि सिंहम एक्कडा उण्टायि? (अडवि)

हर प्रश्न का अपेक्षित उत्तर कोष्ठक में दिया गया है और जब बच्चे यह अपेक्षित उत्तर नहीं देते तो मुझे तब तक कोशिश करनी पड़ती जब तक कि वांछित उत्तर न मिल जाए। इस प्रक्रिया के कुछ फायदे भी हैं। इसमें बच्चे बोलते हैं (स्कूल में आए नए छात्र के लिए यह अच्छी गतिविधि है क्योंकि इससे सबसे मिलने–जुलने में मदद मिलती है)। बच्चे का डर दूर होता है (जिससे वार्तालाप और सम्प्रेषण में मदद मिलती है), और सबसे मुख्य बात यह कि इससे विद्यार्थी व शिक्षक को करीब आने और एक–दूसरे को समझने में मदद मिलती है।

चरण 4: सिखाए गए वर्ण का सुदृढ़ीकरण

पाठ्य–पुस्तक की कविता या पहले चरण में प्रयोग में लाई गई कविता को एक चार्ट पर लिख दिया जाता है और शब्दों में आए जिस वर्ण को सीखना है उसे चमकीले रंग में लिखा जाता है।

इसके बाद इन शब्दों को उनसे सम्बन्धित चित्रों के सन्दर्भ में दोहराया जाता है।

चरण 5: बच्चों के लिए अभ्यास

गृहकार्य के लिए हर बच्चे को समाचार पत्र का एक टुकड़ा दिया दिया जाता है जिसमें 10 से 15 शब्दों की तीन–चार लाइनें हों। बच्चे को समाचार पत्र के उस टुकड़े में सिखाए गए वर्ण पर पेंसिल से गोला बनाना होता है (सावधान! कभी–कभी यह गतिविधि इस कदर संक्रामक हो जाती है कि बच्चे अपने सामने आने वाली हर छपी हुई सामग्री में वर्णों पर गोला बनाने लग जाते हैं–यहाँ तक कि अपने भाई–बहनों की पाठ्य–पुस्तकों को भी नहीं छोड़ते !)

चरण 6: मूल्यांकन

विद्यार्थियों से यह कहना कि वे विभिन्न चीजों के नामों के बारे में सोचें और यह कोशिश करें कि वर्णमाला के उसी वर्ण विशेष के साथ शुरू होने वाले शब्द बताएँ।

పిల్లలు ఇంటి దగ్గర ఇది చేస్తారని అమ్మ కొడుతుంది (అల్లరి)

पिल्ललु इण्टि दगरा इदि चेस्तारनि अम्मा कोडुतुन्दि? (अल्लरि)

మీరు మీ తలను దీనిలో చూస్తూ దువ్వు కొంటారు (అద్దం)

मीरु मी तलनु दीनिलो चूस्तू दुव्वू कोण्टारु (अद्दम)

इस विधि से परिणाम पाने के लिए बहुत धैर्य एवं समय की आवश्यकता होती है। शुरुआती कुछ वर्णों के लिए शिक्षण–अधिगम की प्रक्रिया बहुत अधिक समय लेती है। पर एक बार जब बच्चे इस विधि से परिचित हो जाते हैं तब यह गति पकड़ लेती है और बचे हुए वर्णों व मात्राओं (गुणिमतालु) के लिए कम समय लगता है।

कुछ छोटे–मोटे परिवर्तन के साथ, इस विधि का प्रयोग मात्राएँ सिखाने के लिए भी किया जा सकता है। एक कविता के माध्यम से इस बात का परिचय दिया जाता है कि स्वर व्यंजनों से जुड़कर मात्राएँ (गुणिमतालु) कैसे बनती हैं।

चरण 1: निम्नलिखित कविता का लयबद्ध तालियों के साथ अभ्यास कराना चाहिए–

అ ఆ ఇ ఈ ఉ ఊ
अ आ इ ई उ ऊ

క కా కి కీ కు కూ,
क का कि की कु कू

ఎ ఏ ఐ
□ए ऐ

కె కే కై...
कॅ के कै

ఒ ఓ ఔ
ऑ ओ औ

కొ కో కౌ
कॉ को कौ

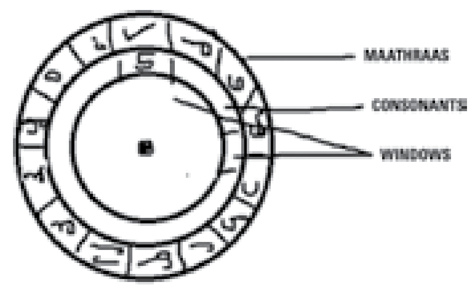
అం అః
अं अ:

కం కః
कं क:

चरण 2: एक सहायक शिक्षण सामग्री की मदद से, जिसे इसी काम के लिए बनाया गया है, सभी स्वरों की मात्राएँ (गुणिमतालु) दिखाई जा सकती हैं एवं उसकी सहायता से बच्चों को सिखाने व दृढ़ीकरण करने का काम किया जा सकता है।

गत्ते से दो चक्र बनाए जाते हैं–जिनमें एक–दूसरे से थोड़ा–सा बड़ा हो। बड़े चक्र की मार्जिन में मात्राओं के प्रतीक चिह्नों को लिख दिया जाता है और भीतरी चक्र में व्यंजनों को। मात्राओं के एकदम नीचे दो खिड़कियाँ–सी बना दी जाती हैं जैसा कि चित्र में दिखाया गया है। बड़े व छोटे चक्र को घुमाने और सही खिड़की को चुनने से सभी व्यंजनों की मात्राएँ बच्चों को दिखाई देती हैं।

चरण 3: कुछ शब्द इस तरह से तैयार किए जाते हैं कि व्यंजन किसी विशेष मात्रा के साथ, कुछ शब्दों में, पहले अक्षर के रूप में प्रकट हो; अगले कुछ शब्दों में दूसरे



स्थान पर प्रकट हो और बाद के शब्दों में अन्तिम स्थान पर प्रकट हो।

उदाहरण:

విమానం, విరామం, విషయం
विमानम, विरामम, विषयम

చెవి, రవి, కవి
चेवि, रवि कवि

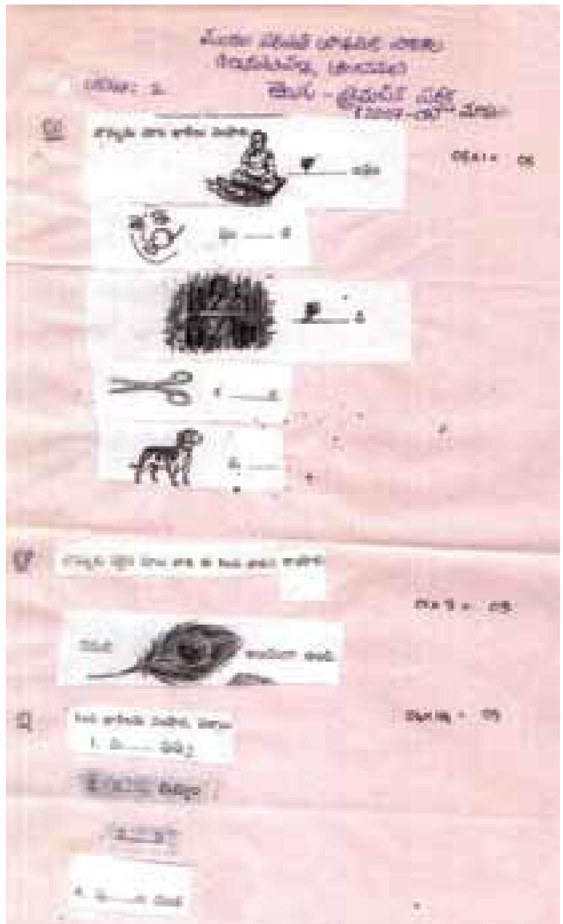
అడవి, నిడివి, మనవి
अडवि, निडिवि, मनवि

चरण 4: यह अभ्यास वैसा ही है जैसा कि वर्णों के परिचय में समाचार पत्र का संसाधन के रूप में प्रयोग करके किया गया था, अन्तर बस इतना ही है कि वर्णों के स्थान पर मात्राओं पर ध्यान केन्द्रित किया गया है।

चरण 5: बच्चों को विभिन्न वस्तुओं के चित्र दिए जाते हैं और उनसे उनके नाम बताने को कहा जाता है (जैसा कि संलग्नक में दिखाए गए आकलन पत्र में दिया गया है)।

संलग्नक:

1. मात्राएँ (गुणिमतालु) सिखाने के लिए बताई गई सहायक सामग्री का चित्र



2. समाचार पत्र की कतरनों का प्रयोग करके दूसरी कक्षा के बच्चों के लिए उपयोग में लाए गए आकलन पत्र





*इस लेख के लिखे जाने के समय **नागराजू** अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन व राष्ट्रीय ज्ञान आयोग की संयुक्त पहल www.teacehrsofindia.org पोर्टल के तेलुगू संस्करण के सम्पादक थे। उन्होंने 15 से अधिक वर्षों तक प्राथमिक व माध्यमिक स्तर पर क्रमशः भाषा और जीवविज्ञान पढ़ाया है। भाषा शिक्षण के लिए उन्होंने व्यापक रूप से बच्चों के लिए नियत समाचार पत्रों, परिशिष्टों तथा पत्रिकाओं का उपयोग किया है। वे स्कूल शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षण–अधिगम के मूल्यांकन में रुचि रखते हैं तथा प्रारम्भिक बाल्यावस्था की शिक्षा को बढ़ावा देना चाहते हैं। एक बार फिर से आन्ध्र प्रदेश के शिक्षा विभाग में शिक्षक के रूप में अपनी सेवाएँ दे रहे हैं। उनसे mulsraju.sekhar93@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवादः** नलिनी रावल*



11 स्कूल की ओर दौड़ते बच्चे और अभिभावक

सुजित सिन्हा

कई गाँवों में, गरीब परिवारों के पास 5 से 15 तक देसी मुर्गे होते हैं। बच्चे जानते हैं कि जब 'कुटुम्ब' उनके घर पर आता है, तो उसके लिए मुर्गा पकाना होता है और अगर अचानक पैसे की जरूरत आ पड़े, तो कुछ मुर्गे बेचे भी जा सकते हैं। लेकिन साल में दो या तीन बार महामारी फैलती है और उसमें कई मुर्गे मर जाते है। हाँ, वे जानते हैं कि कुछ पशु–चिकित्सक हैं, सरकारी भी और प्रायवेट भी। लेकिन 15 मुर्गों के इलाज के लिए कौन आएगा? और फिर वे फीस भी तो बहुत तगड़ी वसूल करते हैं। इसलिए कक्षा 6, 7 और 8 के बच्चों से सवाल किया गया कि आप लोग खुद ही मुर्गों को टीका क्यों नहीं लगाते? वे सन्देह से भर उठे–"हम छोटे बच्चे हैं!," उन्होंने कहा। "हम यह कैसे कर सकते हैं?" फिर एक बच्चे ने कहा, "क्यों नही?" यह शुरुआत थी! 8 गाँवों के लगभग 200 किशोरों ने सीखा कि मुर्गों का टीकाकरण कैसे किया जाता है। वे गाँव के परिवारों में गए और उनसे कहा–"कृपया अपने मुर्गों को सबेरे दड़बों से बाहर मत छोड़िए, हम उनको इंजेक्शन लगाने आएँगे।" और अगली सुबह आश्चर्यचकित ग्रामीणों ने देखा कि पाँच–छह बच्चे



उनके दरवाजे पर आए, उन्होंने मुर्गों को पकड़ा और पूरे आत्मविश्वास के साथ उनको इंजेक्शन लगा दिए। पहले साल तो यह काम बगैर कोई पैसा लिए किया गया, दूसरे साल से उन्होंने दवाई पर होने वाला खर्च वसूलना शुरू कर दिया। मुर्गों की मौतें कम हो गईं; तीसरे साल से ग्रामीण स्वेच्छापूर्वक दवा की कीमत और फीस देने लगे। इससे आर्थिक रूप से कमजोर कुछ विद्यार्थियों को थोड़ी–सी आमदनी होने लगी!

इस कोशिश से जो कुछ सवाल पैदा हुए वे ये थे : ये किस नस्ल के मुर्गे हैं? ये ब्रॉयलर मुर्गों से किस तरह अलग होते हैं? ये किस बीमारी की छूत का शिकार होते हैं? वे इस बीमारी को कैसे फैलाते हैं? टीका कैसे काम करता है? इसकी खोज किसने की थी? बकरियों और गायों को होने वाली बीमारियों के बारे में क्या सोचते हैं, जो हमें बुरी तरह प्रभावित करती हैं? क्या हम इन बीमारियों का पता लगाकर उनका इलाज कर सकते हैं? क्या ये चीजें हमारी स्कूल की किताबों में दी गई हैं? स्कूल की किताबें तो ऑस्ट्रेलियाई गायों के बारे में बात करती हैं! क्या सरकारी पशु–चिकित्सक कक्षाएँ ले सकते हैं? बच्चे विकास–खण्ड के पशु–चिकित्सा अधिकारी के पास गए। वह बहुत खुश और उत्साहित हुआ। उसने आकर उनको सिखाया कि बकरियों और गायों की बीमारियों का पता कैसे लगाएँ। फिर बच्चों में एक बकरी–गाय टीकाकरण शिविर आयोजित करने की इच्छा जागी। पशु–चिकित्सा अधिकारी काफी उत्साहित था क्योंकि उसको अपना कोटा पूरा करना था। इसके बाद बच्चों ने मिल–बैठकर परिवारों के सर्वेक्षण की एक रूपरेखा तैयार की : कितनी गायें

और कितनी बकरियाँ? उम्र? नस्ल? क्या आपके पास जमीन है? चारा हासिल करने के स्रोत और उसमें पेश आने वाली मुश्किलें क्या हैं? बीमारियाँ? इत्यादि। इसके बाद वे आँकड़े इकट्ठे करने निकले और उस दौरान उन्होंने काफी मौज–मस्ती भी की। बाद में वे ये आँकड़े लेकर बैठे, उन्होंने तालिकाएँ, रेखाचित्र, पाई चार्ट तैयार किए। गणित उनके लिए मनोरंजन और उपयोगी चीज बन गई! उनको पता था कि कितने घरों में एक गाय है, कितने घरों में 2 से 5 गायें हैं, कितने घरों में 5 से 10 गायें हैं, और कितने ऐसे हैं जिनके पास गायें तो हैं लेकिन जमीन नहीं है, दूध का कितना उत्पादन होता है और पशुओं को किन कीमतों पर बेचा जाता है आदि आदि। बच्चों के पास पूछने के लिए ढेरों सवाल थे! इसके बाद उन्होंने गाय–बकरी पशु–चिकित्सा शिविर का प्रचार और आयोजन किया। इस शिविर को आयोजित करने के सिलसिले में स्कूल, ग्रामीण, पंचायत के सदस्य और विकास–खण्ड के अधिकारी सब लोगों का आपस में मेल–जोल हुआ। यह शिक्षण और मनोरंजन का अच्छा–खासा मेला बन गया।

स्कूली शिक्षा क्या है? हम सब जानते हैं कि शिक्षा–नीति के गजब के दस्तावेजों और सुन्दर तरीके से लिखे गए शिक्षा सम्बन्धी लक्ष्यों के साथ ही कई तरह के उद्यमों के बाद ज्यादातर वयस्कों, अभिभावकों, अध्यापकों और बच्चों के लिए स्कूली शिक्षा का मतलब रोज–रोज एक कमरे के भीतर एक निश्चित जगह पर चार–पाँच घण्टे तक बैठना, पाठ्य–पुस्तक को अध्यापक की मदद से पढ़ने और समझने की कोशिश करना, घर जाकर उसको घोंटना और फिर किसी इम्तिहान में उसको 'उगल देना' होता है। सन्दीप बन्दोपाद्याय 'श्रीनिकेतन' में लिखते हैं : "शिक्षासत्र की स्थापना शान्ति निकेतन के करीब 1 जुलाई 1924 को हुई थी। हर बच्चे को जमीन का एक छोटा–सा टुकड़ा दिया गया था और उसे इस जमीन को खेल का मैदान तथा प्रयोग–स्थल की तरह बरतने के लिए प्रोत्साहित किया गया था। उसको अपनी पसन्द और रुचि के मुताबिक हस्तशिल्प चुनने की छूट भी दी गई थी। हरेक हस्तशिल्प को एक मिशन की तरह और अनौपचारिक शिक्षा के स्रोत की तरह बरता गया। 1928 की रिपोर्ट में साफतौर पर कहा गया था कि हस्तशिल्प का एक 'निश्चित आर्थिक मूल्य' होना चाहिए और जो भी चीजें तैयार की जाएँ वे वास्तविक घरेलू उपयोग की हों और बाहर बेची जाने के लिए एकदम तैयार होनी चाहिए।" इस तरह शिक्षासत्र ने 'कई अर्थों में' गाँधी की 'बुनियादी शिक्षा योजना' की पूर्व कल्पना कर ली थी।

आनन्द निकेतन 1937 में सेवाग्राम में मीराबेन और अन्य लोगों द्वारा शुरू किया गया था। फिर उसे कई वर्षों तक आर्यनायकम्स का मार्गदर्शन प्राप्त हुआ था, जिन्होंने शान्ति निकेतन से वर्धा जाने के पहले कुछ समय तक शिक्षासत्र में काम किया था। इसका बहुत ही सुन्दर वर्णन मार्जोरी साइक्स ने अपनी पुस्तक में करते हुए कहा है कि 'नई तालीम का किस्सा 1960 में समाप्त हो चुका था, उसी तरह जैसे कि देश भर के दूसरे बुनियादी स्कूल या नई तालीम स्कूल बन्द हो चुके थे।' लेकिन तालीमी संघ के समर्थन से साहसी सुषमा शर्मा ने 2005 में एक बार फिर से इसको शुरू किया।

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय के 2011–13 सत्र की एम.ए. एजुकेशन की एक छात्रा, जो इस स्कूल के साथ काम कर रही थी, का कहना है, "हर बच्चे के पास एक छोटा–सा खेत है और वे अपनी फसलों को रोपते, सँवारते और सींचते हुए जोड़, माप, परिमिति, आकृति, कोण, आँकड़ों का संग्रह और नियोजन, भिन्न, दशमलव,



अनुपात और ऐसी ही तमाम अवधारणाओं के बारे में सीख रहे हैं। ये अवधारणाएँ एन.सी.ई.आर.टी. की कक्षा 5, 6 और 7 की गणित की किताबों में दी गई हैं। सीखने के साथ–साथ वे इस कदर मौज–मस्ती करते हैं कि जिनको सातवीं कक्षा के बाद स्कूल से जाना है वे कहते हैं कि काश वे इस स्कूल में बने रह पाते।" खेद की बात है कि आनन्द निकेतन को सरकार की मंजूरी नहीं मिली है क्योंकि महाराष्ट्र मराठी माध्यम के नए स्कूलों को मान्यता नहीं दे रहा है और फिर यह स्कूल सिर्फ सातवीं कक्षा तक ही है। इस तरह, जहाँ टैगोर और गाँधी के सपनों का वजूद खतरे में है, वहीं, इस बीच, कुछ बच्चे हैं जो 'कर्म और शिक्षा' को एक–दूसरे से जोड़ने का आनन्द ले रहे हैं।

लेकिन रुकिए – क्या सिर्फ बच्चे ही मौज–मस्ती करते रहेंगे? और उनके अभिभावक? पश्चिम बंगाल के उत्तरी चौबीस परगना जिले में 4 प्रयोगशील स्कूलों के साथ सक्रिय गैर सरकारी संस्था *स्वनिर्भर* ने मई–जून 2002 में अभिभावकों के साथ कुछ अभ्यास करने का फैसला किया। उसी गाँव के अभिभावकों (ज्यादातर माताओं) को एक साथ बिठाकर उनको उनके गाँव का एक नक्शा बनाने के लिए प्रोत्साहित किया गया। कुछ मामलों में स्वनिर्भर अध्यापकों ने इस प्रक्रिया को जारी रखते हुए हरेक से कहा कि वे नक्शे में सबसे पहले अपने घर से स्कूल तक जाने वाली सड़क उकेरें। हर बार अभिभावकों ने पूरी तल्लीनता के साथ तमाम सड़कों, बड़े–बड़े पेड़ों, व्यापक रूप से इस्तेमाल में लाए जाने वाले ट्यूबवैलों, महत्वपूर्ण दुकानों, स्कूलों, पूजा–स्थलों को, यहाँ तक कि घरों (विशेष रूप से अपने घरों) को नक्शे में उकेरना शुरू कर दिया! दूसरा अभ्यास था टाइमलाइन तैयार करने का। यह क्या चीज है इसे दर्शाने के लिए *स्वनिर्भर* अध्यापकों ने भागीदारी कर रहे एक व्यक्ति की टाइमलाइन की मार्फत उसकी जिन्दगी का विवरण पेश करने में मदद की और फिर अभिभावकों को कई सारी टाइमलाइन तैयार करने के लिए समूहों में बाँट दिया। इस अभ्यास के अगले दिन कई माँओं ने, जो पिछले दिन नहीं आई थीं या नहीं आ सकीं थीं, शिक्षकों के पास जाकर शिकायत की कि उनको इस खेल से वंचित क्यों रखा गया। सालों से काम करते हुए आज *स्वनिर्भर* इन कार्यशालाओं में साक्षर और निरक्षर दोनों तरह के अभिभावकों (जिनमें पिता भी शामिल होते हैं) को हिस्सेदार बनाने में पर्याप्त सक्षम हो चुका है। इसलिए, अब अभिभावक बच्चों के साथ *स्वनिर्भर* द्वारा की जाने वाली चीजों की अहमियत को समझने लगे हैं, भले ही ये चीजें उनकी पाठ्य–पुस्तकों का हिस्सा नहीं हैं। इसलिए अब ऐसे अभिभावक हैं जो *स्वनिर्भर* के लिए कई तरह की शिक्षण सामग्रियाँ तैयार करते हैं (और कुछ अतिरिक्त मात्रा में भी तैयार करते हैं, जिनको वे घर ले जाते हैं) ; फिर ऐसे सयाने लोग भी हैं जो "नई" माँओं को मार्गदर्शन देते हैं। अब अभिभावक कार्यशाला का इन्तजार करने लगे हैं जो अब पहली और दूसरी कक्षाओं के विद्यार्थियों के अभिभावकों के लिए तथा तीसरी से पाँचवीं कक्षा के अभिभावकों के लिए अलग–अलग आयोजित की जाती हैं।

इन "वैकल्पिक" स्कूलों द्वारा हर कहीं ऐसी बहुत–सी दिलचस्प चीजें आजमाई गई हैं और उनकी कोशिशें जारी हैं। गुसलखानों का सर्वेक्षण, पानी का सर्वेक्षण, पेड़ों का सर्वेक्षण और उनका विश्लेषण तथा उसके बाद की कुछ कार्रवाइयाँ जैसी बातें दिलचस्प और उपयोगिता की दृष्टि से रचनात्मक हैं। वे बच्चे के सर्वांगीण विकास में, उसकी संवेदनशीलता तथा जनतांत्रिक प्रवृत्तियों आदि को बढ़ाने में सहायक हैं। क्या देश के लाखों ग्रामीण बच्चों को इस तरीके से सीखने का और इस शिक्षा के माध्यम से ग्रामीण भारत को रूपान्तरित कर देने का अवसर मिल सकेगा?

एनसीएफ–2005 इस विचार के प्रति सहानुभूतिशील है। कई राज्य सरकारें शायद इसकी कोशिश करना चाहें। इस काम को आगे बढ़ाने में कइयों को मिल–जुलकर आगे आना होगा। दिगन्तर की "अपने आसपास" और उत्तराखण्ड सेवा निधि की "अवर लैण्ड अवर लाइफ" जैसी अलग तरह की पुस्तकों का लिखा जाना जरूरी होगा। हर इलाके को अपने क्षेत्र की विशिष्ट और उपयुक्त गतिविधियों तथा उनको करने के तरीकों के साथ सामने आना होगा। उदाहरण

के तौर पर मैं सेकमोल, लद्दाख के सोनम वांगचुक को उद्धरित करना चाहूँगा : "कभी–कभी स्कूल अपने को बन्द करके ही शिक्षा में योगदान कर सकते हैं। मसलन, स्कूल गरमी के सत्र में खुले रहते हैं, तब ऐसा बहुत कुछ होता है जो बच्चे खेतों में जाकर सीख सकते हैं। अगर आप चाहते हैं कि बच्चे कृषि के बारे में सीखें, तो इसका तरीका यह नहीं है कि आप उनके लिए कृषि की कक्षाएँ शुरू कर दें, बल्कि सिर्फ इतना करें कि गर्मी के एक महीने स्कूल बन्द रखें जब खेतों में इतना कुछ होता है कि बच्चे वहाँ जाकर वह सब सीख सकते हैं।"



__सुजित__ इन दिनों अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय,बंगलौर में पढ़ाते हैं। उन्होंने 20 साल से भी ज्यादा समय तक पश्चिम बंगाल की गैरसरकारी संस्था (स्वनिर्भर) के साथ काम किया है। यह संस्था शिक्षा, स्वास्थ्य, टिकाऊ खेती, स्वयंसेवी समूहों और आदर्श पंचायत के निर्माण जैसी गतिविधियों में सक्रिय रही है। सुजित की प्राथमिक दिलचस्पी टैगोर और गाँधी के शिक्षा सम्बन्धी विचारों की इस तरह व्याख्या करने में है ताकि वर्तमान और भविष्य के सन्दर्भ में उनकी प्रासंगिकता सामने आ सके। उनसे sujit.sinha@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है। __अनुवादः__ मदन सोनी



12 क्या आत्मनियंत्रण सीखा जा सकता है, बजाय थोपने के?

यामिनी पाटिल

मेरा पक्का विश्वास है कि बच्चे सहज जिज्ञासु (सीखने की कुदरती क्षमता रखने वाले) होते हैं। वे अपने आसपास के माहौल, परिवार और बराबरी वालों की संगत से सीखते हैं। उनकी शिक्षा सिर्फ ज्ञान तक सीमित नहीं होती, बल्कि उसमें वे सामाजिक सलीके भी शामिल होते हैं जिनकी बदौलत वे अपने बराबर के लोगों के समूह के द्वारा स्वीकार किए जाते हैं और उसका हिस्सा बन पाते हैं। बेशक, हर बच्चे की जिन्दगी में ऐसे दौर आते हैं जब वह जिद्दी और झगड़ालु होता है और विचित्र व्यवहार करता है।

मेरा यकीन था कि मिलनसार होना, दूसरों की अच्छाइयों को पहचानना, आदर करना और दूसरों के साथ साझा करना कक्षा में सीखी जाने वाली चीजें हैं। मुझे लगता था कि इन चीजों को बच्चे माध्यमिक शिक्षा के समय तक आते–आते पर्याप्त मात्रा में ग्रहण कर लेते हैं और अपने समूह के साथ घुल–मिल जाते हैं।

माध्यमिक स्कूल के विद्यार्थियों के साथ के मेरे तजुरबे ने मेरे इस यकीन को हमेशा पुख्ता किया था। मैंने यह भी गौर किया था कि कारगर शिक्षण स्वच्छन्द समूहों के भीतर ही होता है।

माध्यमिक स्कूल के साथ के मेरे तजुरबे से हमेशा यह बात सामने आई थी कि स्वच्छन्द समूहों का निर्भीक वातावरण बच्चों को अपने विचारों को व्यक्त करने में, दूसरों की धारणाओं का आकलन करने में तथा उनके क्रियाकलापों के नफा–नुकसानों पर चर्चा करने में हमेशा मदद करता था, हालाँकि समूहों की भीतरी और आपसी दुश्मनियाँ भी देखने में आईं थीं। लेकिन ये इस हद तक नहीं थीं कि वे सीखने की प्रक्रिया पर बुरा असर डाल सकतीं। सदस्यों की समस्याओं का निराकरण समूह के भीतर चर्चा करके और समूहों की आपसी समस्याओं का निराकरण उन पर कक्षा में चर्चा करके किया जा सकता था। यह सिलसिला शायद इतने लम्बे अरसे से जारी था कि उसने मुझे भरोसा दिला दिया था कि इस स्थिति के कोई अपवाद नहीं होंगे। यही वजह थी कि मैंने बीमारी के लक्षणों को नजरअन्दाज कर दिया था।

यह मेरी आठवीं कक्षा के विद्यार्थियों के साथ हुआ था। मैं जानती थी कि मुझे छोटी–मोटी शुरुआती मुश्किलों का सामना करना पड़ेगा क्योंकि यह कक्षा मेरे लिए नई थी। यह मेरा दस्तूर रहा था कि मैं कक्षा के पहले ही दिन इस पर चर्चा करती थी कि कौन से नियम हैं जिनका पालन जरूरी होगा। विद्यार्थियों ने खुद ही बताया कि कक्षा में किन चीजों की छूट थी और किन चीजों की नहीं थी। जब बात इस पर आई कि अगर दूसरा बोल रहा हो तो उसको बीच में न टोका जाए और उस पर फब्तियाँ न कसी जाएँ, तो बहुत से बच्चों ने दूसरा तरीका निकाला। वे एक–दूसरे की तरफ देखकर आँखें मटकाने लगे। मैंने इस पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया। मुझे देना चाहिए था!

मैंने एक महीना बीत जाने दिया ताकि विद्यार्थी नए अध्यापकों और नए पाठ्यक्रम के साथ तालमेल बिठा सकें। मैं सोचती थी कि निचली कक्षा से माध्यमिक कक्षा में जाने से विद्यार्थी निश्चय ही कुछ विचलन महसूस करते होंगे और यह



चीज उनको चंचल बनाती ही होगी। लेकिन जब दो महीने बीत जाने के बाद भी कक्षा व्यवस्थित नहीं हुई, तो मैंने यह जानने के लिए कक्षा पर नजर रखना शुरू कर दिया कि समस्या क्या है। जो चीज मुझे पता चली उसने मुझे वाकई चिन्ता में डाल दिया। कुछ विद्यार्थी वाकई खामोश रहने लगे थे, जैसे वे अपने में डूबे हुए हों। ये वे लोग थे जो शुरू में बहुत सक्रिय हुआ करते थे, लेकिन धीरे–धीरे वे अदृश्य बन गए थे। वजह यह थी कि हिस्सा लेना तो दूर की बात थी, लगता था वे अपना मुँह तक खोलने से डर रहे थे। जिस वक्त दूसरे लड़के अपने विचार व्यक्त कर रहे होते थे या सवालों का जवाब दे रहे होते थे, कक्षा के कुछ लड़के थे जो उन पर कटाक्ष करते थे। ऐसा नहीं था कि वे कुछ ही लड़कों को अपना निशाना बनाते हों। अपनी अनावश्यक टीका–टिप्पणियों से वे किसी को भी बख्शते नहीं लगते थे। कई ऐसे भी थे जो पलटकर जवाब दे देते थे, जिससे बहसबाजी होने लगती थी। कई बार ऐसा होता कि बातचीत का विषय ही पटरी से उतर जाता था। कक्षा का ज्यादातर समय इस व्यर्थ की बहसबाजी में जाया हो रहा था। उनसे निजी तौर पर बात करने का कोई फायदा नहीं था क्योंकि अपनी हरकतों से वे जिस तरह दूसरों का



ध्यान खींच रहे थे उसका वे आनन्द लेते लगते थे। उनको नजरअन्दाज करने का मतलब उनको और ज्यादा आक्रामक होने की छूट देना था।

जो कुछ चल रहा था उस पर मैंने संजीदगी से विचार करना शुरू किया। मुझे लगा कि हालात हाथ से बाहर होते जा रहे हैं। ये वे बच्चे नहीं थे जो किसी तितली का पंख नोचने में आनन्द लेते हैं। ये तो अपनी फब्तियों से दूसरों को होने वाली तकलीफ का मजा लेते लग रहे थे। लगता था जैसे उनका खुद ही अपनी हरकतों पर कोई वश नहीं था।

संयोग से, हमें अपने शैक्षणिक प्रशिक्षण के सत्र में चर्चा के लिए पॉल टॅफ़ का एक लेख दिया गया था: 'अगर कामयाबी का रहस्य नाकामयाबी हो तो?' यह लेख इस बात पर जोर देता था कि किस तरह चरित्र उतना ही अहम होता है जितनी कि प्रतिभा होती है, और उसमें शिक्षकों की दीर्घकालिक सफलता के लिए उत्साह, साहस, आत्मनियंत्रण, सामाजिक व्यवहार कुशलता; कृतज्ञता–बोध, आशावाद और जिज्ञासा जैसी शक्तियों की निशानदेही की गई थी। इस लेख में कही गई बातें मुझे अपनी इस आठवीं कक्षा के सन्दर्भ में एकदम प्रासंगिक लगीं। फिलहाल आत्मनियंत्रण मेरी प्राथमिकता थी।

मैं जानती थी कि आत्मनियंत्रण के बारे में बात करने से विद्यार्थियों पर कोई असर होने वाला नहीं था। आत्मनियंत्रण के जिक्र मात्र से वे बिदक जाने वाले थे। मुझे विद्यार्थियों को ऐसी गतिविधियों में लगाना जरूरी था जहाँ वे खुद ही आत्मनियंत्रण के बारे में सोचने लगते। कक्षा में बुक रिपोर्ट्स के बारे में चर्चा के दौरान एक छात्रा किसी कहानी के एक ऐसे पात्र का जिक्र कर रही थी जो अक्सर गुस्सा हो जाया करती थी। मैंने इस अवसर का लाभ उठाते हुए उससे पूछा कि क्या उसको उस पात्र का इस तरह गुस्सा हो जाना उचित लगता है। कुछ विद्यार्थियों को लगता था कि गुस्सा होना उसका हक था और कुछेक का मानना था कि उसको अपनी भावनाओं पर कुछ और काबू पाना चाहिए था। चर्चा के अन्त में सारे विद्यार्थी इन सवालों का जवाब देने की स्थिति में थे कि वह क्या चीज थी जिससे उनको गुस्सा आ जाता था, और अगर उन्होंने अपने गुस्से को काबू में कर लिया होता, तो क्या स्थिति बनी होती। ज्यादातर को अपने गुस्से पर काबू पाने की कोई वजह नहीं दीखती थी क्योंकि उनका ख्याल था कि गलती पूरी तरह से दूसरे की होती थी।

अगला कदम संगीत और नाटक के अध्यापकों की मदद से पूरी तरह से शारीरिक गतिविधि का था। विद्यार्थियों से कहा गया कि वे ढोलक की ताल से कदम मिलाते हुए अपने शरीर को एक खास तरह की गति में ढालें। ताल बदलने पर उनको उसके मुताबिक अपने शरीर की गति में भी बदलाव लाना जरूरी था। ज्यादातर बार ऐसा हुआ कि ताल बदलने पर उनकी गति में कोई बदलाव नहीं आया। जब सवाल उठा कि ताल का साथ न दे पाने की क्या वजह थी, तो उनको अहसास हुआ कि इसमें ढोलक की नहीं बल्कि उन्हीं की गलती थी। जब ये गतिविधियाँ जारी थीं, उसी दौरान आत्मनियंत्रण के बारे में कुछ पोस्टर प्रदर्शित किए गए। पोस्टरों की विषयवस्तु पर कोई औपचारिक चर्चा नहीं की गई थी। लेकिन बच्चे अपने समूहों में इन पोस्टरों पर चर्चा कर रहे थे।

एक सप्ताह के अन्तराल के बाद अन्तिम और सबसे अहम गतिविधि शुरू की गई। कक्षा को एक भूमिका निभाने के लिए तीन के समूहों में बाँटा गया। विषय था कक्षा में छेड़खानी। हर समूह से छेड़खानी के शिकार व्यक्ति की और एक वयस्क की भूमिका निभाने को कहा गया। विद्यार्थियों ने भरपूर उत्साह दिखाया। कुछ समूह दिलचस्प समाधानों के साथ सामने आए। ज्यादातर भूमिकाओं में, शिकार व्यक्ति छेड़खानी को लेकर काफी गुस्से से भरी प्रतिक्रिया करते हुए और वयस्क छेड़खानी करने वाले को सजा देते हुए देखे गए। लेकिन इनमें दिलचस्प भूमिकाएँ वे थीं जहाँ छेड़खानी के शिकार ने शुरुआत में छेड़खानी को नजरअन्दाज करते हुए असाधारण संयम से काम लिया, लेकिन जब इसका कोई असर नहीं हुआ तो उसने छेड़खानी करने वाले को सख्त तरीके से कह दिया कि इस तरह की हरकत बर्दाश्त नहीं की जाएगी। दिलचस्प बात थी कि इन भूमिकाओं में वयस्क सबसे अन्त में सजा देने वाले की नहीं बल्कि समझौता कराने वाले की भूमिका निभाते देखे गए। इन भूमिकाओं की समीक्षा से यह बात जाहिर थी कि इनने विद्यार्थियों को समझदार और विचारशील बनाया था।

अगले दिन जब मैं कक्षा में पहुँची तो उम्मीद से भरी हुई थी। सबसे पहले जिस बात पर मेरा ध्यान गया वह यह थी कि विद्यार्थियों का हर समूह पूरे उत्साह के साथ बहस में मशगूल था। जैसे ही मैं कक्षा में दाखिल हुई, एक सामूहिक स्वर सुनाई दिया, “अक्का, प्लीज आज कोई पढ़ाई नहीं। हम लोग कल की चीजों पर बात करना चाहते हैं।” चर्चा में जो बात सामने आई वह यह थी कि समूची कवायद बेकार नहीं गई। लगता था कि कक्षा पर उसका अच्छा खासा असर हुआ था खासतौर से उन विद्यार्थियों पर जो छेड़खानी के शिकार रहे थे। जो विद्यार्थी छेड़े जाने पर उग्र प्रतिक्रियाएँ किया करते थे, उन्होंने कहा कि वे अब ऐसा नहीं करेंगे और वे उसको नजरअन्दाज कर दिया करेंगे क्योंकि दूसरे लोगों को उन पर कटाक्ष करने से सन्तोष मिलता है। जो चुपचाप सह लिया करते थे उनका कहना था कि वे इन मवालियों को दृढ़तापूर्वक कहेंगे कि वे आगे से उनको परेशान न करें। जो सबसे अच्छा तरीका अपनाने का उन्होंने फैसला किया, वह यह था कि, खासतौर से तब जबकि कक्षा चल रही होगी, तो वे परेशान किए जाने पर अपने गुस्से का इजहार करते हुए चुपचाप अपनी कुर्सियाँ उठाकर इन खलल डालने वालों से दूर पीछे जाकर बैठ जाएँगे। उनका कहना था कि वे बहस न करके तथा व्यवधान का शिकार न होकर ही अपने आत्मनियंत्रण का परिचय देंगे। इसी के साथ, ऐसा करके वे दूसरे को इस बात का अवसर नहीं देंगे कि वे उनकी पढ़ाई में खलल डाल सकें।

क्या समस्या हल हो चुकी थी? नहीं। बच्चे तो बच्चे ही थे, कुछ खामियाँ बनी हुईं थीं। लेकिन इस पूरी कवायद ने कम से कम कुछ विद्यार्थियों को यह समझने में मदद की ही थी कि समाधान उनके हाथों में है।

टुमकुर, कर्नाटक के टीवीएस स्कूल से मुझे जो तजुरबे हासिल हुए और स्कूल ने मुझे काम करने की जो आजादी दी उसके लिए मैं उस स्कूल की शुक्रगुजार हूँ।



यामिनी *(एम. कॉम., एम. फ़िल., बी.एड) को लगभग 30 साल का अध्यापन का अनुभव है। उनका आखिरी कार्यकाल टीवीएस स्कूल, टुमकुर में काम करने का था। अँग्रेजी भाषा का अध्यापन और अँग्रेजी तथा तेलुगू साहित्य का अध्ययन उनकी रुचि के क्षेत्र हैं। इन दिनों वे अवकाश पर हैं। वे स्वतंत्र रूप से काम करती हैं और अपनी पोती, जो दूसरी कक्षा में पढ़ती है, के साथ खेलने का आनन्द लेने में अपना वक्त बिताती हैं। उनसे reddyirm@gmail.com या yaminimohanreddy@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।*

अनुवाद : *मदन सोनी*



13 नली-कली : कर्नाटक के प्राथमिक स्कूलों में

पद्मजा एम. आर.

शिक्षा ठहरे हुए पानी का तालाब नहीं है। उसमें हमेशा प्रवाह बना रहता है। अपने प्रवाह के साथ वह अनेक विचारों, तकनीकों और नवाचारों को समेटती चलती है और शिक्षा के सार्वभौमिकीकरण की ओर बढ़ती जाती है। उत्कृष्ट शिक्षा के क्षेत्र में किए गए प्रयोगों में नली–कली या आनन्दपूर्ण शिक्षण एक अनूठी अवधारणा है। यह बच्चे पर केन्द्रित, गतिविधि पर आधारित शिक्षण है जो बच्चों को स्कूली शिक्षा हासिल करने के साथ–साथ मूल्यों को जज्ब करने में मदद करती है। नली–कली बच्चों के लिए वह माकूल वातावरण तैयार करता है जिसमें बच्चे आत्मीय और सरस तरीके से आहिस्ता–आहिस्ता सीखते चलते हैं।

नली–कली की अवधारणा मैसूर जिले के हेग्गड़ादेवनकोट तालुक के एक छोटे से गाँव में जन्मी और दूसरे इलाकों में फैलती चली गई। जैसे–जैसे इसका प्रसार होता गया वैसे–वैसे यह नए विचारों तथा परिवर्तनों के साथ नया रूप लेती गई और आज इसे कर्नाटक के तमाम प्राथमिक स्कूलों में लागू किया जा चुका है। इस शिक्षण पद्धति के अन्तर्गत कक्षा 1, 2 और 3 के बच्चों को शामिल किया गया है।

नली–कली के मुख्य आकर्षण :

- बहुस्तरीय शिक्षण
- उत्कृष्ट शिक्षा
- स्वतः शिक्षण
- अपनी ही गति से सीखना
- आनन्दपूर्ण शिक्षण

नली–कली की कक्षाएँ

नली कली की कक्षाएँ अनूठी और आम कक्षाओं से अलग होती हैं। कक्षा शुरू होने से पहले शिक्षण सामग्री की व्यवस्था करना और उसको तैयार रखना जरूरी होता है।

कक्षा के लिए आवश्यक शिक्षण सामग्री और उसका संक्षिप्त वर्णन :

1- शिक्षण कार्ड

इन कार्डों में शिक्षण सामग्री के छोटे–छोटे अंश होते हैं। कार्डों को नली–कली कक्षाओं में रखा जाता है और उनको कक्षा, विषय तथा सीखी गई अवधारणा के माइलस्टोन के मुताबिक अलग–अलग स्थलों पर जमाया जाता है। ये शिक्षण कार्ड कर्नाटक सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा उपलब्ध कराए जाते हैं।

2- प्रगति चार्ट

ये चार्ट भी विभाग द्वारा ही मुहैया कराए जाते हैं और इनको विषय और कक्षा के मुताबिक प्रस्तुत किया जाता है। इनमें सीखी गई अवधारणा के माइलस्टोन और प्रतीक–चिह्नों के अनुसार सोपान संख्याएँ दी हुई होती हैं। प्रत्येक माइलस्टोन तक बच्चे की पहुँच उसकी काबिलियत तथा उसके द्वारा अर्जित ज्ञान को दर्शाती है। बच्चों को इन चार्ट में अपनी प्रगति को चिह्नित करना होता है और यह प्रगति चार्ट हर बच्चे के लिए एक अहम दस्तावेज होता है।

3- समूह डिस्क

इन डिस्कों में यह सूचना दर्ज होती है कि किस समूह द्वारा किसके निरीक्षण में कौन–सी गतिविधि की जानी है। पाँच समूहों में से प्रत्येक समूह के लिए डिस्क होती हैं: कक्षा

1, 2 और 3 के लिए भाषा, गणित तथा पर्यावरण सम्बन्धी अध्ययन के लिए। हर डिस्क एक समूह, समूह–संख्या, समूह के निरीक्षक और उस समूह की गतिविधि को दर्शाने वाले प्रतीक–चिहन का प्रतिनिधित्व करती है।

गतिविधियाँ इस प्रकार सम्पन्न की जाती हैं :

- अध्यापक की आंशिक मदद से
- अध्यापक की पूरी मदद से
- साथी की पूरी मदद से
- साथी की आंशिक मदद से
- खुद सीखकर

जो गतिविधियाँ सामूहिक होती हैं उनको समूह डिस्कों पर प्रतीक–चिह्न के माध्यम से नहीं दर्शाया जाता। हर गतिविधि को एक प्रतीक–चिहन दिया गया है जिसे शिक्षण सामग्री – कार्ड, कार्य–पुस्तिका, रीडर – के बाएँ कोने पर प्रदर्शित किया जाता है। यही प्रतीक–चिहन प्रगति–चार्ट तथा समूह डिस्कों पर भी प्रदर्शित होता है।

भाषाओं में, प्रतीक चिह्नों के रूप में जानवरों का उपयोग किया जाता है और गणित में पक्षियों का उपयोग प्रतीक चिह्नों के रूप में किया जाता है। पर्यावरण सम्बन्धी अध्ययनों में कीड़ों का उपयोग प्रतीक–चिह्नों के रूप में होता है। ये प्रतीक–चिहन प्रगति–चार्ट में अपनी जगह चिह्नित करने में और सम्बन्धित शिक्षण सामग्री चुनकर समूह के भीतर अपनी जगह जाकर बैठने में बच्चे की मदद करते हैं।

4- अध्ययन ग्रिड
कक्षा की छत से चार फुट नीचे तक तार लटके होते हैं जिन पर बच्चों द्वारा की गई हस्तशिल्प सम्बन्धी गतिविधियों के दौरान तैयार की गई चीजें लटकी होती हैं। ये बच्चों की रचनात्मक प्रतिभा को प्रोत्साहित करने में मदद करती हैं।

5- दीवार की स्लेट
यह कक्षा की चारों दीवारों तक फैला हुआ चार फुट ऊँचा एक ब्लैकबोर्ड होता है, जिसका एक हिस्सा हर बच्चे को सौंप दिया जाता है। इसको दीवार स्लेट के नाम से पुकारा जाता है। इसका इस्तेमाल बच्चे अपने अभ्यास के तौर पर जोड़–फल निकालने या वाक्य लिखने के लिए करते हैं।

6- मौसम चार्ट
इस पर बच्चे प्रतिदिन सुबह, दोपहर और शाम को मौसम का निरीक्षण कर मौसम के प्रकार को चिह्नित करते हैं। इससे प्रत्येक माह का मौसम चार्ट तैयार करने में मदद मिलती है।

7- कार्य पुस्तिकाएँ
कक्षा 1, 2 और 3 के लिए तथा प्रत्येक कक्षा के भाषाओं के रीडरों के लिए सरकार कार्य पुस्तिकाएँ उपलब्ध कराती है। इनको विषय और कक्षा के अनुसार संयोजित किया जाता है। जब सारे माइलस्टोन हासिल कर लिए जाते हैं तब बच्चे स्वत: शिक्षण प्रक्रिया के दौरान और मूल्यांकन के दौरान पुस्तिकाओं को पढ़ते हैं।

8- शिक्षण–अध्ययन सामग्री
गतिविधियाँ आयोजित करने के लिए जरूरी सामग्री फ्लैश कार्ड, गोटियाँ, गुरिए, कंकड़, छड़ियाँ, कठपुतलियाँ, परदे, मुखौटे तथा हस्तशिल्प सम्बन्धी गतिविधियों के लिए जरूरी सामग्री माइलस्टोनों के मुताबिक संयोजित की गई है। इस सारी सामग्री का आसानी के साथ बच्चों की पहुँच में होना जरूरी है।





कक्षाओं को सम्हालने का ढंग

चूँकि इस शिक्षण प्रक्रिया में कक्षा 1, 2 और 3 आपस में मिला दी गई होती हैं, इसलिए कक्षा को सम्हालने का ढंग यहाँ एकदम अलग होता है। हमारे स्कूल में कक्षा 1, 2 और 3 के कुल मिलाकर 96 विद्यार्थी हैं। हमने उनको 32–32 के तीन बराबर भागों में बाँट दिया है। नली–कली शिक्षकों के रूप में हम तीन अध्यापिकाएँ इन तीनों हिस्सों को सम्हालती हैं। हर पीरियड 80 मिनिट का होता है और



हर दिन 4 पीरियड होते हैं – पहला पीरियड कन्नड़ का, दूसरा गणित का, तीसरा पर्यावरण–अध्ययन का और चौथा रेडियो शिक्षण और अँग्रेजी का।

दिन की शुरुआत ध्यान करने के साथ होती है जिसके लिए बच्चे एक वृत्त बनाकर बैठते हैं। दूसरी गतिविधि चार्ट में मौसम को चिह्नित करने की होती है। और उसके बाद नीचे अंकित अनुसार गतिविधियाँ शुरू होती हैं :

- प्रगति चार्ट के अनुसार गाने, बजाने, कहानी सुनाने, तस्वीरें पहचानने आदि गतिविधियों के लिए बच्चों का चयन करना और उनको उन गतिविधियों में लगाना।



- प्रगति चार्ट में बच्चों की प्रगति को चिह्नित करना।
- एक बच्चे से समूह डिस्क को फर्श पर रखने को कहना।
- बच्चों को उनकी कक्षा और विषय के मुताबिक उस पीरियड के विषय से सम्बन्धित प्रगति चार्ट के सामने कतार में खड़ा करना और उनसे उनके अध्ययन की स्थिति की तथा अगली गतिविधि के प्रतीक–चिह्न की पहचान करवाना।



- प्रगति चार्ट में की गई एन्ट्री के अनुसार अध्ययन सामग्री उठाकर बच्चे को सम्बन्धित समूह में बैठने को कहना।

- इसके बाद अध्यापक अपना अध्यापन शुरू करता है और सबसे पहले स्वत:—अध्ययन समूहों का मार्गदर्शन करता है। इसके बाद उस समूह में जाकर बैठ जाता है जो अपने अध्ययन के लिए पूरी तरह से अध्यापक पर निर्भर है और उस समूह के बच्चों को सम्हालता है। मार्गदर्शन का मतलब है इस बारे में सलाह देना कि कौन विद्यार्थी कौन—सी गतिविधि किस तरह से करेगा; कौन किसकी किस तरह से मदद करेगा।
- अध्यापक लगातार इस बात का ध्यान रखते हैं कि सारे समूह किसी न किसी गतिविधि में मशगूल हों।
- अध्ययन को सुनिश्चित कर लेने तथा गतिविधि के सन्तोषजनक तरीके से पूरा हो जाने के बाद प्रगति कार्ड में बच्चे की प्रगति को दर्ज किया जाना और अगले दिन की गतिविधि की तरफ बच्चे का ध्यान आकर्षित किया जाना जरूरी होता है। अगर किसी बच्चे ने गतिविधि को सन्तोषजनक तरीके से पूरा नहीं किया हो तो उससे उसी गतिविधि को अगले दिन दोहराने के लिए कहा जाएगा।
- गतिविधि के बाद बच्चों को अध्ययन सामग्री यथास्थान वापस रखनी होती है।

मेरा अनुभव

मैं उन अध्यापकों के दल की सदस्य थी जिनको नली—कली कक्षाओं को सम्हालने के लिए छह दिवसीय प्रशिक्षण के लिए चुना गया था। प्रशिक्षण के बाद जब मैंने कक्षाओं को सम्हालना शुरू किया, तो यह काम मुझे मुश्किल लगा, लेकिन 2—3 महीनों के भीतर ही बच्चों के उत्साह, उनकी गतिविधियों तथा उनकी प्रगति की वजह से यह मुझे अच्छा लगने लगा।

नली—कली कक्षाएँ दूसरी कक्षाओं से अलग हैं और 1, 2 और 3 — तीनों ही कक्षाओं की दक्षताओं में समानताएँ हैं। उदाहरण के लिए गणित की कक्षा 1 में 1 से लेकर 19 तक की संख्याओं को गिनना, लिखना, जोड़ना और घटाना होता है। यही अभ्यास कक्षा 2 के लिए 1 से 99 तक की संख्याओं और कक्षा 3 के लिए 1 से 500 तक की संख्याओं के सन्दर्भ में करने होते हैं।

यहाँ, बच्चे को चूँकि अपनी रफ्तार से सीखने का अवसर होता है, एक प्रतिभाशाली बच्चा तेजी से सीख सकता है और आगे निकल सकता है। इसी तरह हो सकता है कि कुछ बच्चे धीमी शुरुआत करें लेकिन वे धीरे—धीरे रफ्तार पकड़ सकते हैं। मैंने अलग—अलग क्षमताओं वाले बच्चों को साल भर के भीतर अपनी सीखने की गति में उन्नति करते हुए देखा है :

- चूँकि हर बच्चा हर गतिविधि में भाग लेता है, वह अपने अनुभव से सीखता है। (देखो और सीखो; करो और समझो)
- यहाँ आम कक्षाओं की तरह एक साथ ढेर सारे बच्चों का अध्यापन नहीं किया जाता और सीखने की प्रक्रिया के दौरान हर बच्चे पर ध्यान दिया जाता है। मुझे हर बच्चे पर निजी तौर पर ध्यान देना बहुत उपयोगी लगा। दरअसल इससे उन बच्चों की अध्ययन सम्बन्धी खामियों को भी दूर किया जा सकता है जो कक्षा से अनुपस्थित हो जाते हैं।
- जैसा कि मैंने गौर किया, एक प्रतिभाशाली विद्यार्थी अपने समूह के दूसरे बच्चों का मार्गदर्शन करता है और इस प्रक्रिया में नेतृत्व की क्षमताओं तथा सहयोग और सामंजस्य की भावनाओं को विकसित करता है।
- इस प्रक्रिया की एक और खासियत यह है कि इसमें बच्चा अध्यापक के मार्गदर्शन में सीखना शुरू करता है, दोस्तों के सहयोग से उसमें मजबूती हासिल करता है और अन्त में स्वावलम्बी होकर गतिविधियाँ करने लगता है।
- कक्षा में विद्यार्थियों के बीच स्वस्थ प्रतिस्पर्धा होती है। यह सीखने की रफ्तार के प्रति सजगता पैदा करती है और उनको ज्यादा से ज्यादा सीखने को प्रोत्साहित करती है तथा उनमें आत्मविश्वास जगाती है। सीखना इस तरह उनके लिए एक चुनौती भरा काम हो जाता है। शारीरिक चुनौती से जूझ रहे विद्यार्थी भी इस प्रक्रिया से प्रोत्साहित होते हैं।

नली–कली पद्धति की चुनौतियाँ

नली–कली की उपर्युक्त सकारात्मकताओं/शक्तियों के बावजूद अध्यापकों को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है :

- अगर विद्यार्थियों की संख्या 30 से ज्यादा होती है, तो कक्षा को सम्हालना मुश्किल होता है।
- चूँकि अध्यापकों को हर दिन के सत्रों के दौरान पूरे वक्त कक्षा में मौजूद रहना होता है, यह शारीरिक और मानसिक दोनों ही स्तरों पर काफी थका देने वाला काम साबित होता है।
- अध्यापकों को ऐसी कक्षा को सम्हालने में मुश्किल हो सकती है जिसमें तीनों कक्षाओं के विद्यार्थी सीखने वाले समूह में होते हैं और हर कक्षा के विद्यार्थियों को शिक्षण के कई सारे बिन्दु पढ़ाने होते हैं।
- कक्षा 1 और 2 की क्षमताओं में समानताएँ होती हैं, लेकिन कक्षा 3 के अध्यापन का स्तर तुलनात्मक रूप से ऊँचा होता है और इसलिए कक्षा 3 को अध्यापन के लिए अलग करना बेहतर होगा।

निष्कर्ष

यह सही है कि इस शिक्षण पद्धति में चुनौतियाँ हैं, लेकिन शिक्षा विभाग द्वारा लागू की गई दूसरी योजनाओं के मुकाबले में नली–कली उत्कृष्ट शिक्षा के मामले में कहीं ज्यादा कारगर है। कार्ड, चार्ट, कार्य–पुस्तिकाएँ, रीडर और डिस्कें अध्यापन में बेहद कारगर साबित होती हैं और इनको तैयार करने में कई अध्यापकों, शिक्षा–विशेषज्ञों अधिकारियों ने मशक्कत की है। इनमें लगातार संशोधन जारी है और संशोधनों की सूचना अध्यापकों को दूरसंचार के माध्यम से दी जा रही है। इसी के साथ, कक्षाओं को संचालित करने के दौरान अध्यापकों के सामने पेश आने वाली मुश्किलों पर गौर किया जा रहा है और उनके समाधान खोजे जा रहे हैं।

यहाँ तक कि ऐसे विद्यार्थी के लिए जो एक अकादमिक वर्ष में सारे माइलस्टोन को हासिल नहीं कर सका है, यह पद्धति इजाजत देती है कि वह छूट गए माइलस्टोन को अगले अकादमिक वर्ष की शुरुआत में पूरा कर ले और इसके बाद अगले साल के माइलस्टोन को सीखना शुरू करे।

मूल्यांकन की प्रक्रिया सतत जारी रहने वाली है। बच्चे का मूल्यांकन प्रत्येक माइलस्टोन के अन्त में खेलों, गतिविधियों और कार्ड में दिए गए सवालों के मौखिक जवाबों के माध्यम से होता है। बच्चे औपचारिक परीक्षा के आतंक से मुक्त होते हैं और शिक्षण के एक स्वतन्त्र तथा आत्मीय वातावरण में अपने व्यक्तित्व का विकास कर सकते हैं।

मैंने अध्यापन की इस पद्धति से किसी भी दूसरी पद्धति के मुकाबले कहीं ज्यादा सन्तोष हासिल किया है।

पद्मजा *गवर्नमेण्ट सीनियर प्राइमरी स्कूल, चन्द्रनगर, कुमारस्वामी लेआऊट, बंगलौर साऊथ जोन – 1 में हैड मिस्ट्रेस हैं। उन्होंने 1994 में अध्यापन की शुरुआत की और इस स्कूल की हैड मिस्ट्रेस बन गईं जो वर्ष 2002–03 में एसएसए के तहत जूनियर प्राइमरी स्कूल के रूप में आरम्भ हुआ था। उस समय कक्षा 1 से 4 तक के विद्यार्थियों की कुल संख्या 48 थी। विभाग, दानदाताओं और अध्यापकों के संरक्षण की वजह से स्कूल धीरे–धीरे विकसित होता चला गया और उसने सीनियर प्राइमरी स्कूल का स्तर हासिल कर लिया। अब इस स्कूल में 1 से 8 तक कक्षाएँ हैं जिनमें 350 से ज्यादा विद्यार्थी हैं। पद्मजा पिछले पाँच सालों से नली–कली अध्यापिका हैं। उनसे 91 9731731600 पर सम्पर्क किया जा सकता है।* ***अनुवाद*** *: मदन सोनी*


ENVIRONMENT
GEOGRAPHY
HISTORY
ENVIRONMENT
MATH
SCIENCE
HINDI
SCIENCE
ENGLISH
NEWSPAPER

[k.M c %foKku





14 क्या मानव वानरों से विकसित हुए हैं?

fod kl okn dsçfr , d foopukRed nf'Vdksk

सिन्धु मथाई

विवेचनात्मक पड़ताल विज्ञान के अध्यापन और अध्ययन के प्रति आज के नवाचारी दृष्टिकोण का मर्म है। अध्ययन को तभी कारगर माना जाता है जब विद्यार्थी अध्ययन के लिए प्रस्तुत अवधारणाओं से उलझता है और इसी के साथ वैज्ञानिक विवेचना की योग्यता विकसित करता है। यह बात विशेष रूप से हाल ही में तब और स्पष्ट हुई जब मैंने इस तरह की पड़तालों का उपयोग करते हुए "विकासवाद" पर एक कोर्स पढ़ाया। इस सिलसिले में एक गतिविधि का अनुभव खासतौर से सन्तोषजनक रहा और उसी का वर्णन मैंने यहाँ पर किया है। हालाँकि यह गतिविधि अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय के एक वैकल्पिक पाठ्यक्रम के अंग के रूप में की गई थी, इसे कक्षा 9 से 12 तक के विद्यार्थियों के साथ भी किया जा सकता है। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद (एन.सी.ई.आर.टी.) की पाठ्य–पुस्तकों[1] में आनुवंशिकता और विकास का सबसे पहला परिचय कक्षा 9 (विज्ञान) में दिया गया है, और फिर कक्षा 10 (विज्ञान) और कक्षा 12 (जीवविज्ञान) में और गहराई में जाकर उसकी छानबीन की गई है।

यह विषय अपने में महत्वपूर्ण है। मुझे विकासवादी जीवविज्ञानी डोब्झेन्स्की (1973) के अक्सर उद्धरित किए जाने वाले ये शब्द बार–बार याद आते रहे : "जीवविज्ञान में तब तक किसी भी चीज का कोई अर्थ नहीं होता जब तक कि उसको विकासवाद की रोशनी में नहीं परखा जाता।" मैंने कक्षा के पहले दिन से ही विकासवाद की कहानी की कथावस्तु – नैसर्गिक चयन – पर अपना समय देना शुरू किया। कक्षा में हुई चर्चा से मुझे सन्देह हुआ। वैज्ञानिक सिद्धान्तों की यह फितरत है कि जैसे ही आप उनको एकबारगी समझ लेते हैं, वे आपको अपनी चमत्कृत कर देने वाली सरलता के बावजूद अपनी तर्कशक्ति से चकित करते हैं। 1858 में चार्ल्स डार्विन और अल्फ्रेड वालेस रसेल द्वारा संयुक्त रूप से पेश किया गया नैसर्गिक चयन का सिद्धान्त भी इसका अपवाद नहीं है। कक्षा में चर्चा के दौरान विद्यार्थियों में व्याप्त वैकल्पिक अवधारणाओं को महसूस करते हुए मैंने पाया कि इसका हल किसी ऐसी आकर्षक गतिविधि में ही सम्भव होगा जो अलग–अलग अवधारणाओं को एकीकृत कर सके।

अपनी तलाश के दौरान नेशनल अकादमी ऑफ साइंस, अमेरिका[2] से विकासवाद से सम्बन्धित ऐसी कई सरल गतिविधियाँ मेरे हाथ लगीं जिनके लिए किन्हीं खास संसाधनों की भी जरूरत नहीं थी। ऐसी ही एक गतिविधि का शीर्षक था "सामान्य वंशानुक्रम की पड़ताल: सूत्रबद्ध करने वाली व्याख्याएँ और मॉडल"। यह गतिविधि नैसर्गिक चयन के माध्यम से विकास की समझ की दिशा में ले जाने वाली विभिन्न बुनियादी अवधारणाओं को एकीकृत करती थी, हालाँकि उसका जोर मॉलिक्युलर साक्ष्य पर था। इसी के साथ–साथ वह विद्यार्थियों को परिकल्पनाएँ गढ़ते हुए, पड़ताल करते हुए, मॉलिक्युलर साक्ष्य का परीक्षण करते हुए, उसके आधार पर नतीजा निकालते हुए और जरूरत पड़ने पर शुरुआती परिकल्पनाओं में रद्दोबदल करते हुए या उनको पूरी तरह से खारिज करते हुए एक विवेचनात्मक पड़ताल की ओर ले जाती थी। विद्यार्थियों को इस सवाल को परखने और उसका जवाब देने की दिशा भी मिलती थी कि "क्या मानव का विकास वानरों से हुआ है?" इस कक्षा के पहले उनको परस्पर–प्रभावी कालरेखा की मार्फत विकास के इतिहास की यात्रा करवाई गई थी।[3] पीबीएस नोवा वृत्तचित्रों के माध्यम से डार्विन के जीवन और कृतित्व से भी उनका परिचय कराया गया था।[4] विकास की प्रक्रिया और विज्ञान के विकास की समझ में आए बदलावों को जानने के लिए उन्होंने लामार्क, वालेस और डार्विन की

कृतियों के अंश पढ़े थे।(5)

शैक्षिक अनुशासन की परिपाटियों को समझने की प्रक्रिया : तालिकाएँ और क्लाडोग्राम

परीक्षण को तीन भागों में बाँटा गया था। इसे एक शिक्षक की निर्देशिका के रूप में लिखा गया था जिसमें ऐसे डायग्राम और वर्कशीट दी गईं थी जिनको आसानी से नया रूप दिया जा सकता था/बदला जा सकता था। विद्यार्थियों ने 4–5 के छोटे–छोटे समूहों में काम किया। पहले हिस्से में वानरों और मानवों के लक्षणों का परीक्षण और तुलना करना जरूरी था। यह तुलना शरीर की मुद्राओं, पैरों और बाहों की लम्बाई, मस्तिष्क के आकार आदि कई चीजों के सन्दर्भ में की जानी थी। इसके बाद एक वृक्ष डायग्राम (मार्फोलॉजिकल वृक्ष, क्लाडोग्राम) दिया गया था जिसमें वानरों और मानव–प्रजाति के बीच तुलना करते हुए उनके रिश्ते को समझा गया था। क्लाडोग्रामों का उपयोग विकासवादी जीववैज्ञानिकों द्वारा, किसी शैक्षणिक अनुशासन की साझा परिपाटियों की ही तरह, साझा वंशानुक्रमों पर आधारित जीवों के आपसी रिश्तों को दर्शाने के लिए किया जाता है। आँकड़ों की इस रूप में की गई प्रस्तुति ने मुझे इस परिपाटी के लक्षणों को विद्यार्थियों को समझाने का अवसर दिया। इसके लिए मैंने ग्रेगॅरी आर. टी. (2008) के एक आलेख (6) की मदद ली।

परिकल्पनाएँ गढ़ना

तालिका और विकास–वृक्ष से विभिन्न स्तनधारी जीवों तथा मानवों के बीच के रिश्ते सामने आए। विद्यार्थियों से वानरों – गुरिल्लाओं और चिम्पांजियों (क्रमश: G और C के माध्यम से निर्देशित), मानवों (H के माध्यम से निर्देशित) तथा इनके साझा पूर्वज (A) के बीच के रिश्ते उकेरने को कहा गया। यह वृक्ष जैसे ही एक और रेखाचित्र के माध्यम से किया जाना था। लेकिन वृक्ष डायग्राम इसको स्पष्ट तरीके से नहीं दर्शाता था। विद्यार्थी इस बात को लेकर कुछ भ्रमित–से थे कि इस तरह के रिश्तों को कैसे उकेरा जा सकता है। उम्मीद यह की गई थी कि वे वृक्ष डायग्राम की मार्फत दर्शाए गए सम्बन्ध को एक ऐसी परिकल्पना का रूप दें, या एक ऐसे सम्बन्ध को प्रस्तुत करें जिसका सत्यापन या परीक्षण किया जा सके।

दृश्यपरक शिक्षा का अभ्यस्त होने के नाते, मैंने महसूस किया कि विद्यार्थी उन दो वानर–प्रजातियों के चित्र देखना पसन्द करेंगे जिनका जिक्र ऊपर किया गया है। इसलिए मैंने इण्टरनेट से कुछ चित्र लिए और उनको प्रोजैक्ट किया ताकि उनको लक्षणों का कुछ बोध हो सके। चित्र 1 और 2 में इसके उदाहरण दिए गए हैं।

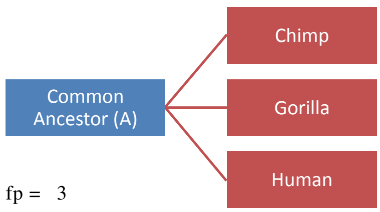


चित्र–1

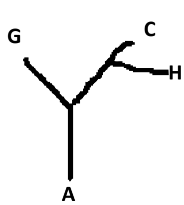


चित्र–2

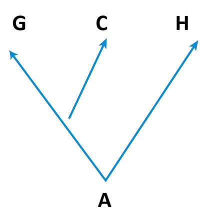
विद्यार्थियों द्वारा प्रस्तुत की गई परिकल्पनाओं की जाँच की गई। विद्यार्थियों के ज्यादातर समूहों ने एक से



fp = 3



fp = 4



fp = 5

अधिक परिकल्पनाएँ गढ़ी थीं। चित्र 3, 4 और 5 विद्यार्थियों (VS, TS और NK) की प्रस्तुतियों से लिए गए हैं।

जीन शृंखलाओं की तुलना : मॉलिक्युलर साक्ष्य सम्बन्धपरकता के बारे में क्या उजागर कर सकता है?

इन तात्कालिक परिकल्पनाओं के बाद विद्यार्थी गतिविधि के दूसरे हिस्से में अपनी परिकल्पनाओं के परीक्षण की दिशा में बढ़े। इसके अन्तर्गत प्रोटीन हीमोग्लोबिन (अधिकांश रीढ़धारियों में खून को लाल रंग प्रदान करने वाला रंग–द्रव्य) के लिए जीनों की कोडिंग की तुलना के माध्यम से गुरिल्लाओं, चिम्पाजियों और उनके साझा पूर्वजों के बीच के रिश्तों की तुलना की गई। विद्यार्थियों को पिछली कक्षा में चर्चा के लिए पद्धति के बारे में संक्षेपिकाएँ और मार्गदर्शी प्रश्न उपलब्ध कराए गए थे और परीक्षण शुरू करने के पहले उनको पढ़ने को कहा था। आमतौर से सुनने में आने वाले संक्षिप्त शब्द 'डीएनए' ने उनमें से कईयों में पेचीदगी का अहसास जगाया था।

हालाँकि अपनाई गई पद्धति एकदम बच्चों के खेल जैसी थी। डीएनए का एक तन्तु सुगर फास्फेट बैकबोन, नाइट्रोजीनियस बेसेस : एडेनाइन (A), ग्वानाइन (G), थाइमाइन (T) और साइटोसाइन (C) और उसको दोहरे स्पाइरल की शक्ल देते एक पूरक तन्तु के आधारों के साथ हाइड्रोजन अनुबन्ध से निर्मित होता है। एडेनाइन थाइमाइन के साथ जुड़ा होता है, और ग्वानाइन साइटोसाइन के साथ जुड़ा होता है। जीन डीएनए का एक अंश है और इस तरह विद्यार्थियों को डीएनए के 20 आधारों से बने प्रत्येक हिस्से अंश के साथ काम करना था। परीक्षण के विवरण के अन्तर्गत प्रत्येक प्रजाति की (वर्तमान में उपलब्ध साक्ष्य के मुताबिक) श्रृंखला दी गई थी। उदाहरण के लिए, मानव (H) डीएनए तन्तु की श्रृंखला है : A-G-G-C-A-T-A-A-A-C-C-A-A-C-C-G-A-T-T-A. इसी तरह गुरिल्ला (G), चिम्पांजी (C) और इन जीवों के एक परिकल्पित साझा पूर्वज (A) की हीमोग्लोबिन की श्रृंखलाओं की कोडिंग उपलब्ध कराई गई थी। प्रत्येक समूह के लिए विभिन्न डिब्बों में अलग–अलग रंगों (प्रत्येक आधार के लिए एक रंग) के कागज के टुकड़े उपलब्ध कराए गए थे। विद्यार्थियों को, जैसा कि चित्र 6 में दर्शाया गया है, प्रत्येक प्रजाति के डीएनए तन्तुओं को संयोजित करना था।

पहला आधार श्रृंखला को दर्शाने के लिए चिह्नित था। मानव डीएनए की तुलना पहले गुरिल्ला डीएनए से और फिर चिम्पांजी डीएनए से की गई थी। तुलना आधार से आधार (कागज के एक टुकड़े से कागज के दूसरे टुकड़े) के बीच की गई। आपस में मेल खाने वाले आधारों की और बेमेल



fp = 6 %isj fDyi lsfufeZ xq¢j Yy k Mh, u, ds rUrqdk ,d fo| kFkhZ(BJ) }kjk fy;k x;k fp=

आधारों की संख्या (जिसका अनुमान भी किया जा सकता था) निकाली गई। अन्तिम संख्याओं को एक तालिका में रखा गया। साझा पूर्वज डीएनए को प्रक्रिया के तीसरे भाग के लिए सुरक्षित रखा गया।

एक छात्रा (VS) ने अपनी तुलनाओं को रंगों के अंकन की मार्फत प्रस्तुत किया जिसे चित्र 7 में दर्शाया गया है।

साझा पूर्वज से आए परिवर्तन: हम किस तरह वानरों से सम्बन्ध रखते हैं?

तीसरे हिस्से में, विकास की प्रक्रिया में बदलावों तथा 'मालिक्युलर घड़ियों' के रूप में उनके महत्व की विद्यार्थियों की समझ को मजबूत किया गया। प्रत्येक प्रजाति के

"गढ़ी गई शृंखलाएँ (रंगों के अंकन के साथ) इस तरह उभरती थीं:

Human	A	G	G	C	A	T	A	A	A	C	C	A	A	C	C	G	A	T	T	A
Chimp	A	G	G	C	C	C	C	T	T	C	C	A	A	C	C	G	A	T	T	A
Gorilla	A	G	G	C	C	C	C	T	T	C	C	A	A	C	C	A	G	G	C	C
Common	A	G	G	C	C	G	G	C	T	C	C	A	A	C	C	A	G	G	C	C

मानव डीएनए की तुलना क्रमश:
गुरिल्ला और चिम्पांजी के डीएनए से करने पर नीचे अंकित अनुसार परिणाम सामने आए :

Human	A	G	G	C	A	T	A	A	A	C	C	A	A	C	C	G	A	T	T	A
Chimp	A	G	G	C	C	C	C	T	T	C	C	A	A	C	C	G	A	T	T	A

15 मेल, 5 बेमेल आधार

Human	A	G	G	C	A	T	A	A	A	C	C	A	A	C	C	G	A	T	T	A
Gorilla	A	G	G	C	C	C	C	T	T	C	C	A	A	C	C	A	G	G	C	C

10 मेल. 1 व बेमेल आधार

fp= 7%, d fo| kFkhZ¼o h, l ½ }kjk çR;sd vk/kkj dsfy, jaxksa dk mi;ksx djrs gq, fd;k x;k Mh, u, rUrqvksa dh lekurk dk çLrqfr dj.k

डीएनए के तन्तुओं की साझा पूर्वज के साथ तुलना बदलावों के बारे में जानकारी उपलब्ध कराती और इस तरह इस पूर्वानुमान में मदद करती कि प्रजाति के रूप लेने की घटना कैसे और कब घटित हुई: या कब एक नई प्रजाति ने रूप लिया और विकास के वृक्ष में उसकी नई शाखा विकसित होना शुरू हुई। इसलिए साझा पूर्वज के डीएनए की तुलना प्रत्येक अन्य – मानव, गुरिल्ला, और चिम्पांजी – के डीएनए से की गई और एक बार फिर समानताओं और असमानताओं की गणना करके उनकी पहले जैसी ही तालिका तैयार की गई। सम्पूर्ण तालिका एक विद्यार्थी (BJ) द्वारा तैयार की गई प्रस्तुति जैसी दिखती थी।

तालिका 1: गतिविधि के दौरान किए गए पर्यवेक्षणों को दर्शाते आँकड़ों की (BJ) तालिकाएँ–

मानव डीएनए के लिए मिश्रित आँकड़ा (भाग II)		
मानव डीएनए से तुलना करने पर :	**समानताओं की संख्या**	**असमान आधार**
चिम्पांजी डीएनए	15	5
गुरिल्ला डीएनए	10	10
साझा पूर्वज डीएन का आँकड़ा (भाग III)		
साझा पूर्वज डीएनए से तुलना करने पर:	**समानताओं की संख्या**	**असमान आधार**
मानव डीएनए	10	10
चिम्पांजी डीएनए	12	8
गुरिल्ला डीएनए	17	3

इन आँकड़ों पर कक्षा में चर्चा की गई। विद्यार्थियों से कहा कि वे इन आँकड़ों की रोशनी में अपनी परिकल्पनाओं को एक बार फिर से देखें। क्या वे इससे सन्तुष्ट हैं, क्या वे अपनी परिकल्पना में कोई फेर–बदल करना चाहते हैं?

तालिका को और अभ्यास की शुरुआत में पेश किए गए क्लाडोग्राम को देखने पर, साथ ही चिम्पांजी और गुरिल्ला की तस्वीरों को देखने पर विद्यार्थियों के ज्यादातर समूहों ने यह परिकल्पना की कि गुरिल्ला और चिम्पांजी के बीच ज्यादा करीबी रिश्ता है। हालाँकि दूसरे भाग में हासिल किए गए आँकड़े दर्शाते थे कि हीमोग्लोबिन की जीन कोडिंग में मानवों के साथ गुरिल्लाओं के मुकाबले में चिम्पांजी कहीं ज्यादा आधारों में साझा करते हैं। साथ ही, तीसरे भाग के आँकड़ों के मुताबिक साझा पूर्वज के साथ गुरिल्ला कहीं ज्यादा समानताएँ रखते हैं, और चिम्पांजी तथा मानव इस मामले में क्रमश: दूसरे और तीसरे क्रम पर आते हैं, जो गुरिल्लाओं और साझा पूर्वज के बीच कहीं ज्यादा बड़े सम्बन्ध को दर्शाता है। तब फिर चित्र 4 में दर्शाया गया

वृक्ष स्थिति को कहीं ज्यादा बेहतर ढंग से पेश करने वाला माना जाएगा।

इस परीक्षण से और उससे निकले आँकड़ों से तथा उनसे निकले सरल निष्कर्ष से विद्यार्थी बहुत खुश हुए। लेकिन शुरू में जो सवाल सामने रखा गया था कि "क्या मानव वानरों से विकसित हुए हैं?" उसका जवाब अभी भी साफ नहीं था। चूँकि कक्षा के लिए निर्धारित दो घण्टे का वक्त बीत चुका था, मैंने विद्यार्थियों से कहा कि वे इस चर्चा को अपने होमवर्क में पूरा करते हुए कक्षा में विश्लेषित किए गए आँकड़ों के आधार पर निष्कर्ष निकालें।

साक्ष्य से निकलता हुआ विलक्षण निष्कर्ष जो आम धारणा के विपरीत जाता है

इस गतिविधि का हैरतअंगेज और विचारोत्तेजक पक्ष अभी तक सामने नहीं आया था। कई सारे विद्यार्थियों ने अपने होमवर्क में उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर, 'सीढ़ी–नुमा', 'क्रमिक विकास' मॉडल की आम वैकल्पिक अवधारणा को सामने लाते हुए, इस उपलब्ध साक्ष्य के साथ तर्क करने की कोशिश की थी कि मानव का विकास वाकई वानरों से हुआ है! हालाँकि इसके लिए जो आँकड़े उन्होंने पेश किए थे वे सही थे और उस कक्षा में विकसित हुई साझा समझ के अनुरूप थे। एक विद्यार्थी (टीएस) के मामले में, इस अवधारणात्मक परिवर्तन को उसके लिखने में महसूस किया जा सकता था: "जो निष्कर्ष निकाला जा सकता है वह यह है कि हालाँकि मानवों का विकास वानरों से हुआ है..." यहाँ उसने विश्लेषित साक्ष्य के विस्तार में जाने के लिए अपनी बात को अधूरा छोड़ दिया था और अन्तिम निष्कर्ष में कहा था : "यह अभ्यास इस तथ्य के पक्ष में साक्ष्य प्रस्तुत करता है कि तीनों प्राणी (गुरिल्ला, चिम्पांजी और मानव) सम्भव है किसी एक साझा पूर्वज से विकसित हुए हों और कालान्तर में डीएनए में आए परिवर्तनों की वजह से उनमें ये परिवर्तन लक्ष्य किए गए हों।"

लेकिन कुछ दूसरे होमवर्क से उभरते हुए रुझानों पर नजर डालने के बाद मैंने पाया कि साक्ष्य और वृक्ष डायग्राम (चित्र 4) से तार्किक निष्कर्ष तक की इस छलांग के लिए कुछ और मदद जरूरी होगी। मैंने आनन–फानन में कक्षा के लिए यह मेल भेजा: ''प्रिय विद्यार्थियो, अगर आज आपके पास कुछ मिनिट का वक्त हो तो मेरा निवेदन है कि आप सब http://www.pbs.org/wgbh/evolution/library/11/2/quicktime/e_s_5_100.html[7] वीडियो देख डालें। इसे देखने के लिए आपको क्विक टाईम या रियल प्लेयर जरूरी होगा। पिछली कक्षा में किए गए परीक्षण को विचार में लिए बगैर क्या आप सोच सकते हैं कि यह कहने का क्या मतलब होता है कि 'मानव का विकास वानरों से हुआ है?' क्या इसका मतलब यह नहीं हुआ कि विकास की प्रक्रिया में एक वानर मानव बन गया, याकि एक चिम्पांजी/गुरिल्ला मानव के रूप में विकसित हो गया? क्या आप विश्लेषित साक्ष्य के आधार पर ऐसा दावा कर सकते हैं। आज हम कक्षा में इस पर चर्चा करेंगे।''

कक्षा में वीडियो के अवलोकन से कुछ और स्पष्टीकरण और चर्चाएँ सामने आईं। कुछ विद्यार्थियों ने पहले प्रस्तुत किए गए अपने होमवर्क को अपनी बदली हुई समझ के मुताबिक नए सिरे से प्रस्तुत किया। ये बाद वाले होमवर्क उस नैसर्गिक चयन की प्रक्रिया पर कहीं ज्यादा विचार करते थे जो मानवों, चिम्पांजियों और गुरिल्लाओं के विकास के पीछे एक कारक रहा हो सकता था।

कुल मिलाकर यह एक उत्तेजक गतिविधि साबित हुई जिसने नैसर्गिक चयन के रास्ते हुए विकास की समझ की ओर ले जाने वाली प्रमुख अवधारणाओं को स्पष्ट किया और एक – दूसरे के साथ उनका सामंजस्य बिठाया, जिसने मूलभूत प्रतिरोधी वैकल्पिक अवधारणाओं को उजागर किया और जिसने विद्यार्थियों को एक–दूसरे को समझने, सहयोग करने में संलग्न रखा। एक अध्यापक के रूप में परीक्षण की इस पद्धति का उपयोग मेरे लिए एक अत्यन्त सन्तोषजनक और फलप्रद अनुभव रहा।

References

(1) NCERT Online textbooks (2005). New Delhi: National of Educational Research and Training. Retrieved from: http://ncert.nic.in/NCERTS/textbook/textbook.html on 7th December 2012.

(2) Teaching about evolution and the nature of science (1998). Working group on teaching evolution. Washington D.C.: National Academy of Sciences. Activity retrieved from: http://www.nap.edu/openbook.php?record_id=5787&page=81 on 7th December 2012.

(3) Evolution Revolution. PBS Nova documentaries on Evolution and web resources (2001). Timeline retrieved from: http://www.pbs.org/wgbh/evolution/religion/revolution/ed_pop.html

(4) PBS Nova documentaries on Evolution and web resources (2001). Retrieved from: http://www.pbs.org/wgbh/evolution/ on 7th December 2012.

(5) Teaching about evolution and the nature of science (1998). Working group on teaching evolution. Washington D.C.: National Academy of Sciences. Activity retrieved from: http://www.nap.edu/openbook.php?record_id=5787&page=93 on 7th December 2012.

(6) Gregory, T.R. (2008). Understanding Evolutionary Trees. Evo Edu Outreach 1: 121-137. Retrieved from: http://www.cbs.dtu.dk/courses/27615.mol/pdf/understanding_evo_trees.pdf on 7th December 2012.

(7) Did Humans Evolve? PBS Nova documentaries on Evolution and web resources (2001). Video retrieved from: http://www.pbs.org/wgbh/evolution/library/11/2/quicktime/e_s_5_100.html on 7th December 2012.

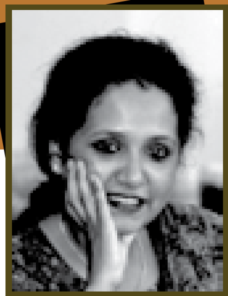
Image credits

Figure 1: Inaglory, B. (2009). Male gorilla in SF Zoo. Retrieved from: http://en.wikipedia.org/wiki/File:Male_gorilla_in_SF_zoo.jpg on 7th December 2012. Licence: Creative Commons Attribution-Share Alike 3.0 Unported

Figure 2: Lersch, T. (2005). Common chimpanzee in the Leipzig zoo. Retrieved from: http://en.wikipedia.org/wiki/File:Schimpanse_zoo-leipig.jpg on 7th December 2012. Licence: Free Software Foundation: GNU Free Documentation License, Version 1.2.

Figures 3 - 7 and Table 1: Assignment submissions of students: Vibha Sequeira, Tejbir Singh, Nayan Kumar and Bhawana Joshi as indicated in the body of the article. Permission obtained.

सिन्धु *अजीम प्रेमजी विश्वविद्यालय बंगलौर के यूनिवर्सिटी रिसोर्स सेण्टर में असिस्टेण्ट प्रोफेसर तथा उसकी एकेडेमिक्स एण्ड पेडागॉजी टीम की सदस्य हैं। उन्होंने होमी भाभा सेण्टर फॉर साइंस एजुकेशन, मुम्बई से साइंस एजुकेशन में पीएच.डी. की है। उनका शोध 'विजुओस्पेशियल रीजनिंग इन अण्डरस्टेंण्डिंग ह्यूमन फ़िज़ियॉलॉजी एट द मिडिल स्कूल लेविल' पर केन्द्रित रहा है। शोध के दौरान वे कक्षा में किए जाने वाले प्रयोगों तथा कक्षा 1 और 2 के लिए टीचर्स बुक (अँग्रेजी में) के लेखन में व्यस्त रही हैं। उन्होंने स्कूल, के.एफ़.आई., चेन्नई में जीवविज्ञान का अध्यापन भी किया है। उनसे sindhu.mathai@azimpremjifoundation.org. पर सम्पर्क किया जा सकता है।* ***अनुवाद*** *: मदन सोनी*



15 गणित की रचनात्मक भाषा

स्नेहा टाइटस

विश्वविद्यालय–पूर्व स्तर पर गणित पढ़ाने को हमेशा से एक ऐसी बेगार के बतौर देखा जाता रहा है जो विद्यार्थियों द्वारा उन महत्वपूर्ण परीक्षाओं को तवज्जो दिए जाने के चलते हमेशा दरकिनार होती रहती है जिन पर विद्यार्थियों को हर ओर से यही सलाह मिलती है कि यह *या तो तुम्हारी जिन्दगी बना देगी या फिर उसे बिगाड़ कर रख देगी* । तिस पर आप इसमें जोड़ दीजिए तमाम विषयों से लदे आई.एस.सी. पाठ्यक्रम और हाईस्कूल गणित से ऊँची छलाँग में लगने वाली कड़ी मेहनत! कोई आश्चर्य नहीं कि इस सबके चलते नवाचार और रचनात्मकता को ठण्डे बस्ते में डलवा दिया जाता है और फिर सारा ध्यान, विद्यार्थियों को अपनी 'जिन्दगी बनाने' के लिए तैयार करने में खर्च कर दिया जाता है। पर क्या आप नए पन और सृजन के बगैर किशोरावस्था की कल्पना कर सकते हैं? क्या हम उनसे यह नहीं सुनना चाहेंगे कि उस विषय को लेकर वे क्या सोचते हैं जो हम उन्हें पढ़ाते हैं? विद्यार्थी चाहते हैं कि उनके विचार दूसरों द्वारा सुने जाएँ। और जब कक्षा में इस बात की गुंजाइश न बनती हो तो पाठ्यक्रम की शुरुआत, लेखन अभ्यास से करने पर मुझे अपने विद्यार्थियों का परिचय कमोबेश जल्दी मिल जाता है। ऐसे में सबसे पहले तो मैं उनसे एक निबन्ध ऐसा लिखवाती हूँ जो उन्हें अपने गणित के अनुभवों और उसके प्रति उनके रवैये को सबसे साझा करने के लिए प्रेरित करता है। ऐसा ही एक निबन्ध साल 2001 की फिल्म 'अ ब्यूटीफुल माइण्ड' को लेकर था। मैंने इस उद्धरण का इस्तेमाल किया – "वह टाई कितनी बुरी है! इस बात का एक गणितीय कथन तो होना ही चाहिए।" मैंने विद्यार्थियों से पूछा, "क्या आप जॉन नैश के इस बुनियादी विचार से सहमत हैं कि गणित सर्वव्यापी है? किन्हीं अनपेक्षित स्थितियों में गणित के साथ हुई आपकी कुछ अचानक मुलाकातों के बारे में लिखिए।" जब अपने घर से दूर रह रहे एक अन्तर्राष्ट्रीय विद्यार्थी ने अपने अल्पसंख्यक होने की बात कही और बताया कि किस प्रकार उसकी भावनाओं का रिश्ता तादाद से बनता है तभी मैं समझ गई कि इस अभ्यास ने वह कमाल कर दिखाया है जो कोई कॉउन्सलर न कर सका – किसी किशोर लड़के को अपनी भावनाओं के बारे में बात करने के लिए तैयार कर पाना! कई विद्यार्थी गणित के प्रति नकारात्मक भावनाएँ रखते हैं। सो इस सच्चाई को 'कड़वी लेकिन अच्छी दवा' की तरह बरतने की बजाय उसे स्वीकार करते हुए सम्बोधित करना जरूरी होगा।

लिखने से तार्किक विचार और एक वाजिब तर्क को प्रस्तुत करने का कौशल विकसित होता है और गणित में इन दोनों ही कौशलों को बहुत मान दिया जाता है। इसीलिए, मैं शैक्षिक सत्र के दौरान प्राय: अँग्रेजी अध्यापक के साथ मिलकर लेखन अभ्यास का सहारा लेती हूँ। हम दोनों, लेखन कौशल व गणितीय शुद्धता के हिसाब से उस अभ्यास विशेष को परखते हैं। एक बार मैंने एक्सपोनेंशियल फंक्शन (घातीय फलन) e^x पर आधारित एक अभ्यास का चयन किया। इस फलन का एक विशेष गुणधर्म यह है कि इस फलन का व्युत्पन्न (परिवर्तन की दर) स्वयं फलन के बराबर ही होता है। लगता है इसी फलन से प्रेरित होकर गणितज्ञ जॅकब बर्नोली ने अपना मरसिया कुछ यूँ रचा था, "बदल गया हूँ, पर उठूँगा जरूर।" एक्सपोनेंशियल फंक्शन और उसका विलोम (लॉगॅरिथ्मिक फंक्शन) पढ़ने के बाद, विद्यार्थियों ने "बदल गया हूँ , पर उठूँगा भी जरूर।" वाक्यांश पर एक निबन्ध लिखा। अभ्यास के चलते विद्यार्थियों की आविष्कार–प्रवृत्ति, रचनात्मकता, वैयक्तिकता तथा परिवर्तन की प्रकृति की एक गहरी समझ उभरकर आई। निस्संदेह, गणितीय अनुशासन के साथ–साथ हमें उपरोक्त कौशल भी विकसित करने होंगे।

गणितीय सौंदर्य को दर्शाने के अनेक उदाहरणों में से एक है संख्याओं की एक श्रेणी। एक तरफ जहाँ इनमें कलात्मक पैटर्न देखे जा सकते हैं वहीं दूसरी ओर अक्सर दबाव में काम करने वाले विद्यार्थियों के पास इस खूबसूरती को ठहरकर देखने और समझ पाने का समय ही नहीं होता सो उन्हें यह सब, संख्याओं का एक ऐसा व्यूह दिखाई पड़ता है, जिसका उनके वर्तमान जीवन से कहीं से भी कोई नाता नहीं बनता। किसी श्रेणी का जोड़ निकालना खासतौर पर कठिन होता है। वैसे तो किसी अंकगणितीय श्रेणी (अरिथमेटिक सीक्वेंस) या ज्यामितीय श्रेणी (ज्यॉमेट्रिक सीक्वेंस) के योग के लिए आवश्यक सूत्र विकसित और याद किए जा सकते हैं लेकिन ग्यारहवीं कक्षा के विद्यार्थियों से उन श्रेणियों के जोड़ निकालने को कहा जाता है जिनकी संख्याओं का अन्तर अंकगणितीय या ज्यामितीय श्रेणी में होता है। मसलन, अंक श्रेणी 1+3+6+10+15+-------सम्भवत: अब तक आपने जान ही लिया होगा कि श्रेणी का अगला पद 21 है, इसलिए कि एक–के–बाद–एक करके संख्याओं के बीच का अन्तर यूँ बढ़ता जाता है 2, 3, 4, 5 इत्यादि। एक तरफ जहाँ, किसी उत्साही गणितप्रेमी को श्रेणी के n वें पद की अभिव्यक्ति पाने और n पदों के योग की गणना करने में भी बड़ा मजा आता वहीं दूसरी तरफ विषय में अभी नए दाखिल हुए विद्यार्थियों को धड़ाधड़ सिद्धान्त पढ़ाना भी अक्सर मुश्किल होता है। इसीलिए एक बार जब दिसम्बर के महीने में यह विषय पढ़ाने का संयोग बना तो मुझे एक छात्रा को यह कहने में बिलकुल भी हिचक नहीं हुई कि वह क्रिसमस गीत को आधार बनाकर इस सवाल की इबारत बनाए। n पदों का योग जानने की बजाय उसके सामने चुनौती थी संख्याओं को जोड़े बिना यह जानना कि गायिका को उसके 'असली प्रेमी' द्वारा कुल कितने उपहार भेजे गए।

इस सन्दर्भ में मेरे द्वारा इस्तेमाल किए गए उत्प्रेरक प्रश्न थे –

- किस आधार पर यह एक श्रेणी है?
- कौन–कौन–सी श्रेणियाँ आप पहचान सकते हैं?
- अगर उसे हर दिन उपहारों का नया सेट मिला हो तो कुल मिलाकर लड़की को कितने उपहार मिले होंगे? (जैसा कि गीत में कहा गया है)
- अब यदि उस लड़की को हर दिन पुराने सेटों के संग्रह के साथ एक नया सेट भी मिले तो ऐसे में उसे कुल जमा कितने उपहार सेट मिलेंगे? (जैसा कि कोरस कहता है)

परिणामस्वरूप, नन्हे–नन्हे उपहारों से सुसज्जित एक सुन्दर बुलेटिन बोर्ड विकसित हुआ लेकिन सबसे महत्वपूर्ण वह पैटर्न था जो इन उपहारों से उभरकर आया था। इसी पैटर्न के बल पर उसे Tn (श्रेणी का n वाँ पद) और Sn (श्रेणी के n वाँ पदों का योग) के बीच का फर्क समझ आया और वह $Sn - 1/6\,(n)\,(n{+}1)\,(n+2)$ सूत्र की व्याख्या कर पाई। फिर जब उसने गणना के द्वारा उपहारों की कुल संख्या 364 बताई तब तो फिर इस बात पर गर्मागर्म बहस छिड़ गई कि साल के हर दिन एक उपहार पाना बेहतर होगा या क्रिसमस के 12 दिनों में इस विशेष सत्कार के द्वारा सारे 364 उपहार एक साथ पाना।

बारहवीं कक्षा का अन्त आते–आते, अवकल समीकरण (डिफ्रन्शियल इक्वेशन्स) नामक अध्याय में विद्यार्थियों से फलन (फंक्शन), अवकलन व समाकलन गणित (डिफ्रन्शियल व इन्टीग्रल कैल्कुलस) में उन्हें पढ़ाए गए अब तक के कमोबेश सारे गणित कर पाने की उम्मीद रखी जाती है। वे इसे पिछले दो सालों में अपने द्वारा की गई सारी मेहनत की पराकाष्ठा के बतौर देखते हैं, लेकिन सच्चाई तो यह है कि अपने द्वारा पढ़े और सीखे गए इस गणित का असल जीवन में इस्तेमाल करने से पहले उन्हें अभी और लम्बी यात्रा करनी पड़ेगी। लेकिन इस सारी कवायद से निश्चित ही उन्हें वास्तविक जीवन की स्थितियों से दो–चार होने और उनके गणितीय मॉडल बनाने का सलीका आ जाता है। और इसके लिए मर्डर मिस्ट्री (हत्या रहस्यकथा) से बढ़कर भला और क्या उदाहरण हो सकता है? अवकलन समीकरणों की भूमिका के बतौर यह सवाल मैंने कइयों बार इस्तेमाल किया है। (एक बार तो पूरी तरह से भयावह बुलेटिन बोर्ड सहित)।

,d lqg yxHkx 3 ct sQ¨u ds } kjk ifqy l d¨ ml ?kj ij cqyk;k tkrk gSt gk;gR;k ds ,d f'kdkj dh yk'k iM+h gSA ifqy l MkDVj lqg 3-45 ct sigqpdj eèr ng dk rkieku ysrk gS& 34-5 fMxzh l sfYl ;l A ,d ?k.Vs ckn MkDVj fQj ls rkieku ysrk gSt¨ fd 33-9 fMxzh ls ik;k tkrk gSA dejsdk rkieku yxHkx leku 15-5 fMxzh ls jgk vkrk gSA 'khry u lEcU/kh U;wVu dk fu;e dgrk gSfd 'kjhj dsB.Ms g¨usdh nj] 'kjhj dsrkieku v©j vkl ikl dsokrkoj.k ¼gok½ dsrkieku dsvUrj dslekuqikrh g¨rh gSA U;wVu ds'khry u fu;e d¨ ekud ekurs gq, eèrd dsejus dsle; dk vkdyu dhft,A ¼ekuo ds 'kjhj dk lkekU; rkieku 37-0 fMxzh ls g¨rk gSA½

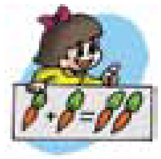
(यह उदाहरण अभ्यास एम.ई.आई. स्ट्रक्चर्ड मैथमॅटिक्स से साभार उद्धृत)

इस सवाल को हल करने के लिहाज से निम्न बातें अनिवार्य हैं –

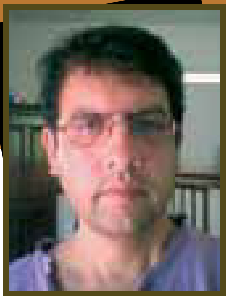
- दिए गए आँकड़ों के द्वारा एक गणितीय मॉडल बनाना
- सीमा शर्तें तय करना
- अवकलन समीकरणों में प्रयुक्त प्रतीकों को समझना
- किसी अवकलन समीकरण को हल करने के लिए परिवर्तियों के वियोजन की विधि का ज्ञान
- $\int 1/x\, dx$ and $\int 1/(x-a)\, dx$ के समाकलन का ज्ञान

शुरुआत में, नियत सीमा शर्तों के आधार पर अनुपातता व समाकलन के स्थिरांकों की गणना से विद्यार्थी अनभिज्ञ होते हैं। लेकिन दिलचस्प बात तो यह थी कि हरेक अध्याय के बाद वे लोग, समाधान के थोड़ा और करीब पहुँच जाते। अभ्यास का अन्त आते–आते मृत्यु के अनुमानित समय सम्बन्धी गणनाएँ कक्षा में यहाँ–वहाँ उड़ने लगीं। लेकिन सेहरा उसी के सिर बँधा जिसने समाधान का सम्पूर्ण तर्क प्रस्तुत किया और जिसने सही हल तक पहुँचने की प्रक्रिया के दौरान सारे जरूरी गणितीय कदम उठाए। इस तमाम कवायद की सबसे अहम बात यह है कि समाधान तक पहुँचने की सारी प्रक्रिया में विद्यार्थी, समाकलन के स्थिरांकों जैसी प्रत्यक्षतः मामूली दिखने वाली जानकारियों, किसी फलन के बढ़ने की दर और मृत्यु के समय पर पड़ने वाले उसके प्रभाव, गणित द्वारा प्रदत्त सुविधाएँ (जैसे कि गणना के सन्दर्भ में समय का शुरुआती बिन्दु यानी कि $t = 0$ चुनने की सुविधा), स्वतन्त्र व निर्भर चर संख्याओं का तात्पर्य आदि आदि। समस्या सुलझाने से बेहतर और कोई तरीका नहीं हो सकता, फिर चाहे आप बच्चों से कितनी भी परिभाषाएँ क्यों न लिखवा लें।

हाल में, डाइनेमिक ज्यॉमेट्री सॉफ्टवेअर व ग्राफिंग कैल्कुलेटर्स का इस्तेमाल कर टेक्नॉलॉजी–कुशाग्र शिक्षक अपनी गणित कक्षाओं में विज्युअल पक्ष भी ले आए हैं। इनसे विद्यार्थी न सिर्फ स्वतन्त्र रूप से गणितीय अन्वेषण कर पाने में सक्षम होते हैं बल्कि गणित की गूढ़ पदावली का असल आशय भी समझ पाते हैं। हालांकि, इतनी मात्रा में टेका देने वाला ऐसा एक गणितीय अनुसन्धान प्रयोग रच पाना जिसमें कि कोई भी विद्यार्थी स्वतन्त्र रूप से बिना किसी की मदद के अपना काम कर सके, अध्यापक से कुछ हुनर कुछ चतुराई की उम्मीद रखता है। लेकिन ऐसी गतिविधियाँ ही विशिष्ट प्रकार की (प्रयोग आधारित) शिक्षा की गुंजाइश देती हैं जिसमें विविध प्रकार की बुद्धिमत्ताएँ प्रयोग में आती हैं। अपनी रचनात्मकता को प्रयोग में लाने और कक्षा में नवाचार कर सकने का इससे बेहतर सबब भला और क्या हो सकता है?



__स्नेहा__ अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन के साथ काम करती हैं। इसके साथ ही वे, ग्रामीण व शहरी स्कूलों के शिक्षकों का मार्गदर्शन भी करती हैं। विद्यार्थियों व शिक्षकों को प्रोत्साहित करने व उन्हें सिखाने के हिसाब से वे, आधुनिक टेक्नॉलॉजी से लैस शैक्षिक विधियों व गेम्स, पहेलियों और कथाओं का इस्तेमाल करती हैं। अपने 20 साल लम्बे पूर्णकालीन अध्यापकीय जीवन को छोड़ स्नेहा, हर आयु वर्ग के विद्यार्थियों में लॉजिक (तर्क विज्ञान) व गणित के प्रति एक अनुराग जगाने के महत्वपूर्ण काम में लगी हैं। उनसे sneha.titus@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। __अनुवाद__ : मनोहर नोतानी



16 ज्ञान का माध्यम – ताश का खेल ब्रिज

अमरेश देशपाण्डे

पृष्ठभूमि

संयुक्त राष्ट्रसंघ के शैक्षिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक संगठन (यूनेस्को) की 1996 की एक रिपोर्ट के अनुसार: मौजी तबीयत का एक उद्बोधक मनोरंजन होने के नाते ताश के पत्तों का खेल ब्रिज हमारी बौद्धिक क्षमताओं और दूसरों को लेकर हमारा ज्ञान बढ़ाने में सहायक हो सकता है। अपनी इसी सोच के चलते यूनेस्को ने शाला स्तर पर व युवा लोगों में ब्रिज को लोकप्रिय बनाने के काम में विश्व ब्रिज महासंघ (फेडरेशन) को अपनी मदद देना स्वीकार किया है।

ब्रिज सीखने के लाभ

ब्रिज से हमारे मस्तिष्क के दाएँ और बाएँ, दोनों हिस्से सक्रिय होते हैं। इसके नतीजतन, धैर्य, एकाग्रता, तर्क, कल्पना, पार्श्वीय सोच (लॅटरल थिंकिंग), अभिव्यंजना, गणना, स्मृति, बहु–उद्यमिता, चित्रात्मकता व सामाजिक सहयोग सम्बन्धी हमारा कौशल बढ़ता है।

खासतौर पर, मुझे तो ब्रिज, गणित को लेकर कक्षा में छाए आतंक और घटती एकाग्रता की एक अचूक दवा लगता है।

गणित का आतंक

विकीपीडिया का एक पूरा का पूरा पन्ना गणित की घबराहट को समर्पित है। एक बच्चे में 'गणित के हौव्वे' की यह नौबत पहले दर्जे में ही आ सकती है और जहाँ–जहाँ गणित औपचारिक ढंग से पढ़ाया जाता है उन समाजों में यह पीड़ा सिरे से व्याप्त है।

जब बच्चे यह कहते हैं कि गणित उनके पल्ले नहीं पड़ता तब उनका यह बयान उनकी भावनात्मक मनोदशा का परिचायक होता है न कि उनकी बौद्धिक क्षमता का। और तो और एक सूझ–बूझदार व संवेदनशील शिक्षक भी जब कागज या बोर्ड पर 'x' और 'y' लिखता है या एक त्रिभुज बनाता है तो वे अपने उसी मनोजगत में पहुँच जाते हैं जिसमें डर / घृणा/ अरुचि ही व्याप्ते हैं। ऐसे में अपनी इस मनोदशा से पार पाने में उन्हें कुछ वक्त लगता है; लेकिन आज के इस भागमभाग भरे जीवन में वक्त कहाँ!

हर स्तर के स्कूली उम्र के बच्चों को अनौपचारिक ढंग से गणित पढ़ाने के अपने अनुभव के चलते मुझे लगता है कि इस गणित–व्यथा से विषय के बाहर से ही निपटा जा सकता है, उसके अन्दर से नहीं। किस्सा कोई तीन बरस पुराना है। ऑरोविल के तीन स्कूलों में शहरी व ग्रामीण बच्चों को पढ़ाने के दौरान एक संकटमोचक उपाय के बतौर ब्रिज का मुझे ख्याल आया। कारण कि एक सहमे हुए बच्चे में गणित को लेकर जो खौफ रहता है, ताश के पत्तों को लेकर वह डर उसमें निश्चित ही नहीं रहता। इस तरीके से ब्रिज के खेल के कुछ चुनिन्दा आयामों का इस्तेमाल कर रहे बच्चे की मानसिकता में यह बुनियादी समर्थकारी परिवर्तन लाया जा सकता है कि वह सोचने लगता है कि वह भी (अपने बूते) सोच सकता है। यहाँ उसे तर्क / समस्या–समाधान एकदम सहज दीखने लगते हैं, बस फिर गणित का हौव्वा हवा हो जाता है और वह चुटकी का खेल लगने लगता है। विद्यार्थी में इस तरह की मनोवैज्ञानिक पलटी उतनी ही बुनियादी है जितनी कि साइकिल चलाना या पानी में तैरना सीखने के दौरान खाई जाने वाली पलटी। सो जिस प्रकार एक बार साइकिल चलाना या तैरना सीख लेने के बाद उसे फिर कभी भूला नहीं जा सकता, उसी तरह जिस विद्यार्थी ने एक बार जो गणित को आत्मसात कर लिया तो फिर वह उसे कभी भूल नहीं सकता। आत्मीयकरण के इस बिन्दु तक तो पहुँचना ही होगा – और वहाँ तक पहुँचने के लिए ब्रिज एक अच्छा सेतु बन सकता है।

घटती एकाग्रता

स्कूल के बाद उनका अधिकांश समय फेसबुक, ट्विटर, एसएमएस, वीडियो गेम्स, इण्टरनेट और टीवी पर पर बीतने के चलते, आजकल के बच्चे कुछ ज्यादा ही उत्तेजित रहते हैं। इस सबके नतीजतन, कक्षा में बच्चे अधीर और उचाट रहते हैं, सो उनकी एकाग्रता भी लगातार घटने लगी है। अब चूँकि पढ़ाई कभी इस अथक उत्तेजना का मुकाबला नहीं कर सकती, विद्यार्थी जल्द ही उकताने लगते हैं। निस्संदेह, ठेठ इसी उत्तेजना के चलते आज के बच्चे हर प्रकार से तेजतर्रार हो चले हैं, लेकिन पिछली पीढ़ी की समान रूप से महत्वपूर्ण बहुत सी क्षमताएँ लुप्त भी हो चली हैं। इनमें शामिल हैं शान्त और धीर हो कोई पुस्तक पढ़ना या फिर मोटेतौर पर ऐसी किसी गतिविधि में लीन होना जो पूरा होने में समय लेती है और जिसमें मैगी नूडल्स जैसा फटाफट सन्तोष नहीं मिलता हो।

ब्रिज पर बंगलौर इण्टरनेशनल स्कूल में हुई एक कार्यशाला से मिले अनुभव के आधार पर मुझे लगता है कि आधुनिक कक्षा में अतिउद्वेलित और अधीर बच्चों की इस विश्वव्यापी समस्या का ब्रिज एक उम्दा जवाब हो सकता है। इस सन्दर्भ में मुझे कक्षा पाँच के दो बच्चे – *ए* और *जे* – विशेष रूप से याद आते हैं।

ये दोनों यूँ तो खुराफाती बच्चे हैं, लेकिन कुछ अलग अन्दाज से। *ए* अपनी ही दुनिया में खोया (बेसुध) शान्त बच्चा है, जबकि *जे* जो है, ऊधमी है, अराजक है। शुरू–शुरू में *ए* को अपने विचार ठीक से गूँथने में परेशानी होती। दरअसल वह उतावला हो जाता और हड़बड़ी में बेतुके अटकलपच्चू–से जवाब देता। पर चूँकि उसे यह खेल अच्छा लगता था सो वह लगा रहा और क्रमशः सोचे–समझे और सटीक जवाब देना सीख गया। ज्यों–ज्यों कार्यशाला आगे बढ़ी *ए* महाशय लगातार जटिल होती जाती परिस्थितियों से पार पाने में सफल होते चले, गाहे बगाहे मन ही मन में, जिसमें वाकई मेज पर ताश के पत्तों की चाल के मुकाबले कहीं बहुत ज्यादा एकाग्रता लगती है।

जहाँ तक *जे* की बात है तो कक्षा में सबसे तेज होने के चलते समस्या से पार पाने में उसे बमुश्किल ही कुछ वक्त लगता (जिसमें से ज्यादातर तो वह मन ही मन निपटा लेता था)। कार्यशाला के दौरान *जे* ने कभी भी अपना जाना–पहचाना विध्वंसक रूप नहीं दिखाया केवल एक मौके को छोड़ जब अपने एक सहपाठी से वह बहुत नाराज हो गया – अपने इस सहपाठी को परे धकेलकर अपने पत्ते जमीन पर फेंक वह वहाँ से चलता बना था। मेरे ख्याल से गलती उसके सहपाठी की ही थी क्योंकि वही *जे* को भड़का रहा था। बल्कि *जे* को तो मैंने हरदम उत्साही ही पाया, तब भी जब मैं उसे अपने उन साथियों की मदद करने को कहता जो कि अपनी चाल की उधेड़बुन में फँसे दीखते। लेकिन उसकी मदद हरदम काम न आती क्योंकि अपनी समझाइश में वह बड़ा ताबड़तोड़ था और जल्दी न समझे जाने पर झल्ला या ऊब जाता। ऐसे में मेरा दायित्व यह हो गया था कि जे को किसी तरह मुश्किल सवालों में उलझाए रखा जाए। अब चूँकि कार्यशाला की बुनावट ही ऐसी थी जो भिन्न–भिन्न क्षमताओं को अपनी गति से चलने की गुंजाइश देती, सो *जे* को चालाकी से ढंग से लम्बे समय तक काम में लगाए रखना सम्भव हुआ।

ब्रिज आखिर क्यों नहीं दुनिया भर के स्कूलों में अपनी पैठ बैठा पाया है?

सन् 2005 में बिल गेट्स व वॉरेन बफेट ने अमेरिकी स्कूलों में ब्रिज पढ़ाए–सिखाए जाने के लिए दस लाख डॉलर दान दिए थे। लेकिन इसका परिणाम कुछ खास न निकला। इस उदार व साझा पहल के अलावा, दुनिया भर के स्कूलों में ब्रिज शुरू करने के और भी कई विनम्र प्रयास हुए हैं। लेकिन इण्टरनेट पर उपलब्ध जानकारी से तो नहीं लगता कि एक भी टिकाऊ और शैक्षिक रूप से दृढ़ अध्यापन कार्यक्रम कहीं चला हो।

अतीत में, ब्रिज सिखाने की शुरुआत मोटेतौर पर बोली लगाने (बिडिंग) से हुई थी। जहाँ तक समझने की बात है तो बच्चों की बात तो खैर क्या करें, ज्यादातर बड़ों के लिए भी यह विषय कुछ ज्यादा ही कठिन होता है।



लेकिन समय के साथ ठेठ ब्रिज पर हाथ आजमाने से पहले अन्तरिम खेल के बतौर मिनी ब्रिज नामक खेल लाया गया। अब मिनीब्रिज जो है बिडिंग को बाइपास करते हुए इसकी बजाय ब्रिज के ट्रिक–टेकिंग (पत्ते चलना) पक्ष पर ज्यादा ध्यान देता है। पर मुश्किल यह है कि मिनीब्रिज सिखाने के लिए अगर कोई खड़ूस ब्रिज खिलाड़ी या शिक्षक पल्ले पड़ गया तो ऐसे टीचर के चलते तो यह खेल भी कुछ ज्यादा ही बौद्धिक या किताबी लगने लगेगा।

दरअसल, समस्या की जड़ भी यहीं और यही है। अब चूँकि स्कूल अध्यापक आमतौर पर ब्रिज खेलना जानते ही नहीं; इसलिए स्कूली विद्यार्थियों को ब्रिज / मिनी ब्रिज सिखाने के लिए अक्सर किसी ब्रिज खिलाड़ी या ब्रिज टीचर को ढूँढ़ा जाता है, लेकिन उन्हें तो बच्चों के साथ काम करने का अनुभव होता ही नहीं।

और भारतीय सन्दर्भ में मामला और भी पेचीदा हो जाता है, क्योंकि अपने यहाँ तो ताश के बावन पत्ते मतलब जुआ।

ब्रिज–शिक्षण हेतु विकसित हुई पद्धतियाँ

यहाँ मैं उन ओपन–कार्ड प्रॉब्लम्स (खुली पत्ती चाल) को लेकर अपनी बात शुरू करता हूँ जिन्हें ब्रिज की दुनिया में *डबल डमी* समस्याओं के नाम से जाना जाता है। ये शतरंज के एण्डप्लेस (endplays) के समान ही होती हैं – शतरंज की बिसात पर बिछे हुए मोहरों की तरह ही इनमें भी सारे पत्ते हर समय मेज पर मौजूद हर खिलाड़ी को दिखते रहते हैं।

मेरी खुली–पत्ती चालों की खासियत यह है कि कोई भी पत्ता विशेष पत्तों के पीछे बैठे व्यक्ति का नहीं होता और नॉर्थ (एन) और साउथ (एस) सीटों पर बैठे खिलाड़ी ईस्ट (ई) और वेस्ट (डब्ल्यू) सीटों पर बैठे खिलाड़ियों के विरुद्ध नहीं खेल रहे होते हैं। बल्कि इनमें नॉर्थ–साउथ पत्ते, ईस्ट–वेस्ट पत्तों के खिलाफ खेल रहे होते हैं।

ओपन–कार्ड (खुली पत्ती) खेलते–खेलते विद्यार्थी शान्त रहने और हड़बड़ी न करने का मूल्य समझने लगते हैं; सामने खड़ी चुनौती या काम पर एकाग्र करने लगते हैं और मेज पर अपनी स्थिति से निरपेक्ष समस्त चारों दिशाओं (उ, द, पू, और प) से सम्भावित विभिन्न प्रकार के घटनाक्रमों के मद्देनजर स्वतंत्र रूप से सोचना शुरू कर देते हैं; और फिर अधिकतम चार विद्यार्थियों वाले अपने छोटे समूह में आपस में सलाह–मशविरा करते हुए एक साथ सर्वोत्तम समाधान पर पहुँचते हैं; और अन्त में बाकी सारी कक्षा के सामने अपने समूह द्वारा सोचा गया समाधान (सही या गलत, चाहे जो हो) प्रस्तुत करते हैं। समस्या हल करने के इस सहयोगात्मक तरीके के चलते होड़ का तत्व सिरे से खारिज हो जाता है क्योंकि वहाँ तो व्यक्तिगत स्तर पर किसी खिलाड़ी के जीतने या हारने का मसला ही नहीं होता; बल्कि वहाँ तो जीत या हार एन–एस (उ–द) या ई–डब्ल्यू (पू–प) पत्तों की होती है।

प्रतिद्वन्द्विता के चलते मुँह तोड़ जवाब देने की प्रवृत्ति पनपती है और इसमें समूह के बहुसंख्यक सदस्यों पर चन्द 'तेज' / फुर्तीले / बड़बोले लोगों के मनोवैज्ञानिक प्रभुत्व (दादागिरी) जमने का खतरा रहता है। जबकि मेरे ख्याल से सहयोगपूर्ण और गैर–प्रतिस्पर्धी तरीका समस्या–समाधान का एक बेहतर तरीका है। इसमें (एक छोटे समूह में) हरेक को अपनी बात और तर्क रखने का मौका मिलता है ताकि उसके समूह के अन्य सदस्य अपने तर्कों के बरक्स उसके द्वारा प्रस्तुत तर्कों की संगतता परख सकें – कुल मिलाकर इसके पीछे सोच यह है कि हरेक को अपनी बात कहने और दूसरों की बात सुनने का मौका मिले, फिर चाहे कोई बात सही हो या गलत। सारा जोर अन्तर्निहित प्रक्रिया और उसके अनुपालन पर होता है न कि 'सही' परिणाम

पर। इस प्रकार, डाँट–डपट रहित माहौल में लगभग सभी सम्भावनाओं / जवाबों पर सविस्तार चर्चा होती है।

ओपन–कार्ड सवालों से मैं अपने विद्यार्थियों को पहले तो चुनिन्दा ब्रिज सॉफ्टवेअर पर ले जाता हूँ। ये सॉफ्टवेअर खेल के ट्रिक–टेकिंग (पत्ता चलने के) पक्ष पर केन्द्रित रहते हैं (जिसके दौरान वे पैटर्न पहचानकर ओपन–कार्ड समस्या–समाधान से अर्जित उपयुक्त तकनीकों को बावन पत्तों से उपजे समस्त घटनाक्रम पर लागू करते हैं)। इसके बाद मैं अपने बच्चों को मिनीब्रिज खेल खिलाता हूँ जहाँ वे अपने समूह की खींचतान से दो–चार होते हैं। और आखिर में उन्हें मैं ब्रिज का पूरा खेल खिलवाता हूँ।

ग्रामीण व शहरी स्कूलों के लिए ब्रिज प्रोग्राम बनाना

अनुभवी पाठ्यक्रम समन्वयकों के साथ मिलकर एक विस्तृत सिलेबस बनाकर एक साल तक कुछेक इच्छुक स्कूलों में खिलाकर उसे परखा जा सकता है। कुल मिलाकर, कक्षा एक से लेकर कक्षा नौ की गणित की पाठ्य–पुस्तकों में ब्रिज को चरणबद्ध तरीके से शामिल किया जा सकता है।

इसके बाद शिक्षक–प्रशिक्षण कॉलेजों व संस्थानों में (वैकल्पिक) पढ़ाए जाने के लिए एक प्रशिक्षण कार्यक्रम बनाया जा सकता है, ताकि युवा अध्यापकों को इस खेल का कामकाजी ज्ञान हो।

अब चूँकि भारतीय भाषाओं में ब्रिज की किताबें नहीं हैं सो



कुछ महत्वपूर्ण पुस्तकों का भारतीय भाषाओं में अनुवाद किया जाना होगा ताकि सन्दर्भ सामग्री विकसित हो सके।

ओपन–कार्ड समस्या का एक उदाहरण

(शतरंज खेलता एक अकेला व्यक्ति अमूमन, सफेद व काले, दोनों ही मोहरों के साथ ईमानदारी से और बेहतर तरीके से खेलने की कोशिश करेगा जिसके चलते उसे दोनों पक्षों का परिप्रेक्ष्य हासिल होगा। ठीक उसी तरह, इस ओपन–कार्ड प्रॉब्लम में भी खेलने वाले व्यक्ति/यों को उत्तर, पूर्व, दक्षिण और पश्चिम तरफ से निष्पक्ष ढंग से एक बेहतर खेल दिखाना चाहिए।)

नियम: नॉर्थ व साउथ कार्ड्स एक टीम हैं जो ईस्ट व वेस्ट कार्ड्स वाली टीम के विरुद्ध खेल रही है। सभी चार रंग के पत्तों / कार्ड सेटों (हुकुम, पान, ईंट और चिड़िया के पत्ते) की हैसियत एक–सी है – और एक प्रकार के कार्ड सेट में ऊपर से नीचे की हैसियत (मूल्य) इस प्रकार है : इक्का, बादशाह, रानी, गुलाम, दहला, नहला, अट्ठा, सत्ता, छक्की, पँजी, चौकी, तिक्की, दुक्की। अब इस खेल का लक्ष्य है कि नॉर्थ, ईस्ट, साउथ और वेस्ट पर बैठे खिलाड़ियों में से प्रत्येक खिलाड़ी को अपनी टीम के लिए चाल चलना है। एक चाल में चार पत्ते खेले जाते हैं और सबसे ऊँचा पत्ता वह चाल जीत जाता है। खेल में उसी रंग का पत्ता चलना जरूरी होता है यानी हुकुम का पत्ता चलने पर (घड़ी की दिशा में चलते हुए) अगले खिलाड़ी को भी हुकुम का ही पत्ता फेंकना पड़ेगा; अगर चाल चलने वाले खिलाड़ी के पास उसी रंग का पत्ता नहीं है तो वह डिस्कार्ड (रद्द) करता है यानी कि वह दूसरे रंग का ऐसा पत्ता फेंकता है जिसकी उसे कोई जरूरत नहीं होती या कम जरूरत होती है। डिस्कार्ड करने वाला व्यक्ति कभी वह चाल नहीं जीत सकता, फिर चाहे उसके द्वारा डिस्कार्ड के बतौर फेंका गया पत्ता (कार्ड) कितना भी बड़ा क्यों न हो। जो भी वह पहली चाल जीतता है वही व्यक्ति अपनी चाल चलकर दूसरी चाल भी शुरू करता है, और फिर दूसरी चाल जीतने वाला व्यक्ति तीसरी चाल शुरू करता है आदि आदि। हरेक खिलाड़ी द्वारा श्रेष्ठतम पत्ता चलते हुए ही नियत (प्रदत्त) स्कोर पर पहुँचा जाना चाहिए – जो

कि समस्या के समाधान से स्पष्ट हो जाएगा।

स्थिति: दिए गए चित्र अनुसार मेज पर 12 पत्ते खोलकर बिछाएँ।

लक्ष्य : नॉर्थ से शुरू करते हुए नॉर्थ–साउथ टीम के लिए (कुल मिलाकर) तीन चाल जीतना। खेल के दौरान प्रत्येक खिलाड़ी को अपनी उत्तम चाल चलना होगा।

समाधान

गलत जवाब : 1

चाल 1: नॉर्थ पहला पत्ता चलता है – चिड़ी का इक्का, ईस्ट चिड़ी की रानी डालकर उसे फॉलो करता है, साउथ ईंट की दुक्की चलकर डिस्कार्ड करता है और वेस्ट पान का गुलाम चलकर डिस्कार्ड करता है। इस तरह नॉर्थ पहली चाल जीत जाता है।

चाल 2: नार्थ दूसरी चाल, ईंट का अट्ठा फेंककर शुरू करता है, ईस्ट हुकुम का इक्का फेंक डिस्कार्ड खेलता है, साउथ ईंट का इक्का चल फॉलो करता है, जबकि वेस्ट पान का इक्का डिस्कार्ड करता है। इस प्रकार साउथ यह चाल नं. 2 जीत जाता है।

चाल 3: तीसरी चाल की शुरुआत साउथ पान के बादशाह से करता है, वेस्ट पान की रानी फेंककर चाल का अनुसरण (फॉलो) करता है, नॉर्थ चिड़िया की दुक्की डिस्कार्ड करता है और ईस्ट चिड़ी का राजा डिस्कार्ड करता है। चाल नं. 3 साउथ जीतता है।

ऐसा लगता है कि नॉर्थ–साउथ ने तीन चाल जीतने का अपना तय लक्ष्य पा लिया (चाल नं. 1 नार्थ के हाथ लगी तो चाल नं. 2 और 3 साउथ ने जीतीं), सिर्फ इसलिए कि वेस्ट ने दूसरी चाल में अपना बढ़िया (छोटा से छोटा) पत्ता डिस्कार्ड नहीं किया। दूसरी चाल में वेस्ट द्वारा ईमानदारी से अपनी पान की रानी फेंकना (डिस्कार्ड करना) नोट करें क्योंकि वह ताड़ लेता है कि तीसरी चाल की शुरुआत साउथ पान के बादशाह से करने वाला है। नियमानुसार तीसरी चाल वेस्ट द्वारा जीत ली जाएगी क्योंकि पान का इक्का साउथ द्वारा चले जाने वाले आखिरी पत्ते पान के बादशाह को हरा देगा।

गलत जवाब : 2

चाल नं 1: नॉर्थ ईंट का अट्ठा चलता है, ईस्ट चिड़ी की रानी डिस्कार्ड करता है, साउथ ईंट की दुक्की चलकर फॉलो करता है और वेस्ट पान का गुलाम डिस्कार्ड करता है। नॉर्थ पहली चाल जीत जाता है।

चाल नं 2: दूसरी चाल के बतौर नॉर्थ चिड़ी का इक्का फेंकता है, ईस्ट चिड़ी का बादशाह चलकर फॉलो करता है, साउथ पान का बादशाह डिस्कार्ड करता है और वेस्ट पान की रानी डिस्कार्ड करता है। दूसरी चाल नॉर्थ जीतता है।

चाल नं 3: नॉर्थ चिड़ी की दुक्की का चाल चलकर तीसरी चाल शुरू करता है, ईस्ट हुकुम का इक्का फेंक डिस्कार्ड करता है, साउथ ईंट का इक्का फेंक डिस्कार्ड करता है और वेस्ट जो है अपना पान का इक्का डिस्कार्ड करता है। नॉर्थ चाल नं. 3 जीत जाता है।

इस बार लगता है कि अकेले नॉर्थ ने ही तीन चाल जीतने का लक्ष्य प्राप्त कर लिया है, लेकिन वह भी केवल इसलिए कि पहली चाल में ईस्ट ने अपना श्रेष्ठ पत्ता डिस्कार्ड नहीं किया। यहाँ यह नोट करें कि पहली चाल में ईस्ट द्वारा हुकुम का इक्का फेंके जाने पर क्या होता है। तीसरी चाल ईस्ट जीत लेगा क्योंकि उसके पास चिड़ी का पत्ता बचेगा जो नॉर्थ द्वारा चली गई चिड़ी की दुक्की को हरा देगा।

सही जवाब

चाल नं 1: नॉर्थ चिड़ी के इक्के से चाल शुरू करता है, ईस्ट चिड़ी की रानी से उसका जवाब देता है, साउथ अपने पान के बादशाह को फेंक

कर रद्द करता है (चूँकि उस पत्ते को अगर बचाकर रखा गया तो अन्त में वह वेस्ट द्वारा चले गए पान के इक्के से मात खा जाएगा) और वेस्ट अपना पान का गुलाम बर्बाद (डिस्कार्ड) करता है। नॉर्थ पहली चाल जीत जाता है।

चाल नं. 2: नियमानुसार दूसरी चाल की शुरुआत नॉर्थ ईंट का अट्ठा चलकर करता है, ईस्ट हुकुम का इक्का डिस्कार्ड करता है (पहले गलत जवाब से सीख लेकर अगर साउथ अपना चिड़ी का पत्ता बचाते हुए ईंट की दुक्की चले तो), साउथ ईंट की दुक्की चल फॉलो करता है और वेस्ट (गलत जवाब नं. 2 से सीख लेते हुए) पान की रानी डिस्कार्ड करने की सही चाल चलता है। साउथ चाल नं. 2 जीत जाता है।

चाल नं. 3: तीसरी चाल के लिए साउथ ईंट की दुक्की फेंकता है, वेस्ट अपना पान का इक्का रद्द करता है, नॉर्थ चिड़ी की दुक्की डिस्कार्ड करता है और ईस्ट चिड़ी का राजा डिस्कार्ड करता है। इस प्रकार साउथ चाल नं. 3 जीत जाता है।

इस सही जवाब में नॉर्थ, ईस्ट, साउथ और वेस्ट, चारों अपनी टीम के हित में अपनी श्रेष्ठ चाल चले – और नॉर्थ–साउथ टीम द्वारा तीन चाल जीतने का लक्ष्य भी पा लिया गया।



*कई सालों तक **अमरेश** कोडईकनाल के नजदीक एक फार्म पर काम करते रहे और कोडईकनाल इण्टरनेशनल स्कूल के विद्यार्थियों को सैट परीक्षा और कभीकभार कहानियाँ लिखने की तैयारी कराते थे। अब वे भारत भ्रमण करते हैं और देश भर के खुले विचार वाले स्कूलों में प्राथमिक, माध्यमिक व बड़ी कक्षाओं के बच्चों और उनके शिक्षकों के लिए ब्रिज कार्यशालाएँ करते हैं। इसके साथ ही वे म.प्र. के अनूठे ब्रिज–खेलू गाँव राइबिडपुरा से भी जुड़े हैं (http://bridgebhasha.wordpress.com/). । बीच–बीच में वे नौनिहाल पौधों की रक्षा के लिए उन्हें पतवार इत्यादि से ढँकते हैं और उनके आसपास फैली खरपतवार को काटते हैं। उनसे amaresh.deshpande@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद** : मनोहर नोतानी*



17 चार गणितीय क्रियाओं की कहानी

v ewZv o/kkj .kkv ksa d s f'k{k.k d k ,d d Yiuk'khy ç; ksx

रेणु भाटिया और
स्मिता माल्या

गणित का अध्यापन शिक्षा के क्षेत्र का बहुचर्चित विषय है। बहुत सारे बच्चे इस विषय को लेकर शुरुआत से ही एक भय पाल लेते हैं और अक्सर अध्यापक भी इस विषय को बरतने के मामले में लगातार डरे हुए रहते हैं – इसे अक्सर उन सहयोगियों के जिम्मे छोड़ दिया जाता है जो इसके 'विशेषज्ञ' माने जाते हैं। स्टाइनर–वाल्डोर्फ स्कूल की कक्षा–शिक्षिका के रूप में आपके पास सिवा इसके और कोई विकल्प नहीं होता कि आप इस विषय की तह में जाएँ और अपनी कक्षा में इसको पढ़ाने का ऐसा सबसे रचनात्मक तरीका ईजाद करें कि आपके मन में यह उम्मीद पैदा हो सके कि इससे विद्यार्थी के मन में संख्याओं के प्रति हमेशा–हमेशा के लिए लगाव पैदा हो जाएगा। चूँकि स्टाइनर स्कूल में एक कक्षा–शिक्षिका 1 से 8 तक के कक्षा–समूह को पढ़ाती है, वह जानती है कि यह काम बेमन से नहीं किया जा सकता, क्योंकि अपर्याप्त समझ की वजह से जो समस्याएँ शुरुआती वर्षों में ही पैदा हो जाती हैं, उन्हें बाद में आपको ही भुगतना पड़ता है।

जोड़, घटाना, गुणा और भाग की चार गणितीय क्रियाओं (जो भविष्य में पढ़ाए जाने वाले गणित की बुनियाद होती हैं) का परिचय एक साथ कक्षा 1 या 2 में दिया जाता है और अक्सर यही वक्त होता है जिसकी अभिभावक और अध्यापक दोनों ही बेचैनी के साथ प्रतीक्षा करते हैं। "यह किस तरह होगा?" "क्या विद्यार्थी हर क्रिया की अवधारणा को समझ लेंगे?" "सारे किस्सों और खेलों के बाद क्या वे चिह्नों को सम्बन्धित क्रियाओं के साथ जोड़ पाएँगे?" "वह वक्त कब आएगा जब वे उस स्तर पर पहुँच जाएँगे जहाँ वे बिना किसी किस्से की मदद के अमूर्त चिह्नों के सहारे जोड़–घटाना आदि की ये क्रियाएँ करने लगेंगे?" "क्या वे समझ पाएँगे कि गणित महज एक ऐसी अवधारणा नहीं है जिसको एक पद्धति के सहारे याद भर कर लेना है बल्कि उसके चमत्कार जीवन के हर क्षेत्र में प्रासंगिक हैं?" 3 Rs के एक स्तम्भ के रूप में आप इन किशोर विद्यार्थियों की, शिक्षा की उनकी आगे की यात्रा के दौरान बहुत सारी चीजें सीखने में मदद करने की दृष्टि से गणित को एक रचनात्मक तरीके से पेश करने के महत्व पर पर्याप्त जोर नहीं दे सकते।

महान आदर्श और बहुत जाहिर से लक्ष्य – लेकिन आप दरअसल इसे बरतते किस तरह हैं? एक चीज जो हमारे पक्ष में जाती है वह यह है कि यह विषय कक्षा में लगातार 3–4 हफ्तों तक के लिए हर सुबह दो घण्टे के 'मेन लेसन ब्लॉक' में रखा गया है, जिससे हम विषय में गहरे उतर सकते हैं, और हमें सामग्री को पचाने तथा उस पर रोज–रोज ताजा होकर वापस लौटने के लिए ढेर सारा वक्त मिल जाता है।

यह बात मेरे लिए (इसे पाठक रेणु या स्मिता में से किसी एक का या दोनों का अनुभव मान सकते हैं) शुरू से ही एकदम स्पष्ट थी कि (जैसा कि मैं अपने विद्यार्थियों के साथ हर मामले में करती हूँ) बच्चे उन चित्रों के माध्यम से ही चीजों को समझेंगे जिनके साथ वे सम्बन्ध स्थापित कर पाते हैं। मेरा काम इन चित्रों को जीवन्त बनाना भर होगा। इसलिए गणित के खण्ड की तैयारी ऐसी कहानी कहने में थी जिसमें ऐसे चरित्र हों जिनके साथ बच्चे अपना जीवन्त रिश्ता कायम कर सकें। मेरी कहानी के चरित्रों में स्वयं मैं और मेरे छह बच्चे, भतीजे और दोस्त शामिल थे। मेरी कक्षा इन सबको कक्षा 1 से ही मेरे साथ बिताए गए वक्त से तथा अब तक सुनाए गए किस्सों और तस्वीरों की मार्फत जानती थी। यहाँ तक उन्होंने मेरे परिवार के सदस्यों को कभी–कभी मेरी कक्षा में आने के दौरान देखा भी था। कहानी के मुख्य चरित्र हालाँकि चार चाचा हैं जिनमें से

हरेक की अपनी–अपनी खब्तें हैं – एक को संग्रह करने का शौक है, दूसरे को चीजें दूसरों को बाँटने का शौक है, तीसरे को इनकी तादाद बढ़ाते जाने का शौक है, तो चौथे को हमेशा बराबर–बराबर बाँटना पसन्द है। किस्से सुनाते हुए पूरे वक्त मैं इस बात के प्रति सजग थी कि परिचित चरित्रों और अपरिचित किस्से का एक अच्छा मेल मेरे और मेरे विद्यार्थियों के लिए बेहतर साबित होगा। इन चारों खास चाचाओं की खब्तों को उन मजेदार घटनाओं के साथ (कहानी के उद्देश्य के मद्देनजर बढ़ा–चढ़ाकर) बयान किया गया था जो उस दौरान घटी थीं जब मैं बड़ी हो रही थी, और इसी के साथ चिह्नों से परिचय कराया गया।

अगले दिन, कहानी खुलती है जिसमें दादा मृत्युशैया पर हैं और वे चारों चाचाओं को सोने के 48 सिक्के देने के लिए बुलाते हैं जो उनको उनके पिता ने, और उनके पिता को उनके पिता ने दिए थे। सोने के ये सिक्के गाँव के राजा द्वारा गाँव में पानी और समृद्धि लाने के लिए नहर तैयार करने के भले काम के बदले में इनाम के तौर पर दिए गए थे (इसमें किसी और वक्त पर सुनाए जा सकने वाले एक और किस्से के बीज मौजूद थे!)। ये 48 सिक्के चार थैलियों में बराबर–बराबर संख्या में बाँटे गए थे (किस्से के दौरान ये चार थैलियाँ प्रदर्शित की गईं : + के लिए हरी थैली, – के लिए नीली, X के लिए पीली, और ÷ के लिए लाल थैली)। जोड़ चाचा सिक्कों को सुरक्षित रख लेते हैं, घटाना चाचा जरूरतमन्दों में बाँट देते हैं, गुणा चाचा ऐसी सौदेबाजियाँ करते पाए जाते हैं जिससे उन सिक्कों की संख्या बढ़ जाए; यह असामंजस्य तब तक बना रहता है जब तक कि भाग चाचा आकर सबसे सारे सिक्के एक जगह रखकर उनको बराबर–बराबर हिस्सों में बाँटने को



Blackboard drawing

नहीं कहते!

कहानी का असर एकदम साफ था। न सिर्फ कहानी के हर मोड़ पर बच्चों की उत्तेजना साफ जाहिर थी, बल्कि कहानी की छोटी से छोटी तफसील भी अवधारणा की उनकी अन्दरूनी प्रक्रिया से जुड़ रही थी। जब स्टाइनर अध्यापकों के औजारों के एक और महत्वपूर्ण अंग 'ब्लैकबोर्ड ड्राइंग' को कक्षा के सामने लाया गया, तो उसको उसकी एक–एक बारीकी की जबरदस्त पहचान के साथ ग्रहण किया गया। खेद की बात यह थी कि मैंने अपनी ब्लैकबोर्ड ड्राइंग की तस्वीर नहीं ली थी, इसलिए मैंने यहाँ पर अपने एक साथी की ब्लैकबोर्ड ड्राइंग की तस्वीर का इस्तेमाल सिर्फ नमूने के तौर पर किया है।



कहानी के चारों मुख्य चरित्रों में से प्रत्येक के लक्षण को बच्चों ने बहुत गहराई से पहचाना और उसको तत्सम्बन्धी गणितीय क्रिया के लक्षण की समझ में रूपान्तरित कर लिया–जो कि ठीक वही लक्ष्य था जिसको इस पूरे अभ्यास के माध्यम से अध्यापक हासिल करना चाहता था!

कहानी के दो हफ्ते बाद बच्चों ने स्कूल के मैदान से प्राकृतिक चीजें एकत्र कीं। समानान्तर क्रियाओं के रूप में जोड़ और घटाना की अवधारणा उनके मन में बैठ सके, इसके लिए उनसे पूछा गया कि कहाँ ये चीजें अधिक (+) हो जाती हैं और कहाँ कम (–)। इसी अभ्यास को कक्षा की अन्य चीजों के साथ दोहराया गया। हर कोई जो लेन–देन करना चाहता है, वह दूकानें खोलता है – एक बार फिर अदला–बदली की और इसीलिए जोड़ और



घटाना की अवधारणा रेखांकित हुई। कक्षा में रखी चीजों की फेहरिस्त बनवाई गई और स्कूल के पेड़ों को गिनने को कहा गया (जोड़)। जीवन की तमाम स्थितियों को लिया गया और जोड़, घटाना, भाग और गुणा को सजीव कर दिया गया। शुरू में, बच्चों को उनके काम में मदद के लिए उनके गिनने के उपकरणों (कौड़ियाँ, लकड़ी के बटन, कंचे) का इस्तेमाल करने को प्रोत्साहित किया जाता है। बाद में वे धीरे–धीरे गणना की इस भौतिक सामग्री का उपयोग करना बन्द कर देते हैं और मानसिक गणना के सहारे अपना गणित करने लगते हैं।

एक बार जैसे ही विद्यार्थियों को ये क्रियाएँ अच्छी तरह से स्पष्ट हो जाती हैं, और बुनियाद खड़ी हो जाती है, दूसरे, अमूर्तन के, पड़ाव की यात्रा शुरू करा दी जाती है। शब्द (ज्यादा, कम, बाँटो, बढ़ाओ) के साथ चिह्न का परिचय कराया जाता है जिसकी जगह धीरे–धीरे 'फंक्शन' के चिह्न ले लेते हैं (4 बीज तथा 3 और बीज मिलकर 4 + 3 बन जाते हैं)।

फंक्शन की समझ हासिल हो सके इसके लिए बच्चों को पर्याप्त अभ्यास, यहाँ तक कि अमूर्तनों से युक्त अभ्यास भी, करने को दिए जाते हैं। गुणन क्रिया का परिचय जोड़ के दोहराव के रूप में और भाग का परिचय घटाने की क्रिया के दोहराव के रूप में कराया जाता है। अन्त में वे अपने खुद के मिश्र जोड़ (इल्ली जोड़/सॉसेज जोड़– 2+3=, ट्राम जोड़– 3+4+5= और ट्रेन जोड़– 4+4+2+3+1+6+5+4) करना सीख जाते हैं।

और जाहिर है, जैसे कि दूसरे मामलों में वैसे ही खासतौर से गणित में अभ्यास से निखार आता ही है। मॉर्निंग सर्किल के बाद मुख्य पाठ पर आने के पहले बतौर तैयारी के स्थितिपरक गणनाओं के माध्यम से दिमागी गणित कराए जाते हैं, जिनमें मुख्य रूप में 2 क्रियाएँ शामिल होती हैं। पहली और दूसरी कक्षा के विद्यार्थी किसी भी उपलब्ध अवसर के मुताबिक, जैसे कि कागज की लम्बी पट्टी पर या फर्श पर संख्याओं के जोड़–घटाना तैयार करने में काफी आनन्द लेते हैं।

मैं अपने मन में इन सारी 'क्रियाओं' के वास्तविक उद्देश्य को भी कायम रखती हूँ – आखिरकार यह सबके भले के लिए है...हर किसी के फायदे के लिए अच्छा अर्थशास्त्र। इसलिए कहानियाँ और किस्से सचेत रूप भविष्य के अच्छे काम के बीज बोने का सन्देश लिए होते हैं। एक सूक्ष्म स्तर पर मैं यह भी चाहती हूँ कि मेरे विद्यार्थी गणित के अध्ययन की मार्फत कुदरत के नियमों को समझें – जोड़ और घटाना एक समानान्तर क्रिया है जो लगातार जारी रहती है, इसलिए उनको नफा और नुकसान के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए, इसकी बजाय वे एक चीज से दूसरी चीज के बीच या एक जगह से दूसरी जगह के बीच अदला–बदली भर हैं। इससे उनके मन में, आने वाले जीवन की तमाम स्थितियों के सन्दर्भ में, नफा–नुकसान से बेखौफ बने रहकर कर्म करने की अपनी सामर्थ्य में गहरा आत्मविश्वास कायम रखने की प्रवृत्ति की बुनियाद पड़ेगी और उनमें यह अहसास जागेगा कि समृद्धि और अवसर एक ही सिक्के के पहलू हैं।





रेणु भाटिया इन दिनों कक्षा 2 की कक्षा शिक्षिका हैं और स्मिता माल्या बंगलौर स्टाइनर स्कूल की सह–संस्थापक तथा वर्तमान मैनेजिंग ट्रस्टी हैं। स्टाइनर वाल्डोर्फ़ स्कूल की कक्षा शिक्षिका अपने विद्यार्थियों को कक्षा 1 से 8 तक अँग्रेजी, गणित, विज्ञान और सामाजिक विज्ञान के सारे प्रमुख विषय पढ़ाती हैं। प्रथम अध्यापिका के रूप में रेणु कई भूमिकाएँ निभाती हैं जिनमें स्टाइनर पाठ्यक्रम का खाका और संरचना तथा शिक्षकीय विकास के पहलुओं की रूपरेखा तैयार करना शामिल हैं। इसी के साथ अपने तीन बेटों का पालन करने से हासिल समझ का प्रयोग करते हुए वे अपने विद्यार्थियों को दिलचस्प शिक्षण–यात्राओं पर भी ले जाती हैं। पिछले 7 वर्षों से वाल्डोर्फ की अभिभावक के तौर पर स्मिता ने इस शिक्षा के दर्शन में अपनी तल्लीनता से जो कुछ हासिल किया है उसका योगदान उन्होंने इस लेख में किया है। दोनों से info@bangaloresteinerschool.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद** : मदन सोनी



18 गणित को ऐसे भी पढ़ा सकते हैं

एच. के. शुभा

अभिभावकों का विस्थापन (माइग्रेशन) बच्चों के सामने बहुत सारी चुनौतियाँ पेश करता है। सबसे बड़ी चुनौती होती है एक निहायत ही नए, अपरिचित माहौल में ढलने की। नए वातावरण के साथ परिचय स्थापित करने में बच्चों को बहुत श्रम करना पड़ता है। इस जटिल परिस्थिति में, बच्चों को बहुत थोड़े–से समय में सार्थक शिक्षा देने के लिए उनमें उत्सुकता और उत्साह जगाना जरूरी होता है।

ऐसे बच्चों को सार्थक शिक्षा देने की जरूरतों को समझने के लिए अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन द्वारा निर्माण कार्यों में लगे विस्थापित मजदूरों के बच्चों के लिए 2007 में दो प्रयोगात्मक स्कूल आरम्भ किए गए थे। इन स्कूलों का एक उद्देश्य ऐसे बच्चों के लिए उत्कृष्ट शिक्षा का एक दोहराया जा सकने योग्य और टिकाऊ मॉडल तैयार करना भी है।

हमारे पास समर्पित शिक्षकों की एक महत्वपूर्ण टीम है जो इन स्कूलों की लगभग शुरुआत से ही इनके साथ रही है। उन्होंने अनेक शिक्षाविधियों और पद्धतियों के साथ प्रयोग किए हैं और कभी–कभी अत्यन्त नवाचारी और कारगर समाधान पेश किए हैं। इन्हीं में से एक गतिविधि मैं आपसे साझा करना चाहती हूँ। यह है बच्चों को पैसों के माध्यम से जोड़ और घटाने की शिक्षा देना साथ ही उनमें पैसे को बचाने और उसको बरतने की आदत डालना।

पहले मैं आपको बच्चों के स्कूली बचत बैंक की पृष्ठभूमि से अवगत करा दूँ। मजदूर अभिभावक अपने बच्चों को इस शर्त पर स्कूल भेजने के लिए राजी हुए थे कि वे अपने छोटे भाई–बहनों को भी साथ ले जा सकते थे। इसके अलावा, स्कूल मजदूरों के पड़ाव के काफी करीब था जहाँ से बच्चे अपने घरों पर नजर रख सकते थे।

शुरू में तो बहुत से बच्चों ने, इसके बावजूद कि वे यह जानने को काफी उत्सुक थे कि क्या हो रहा है कक्षा में आने से मना कर दिया। तब अभिभावकों ने उनको स्कूल जाने को राजी करने के लिए जेब–खर्च के बतौर एक–दो रुपए देना शुरू किया। ये ज्यादातर सिक्के होते थे।



मजे की बात यह थी कि कई बच्चे इन सिक्कों को अपनी जेबों में रखने की बजाय अपने मुँह में रखा करते थे। उनको लगता था पैसे रखने के लिए वह सबसे सुरक्षित जगह है! धीरे–धीरे वे ये सिक्के अध्यापकों को देने लगे जिन्हें वे शाम को घर जाते समय वापस ले लेते थे।

हमने उनको समझाना शुरू किया कि वे पैसे बचाएँ और बाल बनवाने या जूते खरीदने या जब अपने कभी गाँव जाने जैसी जरूरतों पर उनको खर्च करें।

हमने हर बच्चे की अलग–अलग अकाउण्ट

पुस्तिकाएँ रखनी शुरू कर दीं। हालाँकि अध्यापकों पर विश्वास कायम करने में उनको थोड़ा वक्त लगा, लेकिन दो–तीन बच्चों को इस तरह पैसे बचाते और जरूरत पड़ने पर उनका इस्तेमाल करते देख हर किसी ने वैसा ही करना शुरू कर दिया। हर दिन असेम्बली के बाद बच्चे अपनी–अपनी अकाउण्ट पुस्तिकाओं के साथ गोल घेरा बनाकर बैठ जाते, पैसे को गुल्लक में डालते और अध्यापक से वह पैसा अपनी पुस्तिकाओं में दर्ज कराते। हर किसी को जानकारी होती कि उनके 'अकाउण्ट' में कितना पैसा सुरक्षित है।

बाद में अध्यापकों को लगा कि इस चीज को वे एक शैक्षणिक अभ्यास में बदल सकते हैं।

लक्ष्य

1. संख्याओं के क्रम को समझना
2. ज्यादा, कम और बराबर की अवधारणाओं को समझना
3. वास्तविक जीवन में जोड़ और घटाना की समस्याओं को समझना
4. कैलेण्डर की अवधारणा को समझना

जीवन कौशल

पैसे को बचाने और उसका सार्थक इस्तेमाल करने की अहमियत की समझ

गतिविधि

अध्यापक और बच्चे घेरा बनाकर बैठते हैं और गुल्लक को बीच में रख लेते हैं। अध्यापक एक बच्चे को, जो पैसे लेकर आया है, बुलाता है और उससे पूछता कि उसके पास कितना पैसा है। बच्चे के जवाब के बाद वह उससे कहता है कि वह सारे बच्चों को दिखाकर पैसा गुल्लक में डाले। अगर उसके पास एक से ज्यादा सिक्के या नोट हैं तो अध्यापक बच्चों के एक समूह से कहता है कि वे उनके मूल्य को जोड़ें और बताएँ कि उस बच्चे के पास कितने पैसे हैं। अब बच्चों से कहा जाता है कि वे उसकी अकाउण्ट पुस्तिका में देखकर बताएँ कि उसके पास पहले से कितना पैसा है और फिर उसमें वह पैसा जोड़ें जो वह बच्चा जमा करने लाया है। उनके जवाब मिलने के बाद वह उसकी अकाउण्ट पुस्तिका में तारीख और पैसे की मात्रा दर्ज करता है। यही गतिविधि उन सारे बच्चों के मामले में जारी रखी जाती है जो जमा करने के लिए पैसे लाए हैं।

इसी तरह जो बच्चे अपने अकाउण्ट से पैसे निकालना चाहते हैं वे अध्यापक को बताते हैं कि उनको कितने पैसे की जरूरत है और अपने समूह को पैसे निकालने की वजह बताते हैं। अध्यापक बच्चे को दिया जाने वाला पैसा बच्चों को दिखाता है और उनसे पूछता है कि इसके बाद उस बच्चे के अकाउण्ट में कितना पैसा बचता है। अध्यापक बच्चों से चर्चा करने के बाद उनकी अकाउण्ट पुस्तिकाओं में सारा विवरण और तारीख दर्ज करता है। इसी के साथ हर बच्चे के लिए जरूरी होता है कि वह इस विवरण को मंजूर करते हुए उस पर अपना नाम लिखे।



उपलब्धि

इस प्रक्रिया में बच्चे मुद्रा को पहचानना शुरू कर देते हैं और धीरे–धीरे जोड़ और घटाना की क्रियाओं से परिचित होने लगते हैं। पुराने बच्चे अकाउण्ट पुस्तिकाओं में विवरण दर्ज करने और पैसे के रखरखाव में अध्यापकों की मदद

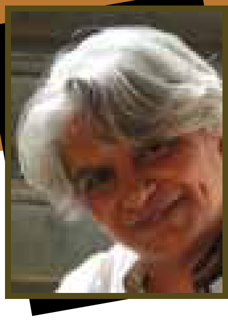
करते हुए इस गतिविधि में सहयोग करने लगते हैं। बच्चों को इस प्रक्रिया में भाग लेने में मजा आता है।

आज बच्चे अपना आधा पैसा स्कूल में जमा करते हैं और शेष पैसे से पास की गुमटी से अपने लिए कैण्डी खरीदते हैं।

बचत का यह पैसा अध्यापकों द्वारा विनिमय, जोड़, घटाना, गुणा और भाग जैसी गणित से सम्बन्धित कई अवधारणाओं को पढ़ाने का माध्यम बन रहा है। यह देखकर अध्यापकों को भारी सन्तोष मिलता है कि बच्चे इतने अच्छे तरीके से सीख रहे हैं, और वह भी उस स्थिति में जबकि वे इतने कम समय से उनके साथ हैं।



शुभा *2007 से अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन के साथ काम कर रही हैं। इन दिनों वे यादगीर स्थित अज़ीम प्रेमजी स्कूल के प्राचार्य का मार्गदर्शन करने के साथ–साथ बंगलौर के दो विस्थापित मजदूर स्कूलों का संचालन कर रही हैं। वे 'विस्थापित मजदूरों के बच्चों के लिए शिक्षा' कार्यक्रम के साथ आरम्भ से ही सम्बद्ध हैं। उनसे shubha@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।* ***अनुवाद*** *: मदन सोनी*



19 भौतिकी को गणेश का प्रतिदान

ज्योति त्यागराजन

इधर अनेक वर्षों से मैं कक्षा 11 तथा 12 को भौतिक विज्ञान पढ़ाती रही हूँ। आधे समय तो वह अत्यन्त ऊर्जा प्रदान करने वाला अनुभव रहा पर कुछ समय वह करीब–करीब मौत जैसा नीरस भी रहा है।

भौतिकी के जिन अधिकांश पाठ्यक्रमों को मैंने पढ़ाया है, 1 बी या ए स्तर का या आईएससी का, जिन्हें पढ़ाने में मैंने लगभग समान समय व्यतीत किया है, वे सभी मैकेनिक्स (यांत्रिकी) से प्रारम्भ होते हैं। इसलिए जिन पहली चीजों के बारे में विद्यार्थी सुनते हैं, वे होती हैं यूनिट्स (इकाइयाँ); फिर वे वैक्टर्स (सदिश) के बारे में सुनते हैं, फिर गति, वेग और त्वरण के बारे में सुनते हैं, फिर न्यूटन के नियमों के बारे में, न्यूटन के गति के समीकरणों के बारे में सुनते हैं, फिर न्यूटन के फ्री बॉडी डायग्राम्स (मुक्त निकाय रेखाचित्रों) के बारे में सुनते हैं, फिर न्यूटन की फ्री फाल (मुक्त रूप से गिरना) की व्याख्या के बारे में सुनते हैं, और फिर उनकी रुचि मर जाती है। उसके बाद, मैं साहस और धैर्य के साथ विषयवस्तु को धकेलती हुई बढ़ती जाती हूँ और हम इनर्जी एण्ड पावर (ऊर्जा तथा शक्ति), रोटेशनल मोशन (चक्रीय गति), इलास्टिसिटी (प्रत्यास्थता), हीट ट्रांसफर (ऊष्मा का अन्तरण) तथा लीनियर ऐक्सपैन्सन (रैखिक वृद्धि) से होते हुए वेव मैकेनिक्स (तरंग यांत्रिकी) पर पहुँचते हैं।

दरअसल, मुझे स्वीकार करना पड़ेगा कि मैं शायद नाटकीय रूप से उबाऊ और उदासी भरी तस्वीर खींचने की कोशिश कर रही हूँ। हकीकत इतनी भी बुरी नहीं है। विद्यार्थी समग्र तस्वीर के स्तर पर किसी तरह विभिन्न टॉपिक्स में अपनी दिलचस्पी बनाए रखते थे। कोई–कोई दिन जरूर "ऊब और उदासीनता" – यह उक्ति हमने ऐसे दिनों में अपना उत्साह बनाए रखने के लिए गढ़ ली थी – से भरे होते थे। इसलिए, अगले वर्ष की शुरुआत में ही मैंने गणेश चतुर्थी के साथ पड़ने वाले एक प्रोजैक्ट की रूपरेखा तय की। दूसरे वर्ष के अंकों में उसका 10 प्रतिशत हिस्सा रहने वाला था। यदि और कुछ नहीं तो, कम से कम मुझे उसमें बुनियादी मैकेनिक्स के सभी अंकों को एक साथ जोड़कर एक शोभामय पैकेज में रखने का मौका मिल रहा था, शोभा गणेश प्रदान कर रहे थे और पैकेज को एकजुट बनाने का काम मेरा था।

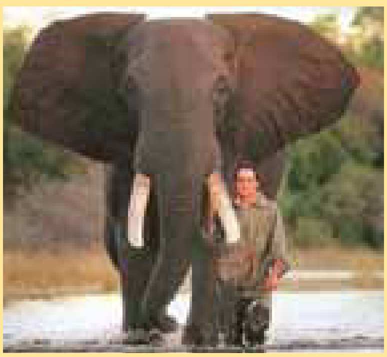
उस प्रोजैक्ट के लिए गणेश मूर्तियों की आवश्यकता थी। जिस स्कूल में मैं पढ़ाती थी वह कुम्हारों के एक गाँव से पैदल जाने की दूरी पर था और उस गाँव के लोग शहर के उत्तरी भाग के लिए गणेश की मूर्तियाँ बनाते थे। यह सुखद संयोग था, क्योंकि दस विद्यार्थियों की कक्षा के लिए मुझे बिना आग में पकाई और बिना रंगी हुई तीन गणेश मूर्तियों की जरूरत थी। इसके अलावा, हर गणेश के लिए मुझे दो या तीन उपयुक्त "मिट्टी काटने वाली चीजों" की जरूरत थी –ये प्रतिरोधक तार के 40 से.मी. लम्बे टुकड़े थे जिनका प्रत्येक सिरा पेन्सिल के एक छोटे टुकड़े पर लपेटा हुआ था; पेन्सिल के टुकड़े पकड़ने की मुठियों की तरह काम करते थे। यदि तार को गणेश के किसी हिस्से के ऊपर रख दिया जाए और उसे तानकर धीरे–धीरे नीचे की ओर खींचा जाए, तो वह मूर्ति को सफाई से खण्डों में काट देता है।

प्रयोगशाला उन सभी सामान्य मापक उपकरणों से सुसज्जित थी जो आमतौर पर किसी प्रयोगशाला में उपलब्ध रहते हैं: वर्नियर कैलिपर्स, स्क्रू गेज, रूलर, वेट्स (भार), फोर्स मीटर, धागा, चल माइक्रोस्कोप, टोर्क मीटर, इत्यादि। विद्यार्थियों को अपने प्रयोग में जब किसी भी ऐसे उपकरण की आवश्यकता पड़ती जिसे उन्होंने पहले इस्तेमाल किया था तो मैं खुशी से उसे प्रदान करने को प्रस्तुत थी।

प्रत्येक विद्यार्थी को तत्परता से एक शीट पर और मेरे ब्लॉग पर भी यहाँ दिया प्रोजैक्ट मिल गया।

गणेश की उत्पत्ति की कहानी रोचक और नाटकीय है तथा इस वेबसाइट पर आपको मिल सकती है: *http//hinduism.about.com/od/lordganesha/a/ganesha.html*

आपको नीचे दिया चित्र इस वैबसाइट पर भी मिल सकता है: *http://treadinggrain.com/2011/made-me-smile/a-elephant-and-man/* आप इस चित्र का उपयोग जानकारी प्राप्त करने के लिए कर सकते हैं।



आप मिट्टी काटने वाले तार का उपयोग मूर्ति को आर–पार काटने के लिए कर सकते हैं। मैं कहूँगी कि आप सारे टुकड़े उसी क्रम में व्यवस्थित रखें जिस क्रम में उन्हें काटें, ताकि हम इस अभ्यास के अन्त में आदरपूर्वक उन टुकड़ों को पानी में घोलकर मूर्तियों को उसी मिट्टी को लौटा दें जिससे वे आई थीं।

द्रव्यमान, चौड़ाई, लम्बाई, हड्डियों के पदार्थ का क्रश–फैक्टर (चूरा करने का गुणांक), आदि, (अब और अधिक संकेत नहीं!) पर शोध करके गणेश के भौतिक रूप का विश्लेषण करें और निष्कर्ष निकालें कि उनका एक वास्तविक जीवित स्वरूप तर्कसंगत रूप से सम्भव है या नहीं। आपका निष्कर्ष, जहाँ तक सम्भव हो, सांख्यिकीय जानकारियों तथा सही गणनाओं पर आधारित होना चाहिए।

आपको शुभकामनाएँ! आपके पास प्रायोगिक रिपोर्ट तैयार करने के लिए यह शेष सप्ताह और उसके बाद आने वाला सप्ताहान्त है।

शुक्रवार को, गणेश मूर्तियों का विसर्जन करने के लिए हम सारे टुकड़े पानी से भरी एक बाल्टी में डाल देंगे। यदि शुक्रवार के पहले आपने अपने प्रोजेक्ट के लिए आवश्यक सभी प्रेक्षण मापें नहीं ले लीं, तो आप उन्हें बाद में नहीं ले सकेंगे। इसलिए मैं सुझाव दूँगी कि आप प्रेक्षण मापें लेते समय कम मापें लेने के बजाय ज्यादा से ज्यादा मापें लें, भले ही वह अनावश्यक लगे।

इस तरह विद्यार्थी काम में जुट गए और मैंने प्रयोगों की एक विस्तृत श्रृंखला करवाई तथा अनेक परिकल्पनाओं को सिद्ध करवाया।

मूल्यांकन के मापदण्ड नीचे दिए गए चार्ट के अनुसार थे:

J s kh	4	3	2	1
प्रायोगिक परिकल्पना	चर राशियों तथा अनुमानित परिणाम के बीच का परिकल्पित सम्बन्ध अध्ययन की गई विषयवस्तु के आधार पर स्पष्ट तथा तर्कसंगत है।	चर राशियों तथा अनुमानित परिणाम के बीच का परिकल्पित सम्बन्ध सामान्य ज्ञान तथा प्रेक्षणों के आधार पर तर्कसंगत है।	चर राशियों तथा अनुमानित परिणाम के बीच के परिकल्पित सम्बन्ध को व्यक्त किया गया है, लेकिन वह त्रुटिपूर्ण तर्क पर आधारित प्रतीत होता है।	कोई परिकल्पना व्यक्त नहीं की गई है।
वैज्ञानिक अवधारणाएँ	रिपोर्ट प्रायोगिक कार्य की आधारभूत वैज्ञानिक अवधारणाओं की सही तथा परिपूर्ण समझ दर्शाती है।	रिपोर्ट प्रायोगिक कार्य की आधारभूत अधिकांश वैज्ञानिक अवधारणाओं की सही समझ दर्शाती है।	रिपोर्ट प्रायोगिक कार्य की आधारभूत वैज्ञानिक अवधारणाओं की सीमित समझ दर्शाती है।	रिपोर्ट प्रायोगिक कार्य की आधारभूत अवधारणाओं की गलत समझ दर्शाती है।

प्रायोगिक डिजाइन	प्रायोगिक डिजाइन व्यक्त परिकल्पना का बखूबी रचा गया परीक्षण प्रस्तुत करती है।	प्रायोगिक डिजाइन परिकल्पना का परीक्षण करने के लिए पर्याप्त है, किन्तु कुछ प्रश्नों को अनुत्तरित छोड़ देती है।	प्रायोगिक डिजाइन परिकल्पना से सम्बद्ध है, लेकिन यह परिपूर्ण परीक्षण नहीं है।	प्रायोगिक डिजाइन परिकल्पना से सम्बद्ध नहीं है।
कार्यविधियाँ	कार्यविधियाँ स्पष्ट चरणों में सूचीबद्ध की गई हैं। प्रत्येक चरण क्रमसंख्या द्वारा चिह्नित है और पूर्ण वाक्य की तरह व्यक्त किया गया है।	कार्यविधियाँ तार्किक क्रम में सूचीबद्ध की गई हैं, लेकिन चरणों को क्रमसंख्या द्वारा चिह्नित नहीं किया गया है, और/या वे पूर्ण वाक्य नहीं हैं।	कार्यविधियों की सूची दी गई है, लेकिन वे तार्किक क्रम में नहीं हैं या समझने में कठिन हैं।	कार्यविधियाँ प्रयोग के चरणों को सही–सही ढंग से सूचीबद्ध नहीं करतीं।
जानकारी के आँकड़े	जानकारी के आँकड़ों को तालिकाओं और/या रेखाचित्रों में पेशेवर दिखने वाले तथा सही निरूपण द्वारा प्रस्तुत किया है। रेखाचित्रों तथा तालिकाओं को उचित लेबल तथा शीर्षक दिए गए हैं।	जानकारी के आँकड़ों का तालिकाओं और/या रेखाचित्रों में सही निरूपण किया गया है। रेखाचित्रों तथा तालिकाओं को उचित लेबल तथा शीर्षक दिए गए हैं।	जानकारी के आँकड़ों का लिखित रूप में सही निरूपण किया गया है। कोई रेखाचित्र या तालिकाएँ प्रस्तुत नहीं की गई हैं।	जानकारी के आँकड़े दिखाए नहीं गए हैं या वे सही नहीं हैं।
विश्लेषण	चर राशियों के बीच के सम्बन्ध की व्याख्या की गई है और प्रवृत्तियों ,संरचनाओं का तार्किक विश्लेषण किया गया है। इसके बारे में अनुमान लगाए गए हैं कि यदि प्रयोग के किसी अंश को बदल दिया जाए तो क्या हो सकता है, या प्रायोगिक डिजाइन को किस तरह बदला जा सकता है।	चर राशियों के बीच के सम्बन्ध की व्याख्या की गई है और प्रवृत्तियों,संरचनाओं का तार्किक विश्लेषण किया गया है।	चर राशियों के बीच के सम्बन्ध की व्याख्या की गई है लेकिन जानकारियों के आधार पर कोई संरचनाएँ, प्रवृत्तियाँ, या अनुमान नहीं दर्शाए गए हैं।	चर राशियों के बीच के सम्बन्ध की व्याख्या नहीं की गई है।
निष्कर्ष	हासिल की गई जानकारियाँ परिकल्पना की पुष्टि करती हैं या नहीं, त्रुटियों के सम्भावित स्रोत और प्रयोग से क्या सीखा गया, ये सभी बातें निष्कर्ष में शामिल हैं।	हासिल की गई जानकारियाँ परिकल्पना की पुष्टि करती हैं या नहीं तथा प्रयोग से क्या सीखा गया, ये बातें निष्कर्ष में शामिल हैं।	प्रयोग से क्या सीखा गया, यह निष्कर्ष में शामिल है।	रिपोर्ट में कोई निष्कर्ष शामिल नहीं किया गया या कोई प्रयास या विचार प्रक्रिया नहीं दर्शाई गई।

(गणेश प्रोजैक्ट के लिए उपरोक्त चार्ट के शीर्षकों को गढ़ने में मिली मदद के लिए रूबीस्टार (http://rubistar.4teachers.org) को धन्यवाद)

एक विद्यार्थी ने मानव की माप तथा हाथी के सिर की माप की तुलना की और ऐसा परिणाम निकाला जिसने मेरी कल्पनाओं को यथार्थ की धरती पर चकनाचूर कर दिया। मैंने हमेशा गणेश की कल्पना मानव के घुटनों तक पहुँचने वाले आकार में की थी, लेकिन वह सच नहीं था! जिस अनुपात के हम अभ्यस्त हो गए हैं उसके अनुसार उन्हें अपने सिर को साध सकने के लिए हाथी जितना ऊँचा होना होगा। मैंने उस प्रोजैक्ट रिपोर्ट को स्वीकार किया हालाँकि वह करीब–करीब पूरा गणित था और उसमें भौतिकविज्ञान बहुत कम था।

विद्यार्थियों ने जो मापें ली थीं उनका मेरे पास रिकार्ड नहीं है। करीब–करीब वे सभी दूसरे देशों से आए विद्यार्थी थे और कोर्स के अन्त में वे अपने देशों को वापिस चले गए। लेकिन मुझे मोटी–मोटी मापों की याद है। उदाहरण के लिए, यह बात सामने आई कि गणेश के सिर के बोझ के कारण दब जाने से बचने के लिए उनकी रीढ़ की हड्डी का व्यास लगभग 20 सें.मी. होना होगा। सिर के वजन के कारण उनके पैरों को उनकी आड़ी काट के क्षेत्रफल के अनुसार, यदि वे अपने हाथों और पैरों पर चलें तो, दी गई माप से मजबूरन लगभग चार गुना मोटा होना होगा, और यदि वे दो पैरों पर चलें तो छह गुना मोटा होगा।

एक विद्यार्थी ने नसों तथा धमनियों की प्रत्यास्थता पर भी विचार किया, पर वह उसमें आगे नहीं जा सका क्योंकि उसे इण्टरनेट से आधार जानकारियाँ तथा आँकड़े हासिल नहीं हो

पाए। एक अन्य विद्यार्थी को उसके बुद्धि कौशल से समझ में आया कि हाथी के सिर को घुमाने में समस्या आएगी, लेकिन उस घुमाव गति को रोकने के लिए आवश्यक रैखिक बल गर्दन पर स्थित मांसपेशियों को चीर देगा। वह चक्रीय गति के बारे में सोच रहा था। उसने यह भी सुझाया कि यदि गणेश ने कभी नीचे की ओर देखा, तो उनकी गर्दन के पीछे की मांसपेशियाँ इतनी भारी और बलशाली नहीं थी कि वे फिर से अपना सिर उठा सकें। इसकी पुष्टि करने के लिए उसके पास कोई आँकड़े या गणनाएँ नहीं थीं, हालाँकि इसका कारण चिकित्सकीय जानकारियों तथा आँकड़ों के कोशों को खंगालने की कोशिश का अभाव नहीं था। ऐसा लगता है कि चिकित्सकीय शोधकर्ता मनुष्य की गर्दन की मांसपेशियों के समूहों के चिरने की सीमाओं का परीक्षण नहीं करते। यदि वे करते भी हैं तो उसका कम समय में पता लगाना कठिन था। विद्यार्थियों का विचार था कि झटके से गर्दन को मोड़ने से होने वाली चोटों की बात करने वाली चिकित्सकीय वैबसाइटों पर ऐसी जानकारियाँ होना चाहिए थीं, लेकिन वे उपलब्ध नहीं थीं।

एक आलेख में माइक्रोसर्जरी (सूक्ष्म–शल्यचिकित्सा) के आवश्यक होने के बारे में एक टिप्पणी थी जिसके बारे में मैंने लिखा कि "यह थोड़ा मजाकिया है"। लेकिन मेरी पसन्दीदा टिप्पणी एक जर्मन विद्यार्थी द्वारा की गई थी, कि जहाँ उसके शोध ने दिखाया कि गणेश एक न टिक सकने वाली भौतिक आकृति थे, वहीं एक अध्यात्मिक स्वरूप की तरह उनसे स्पर्धा कर सकने वाला कोई दूसरी धार्मिक आकृति नहीं थी!

क्या विद्यार्थियों ने इस अभ्यास से कुछ सीखा? हाँ, मैं कहूँगी कि उन्होंने निश्चित ही यह सीखा कि कैसे समस्त विज्ञान अन्तर्सम्बन्धित हैं। उन्होंने यह भी सीखा कि वास्तविक विज्ञान में अन्वेषण कभी–कभी सुरुचिपूर्ण ढंग से सरल होते हैं। क्या उन्होंने यांत्रिकी के अपने ज्ञान को प्रदर्शित किया? मैं कहूँगी कि कुछ ने किया और कुछ ने नहीं किया। लेकिन सत्र की परीक्षाओं में भी क्या ऐसा ही नहीं होता? क्या भविष्य में किसी अन्य कक्षा में मैं फिर इसे करूँगी? मैं इसका उत्तर एक जोरदार "हाँ" से दूँगी।



__ज्योति__ ने अरब सागर के दोनों ओर के देशों में तीस वर्षों तक भौतिकी तथा गणित का अध्यापन किया है। उन्होंने लुसाका, जाम्बिया में पढ़ाना प्रारम्भ किया। फिर दस वर्ष बाद, वे हाई एनर्जी फिजिक्स एण्ड एजुकेशन (उच्च ऊर्जा भौतिकी तथा शिक्षा) में दूसरी स्नातकोत्तर डिग्री की पढ़ाई करने के लिए लिवरपूल चली गईं। लौटकर उन्होंने बंगलौर के माल्या अदिति इण्टरनेशनल स्कूल में दस वर्ष तक कार्य किया। फिर सिर्फ इस दस वर्ष के बार–बार के चक्र को तोड़ने के लिए, वे छह वर्ष के लिए इण्टरनेशनल स्कूल ऑफ केन्या में पढ़ाने के लिए केन्या चली गईं। वे फिर से थोड़े समय के लिए अदिति स्कूल में काम करने के लिए भारत लौटीं और फिर स्टोनहिल इण्टरनेशनल स्कूल में चार वर्ष बिताने के बाद उन्होंने अपने औपचारिक शिक्षण कार्य से "अवकाश" ले लिया। अब ज्योति लगभग अनगिनत स्वैच्छिक संस्थाओं के विपुल संख्या वाले प्रयासों से जुड़ी हुई हैं। भविष्य में किसी दिन ज्योति का वाकई में अवकाश ले लेने का वायदा है। उनसे इस jyoti.thyagu@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। __अनुवाद__ : सत्येन्द्र त्रिपाठी



20 क्या मैं मदद कर सकती हूँ?

jl k; u' kkL= d ks ç Hkkoh r jhd s l s i <+ku k

चन्द्रिका मुरलीधर

करीब दो दशक पहले जब मैंने बारहवीं की एक कक्षा में कदम रखा, तो मुझे स्वीकार करना पड़ेगा, कि मेरा मन अपने 'सीखे हुए' समस्त ज्ञान को अपने विद्यार्थियों के साथ साझा करने को तत्पर एक नई नवेली शिक्षिका के उत्साह से भरा हुआ था। मैं उपयुक्त पाठ्य–पुस्तक, सन्दर्भ पुस्तक और कुछ चार्टों के साथ अच्छी तरह से लैस थी। जिस तरह से शुरुआत करना मुझे सही लगा मैंने वैसा ही किया और अगले 40 मिनिट तक मैं सिलसिले से अपना व्याख्यान देती रही। अन्त में, मैं विजयी भाव से यह सोचती हुई कक्षा से बाहर निकली कि मैंने अपने विद्यार्थियों को 'पढ़ाने' का 'कार्य' पूरा कर दिया था। पर, मेरे विद्यार्थियों की आँखों में उदासीनता का भाव साफ झलक रहा था जिसे मैं नजरअन्दाज नहीं कर सकी। यह सिलसिला कुछ समय तक ऐसे ही चलता रहा, फिर एक ऐसी स्थिति आ गई कि इस तरीके को जारी रखना मेरे लिए असम्भव हो गया और मैंने उनसे बातचीत करने का निर्णय लिया।

अत: एक दिन कक्षा के समय में, हम बाहर निकलकर स्कूल के परिसर में एक पेड़ के आसपास इकट्ठे हो गए। बच्चे चकित, प्रसन्न और आशंकित भी थे क्योंकि उन्हें पता नहीं था कि क्या होने वाला है। हमने शुरुआत इससे की कि वे अब तक के अपने स्कूली जीवन के बारे में क्या सोचते थे और आने वाले वर्षों के लिए उनकी क्या योजनाएँ थीं। इससे वे कुछ हद तक सहज हो गए और उनकी खुलकर बोलने की हिम्मत थोड़ी बढ़ गई। पर, मैं उनसे रसायनशास्त्र जैसे विषय में उनकी चुनौतियों के बारे में बात करने की जल्दी में थी। बस मेरा इतना पूछना भर था कि उन्होंने उस विषय में उनके सामने आ रही कठिनाइयों को धाराप्रवाह बताना शुरू कर दिया। तब मुझे गहराई से यह महसूस हुआ कि एक शिक्षिका के रूप में मेरी यह जिम्मेदारी थी कि मैं विषय को सीखने वालों के लिए उतना ज्यादा से ज्यादा सुगम बनाऊँ जितना मैं उसे बना सकती थी।

मेरी यात्रा यहीं से प्रारम्भ हुई। अब मैं अपने अध्यापन काल के कुछ ऐसे अनुभव आपके साथ साझा करूँगी जिनमें मैंने रसायनशास्त्र को यथासम्भव सुगम और सीखने लायक बनाने का भरसक प्रयास किया। हाईस्कूल के स्तर पर, जहाँ जोर प्रमुख रूप से बोर्ड की परीक्षाओं पर होता है, और बच्चों के ऊपर सिर्फ एक विषय का नहीं, बल्कि भौतिकशास्त्र तथा गणित जैसे अन्य विषयों का भी बोझ रहता है, बच्चे जानकारियों को याद रखने तथा अवधारणाओं को समझने के सरल और टिकाऊ तरीकों तथा उन्हें अधिक से अधिक अंक दिला सकने वाली पद्धतियों की तलाश में रहते हैं। इसलिए, शिक्षक के रूप में मेरा सतत प्रयास सरल तकनीकों द्वारा उनकी सहायता करने का था और मैं मुख्य रूप से उसी क्षेत्र में कार्य करती रही।

उदाहरण 1

दसवीं के बाद +2 के स्तर पर, पूरे पाठ्यक्रम और परीक्षा के अंकों में कार्बनिक रसायनशास्त्र का हिस्सा 15 % होता है। इसकी विषयवस्तु काफी विशाल तथा विद्यार्थी के लिए भरपूर चुनौती वाली होती है। वे अनगिनत समीकरणों को याद रखने की चुनौती से निरन्तर जूझते रहते हैं। परीक्षा में कार्बनिक रसायनशास्त्र के खण्ड में आने वाले प्रश्नों का बड़ा भाग एक यौगिक को दूसरे में बदलने की प्रक्रिया दर्शाने के लिए रासायनिक समीकरणों का उपयोग करने पर आधारित होता है। इस प्रकार के प्रश्नों को 'परिवर्तन' कहा जाता है। उदाहरण के लिए; किसी अल्कोहल का कीटोन में या किसी ऐल्डीहाइड का किसी कार्बोलिक ऐसिड में

परिवर्तन इत्यादि। विद्यार्थियों को पाठ्य–पुस्तक में दिए गए विभिन्न समीकरणों को याद रखने में बहुत कठिनाई आती थी, परिणामस्वरूप इस भाग में अच्छे अंक लाने से वे वंचित रह जाते थे। इस समस्या को सुलझाने के लिए हमने एक तरह के कार्ड, जिन्हें हम 'फ्लैश कार्ड्स' कहते हैं, विकसित किए जो हर विद्यार्थी के पास होते थे और वह उन पर लिख सकता था। ये लगभग पोस्टकार्ड के आकार के चार्ट पेपर जैसे कड़े कागज के बने कार्ड होते हैं।

विद्यार्थी इन फ्लैश कार्डों से क्या करते हैं?

- वे कार्ड पर महत्वपूर्ण रासायनिक समीकरणों को लिख लेते हैं। कार्ड का दोनों तरफ इस्तेमाल किया जाता है। जहाँ तक सम्भव हो, एक श्रेणी के यौगिकों की जानकारी लिखने के लिए दो से अधिक कार्डों का इस्तेमाल नहीं किया जाता, जैसे कि अल्कोहलों से सम्बन्धित समीकरणों के लिए दो कार्ड, ऐल्डीहाइड्स के समीकरणों के लिए दो कार्ड और इसी प्रकार अन्य।
- इन कार्डों को बाद में उपयोग करने के लिए एक धागे में पिरो लिया जाता है।

अल्कोहलों के रासायनिक गुण

1. प्राइमरी अल्कोहल से ऐल्डीहाइड

$$RCH_2OH \xrightarrow{CrO_3} RCHO$$

2. प्राइमरी अल्कोहल से कार्बोजाइलिक अम्ल

$$RCH_2OH \xrightarrow{\text{Alkaline } KMnO_4} RCOOH$$

विद्यार्थी इन कार्डों का उपयोग कहाँ और कैसे करते हैं?

इन कार्डों को तब इस्तेमाल में लाया जाता है जब विद्यार्थियों को कार्बनिक रासायनिक परिवर्तनों को करने की जरूरत पड़ती है।

उदाहरण के लिए :

- यदि दिया गया परिवर्तन ईथेनाल से ईथेनोइक अम्ल का है।
- विद्यार्थी पहले यह पहचान करता है कि यह एक ऐल्डीहाइड (ईथेनाल) है जिसे एक कार्बोलिक अम्ल (ईथेनोइक अम्ल) में परिवर्तित किए जाने की जरूरत है।
- उसके पास उसके कार्डों का समूह है जिन पर समीकरण लिखे हुए हैं। वह उस समीकरण को ढूँढ़ता है जो एक ऐल्डीहाइड को एक कार्बोलिक अम्ल में परिवर्तित करता है। उसे पहचानकर वह आवश्यक समीकरण लिखता है और परिवर्तन पूरा करता है।

- यह एक उदाहरण है। इसी तरीके से विद्यार्थी ऐसे ही कुछ और परिवर्तनों का अभ्यास करता है।
- विद्यार्थियों को कार्डों का इस्तेमाल करने तथा परिवर्तनों का अभ्यास करने के लिए प्रोत्साहित करने की जिम्मेदारी शिक्षक की है।

फ्लैश कार्डों का उपयोग किस प्रकार सहायता करता है?

- कार्डों का उपयोग करने के निरन्तर अभ्यास से विद्यार्थी विभिन्न प्रकार के समीकरणों से प्रगाढ़ परिचय बना लेते हैं और बच्चों की स्मृति में उसकी छाप बनी रहती है।
- ये कार्ड कार्बनिक रसायनशास्त्र के विशद पाठ्यांशों के संक्षिप्त रूप होते हैं और इन्हें साथ लेकर चलना तथा इस्तेमाल करना आसान होता है।
- विद्यार्थी को कार्डों पर समीकरणों को उस तरह लिखने की आजादी दी जाती है जिस तरह वह उन्हें उपयोग करने में सबसे सुविधाजनक लगे।

जब इन कार्डों का इस्तेमाल किया गया तो शिक्षक के रूप में मुझे जो प्रतिक्रियाएँ मिलीं वे मुख्य रूप से उन विद्यार्थियों की थीं जो कार्बनिक रसायनशास्त्र की लघु–परीक्षाओं तथा परीक्षाओं में अच्छे अंक पाने से वंचित रह जाते थे। अनेक विद्यार्थियों को लगा कि पाठ्य–पुस्तक में दस पेजों को देखने की अपेक्षा एक दर्जन छोटे कार्डों को देखना ज्यादा आसान था।

उदाहरण 2

जो विद्यार्थी हाईस्कूल के स्तर पर रसायनशास्त्र लेते हैं वे उसे सामान्यतया गणित के साथ ही लेते हैं, पर फिर भी वे संख्यात्मक प्रश्नों को हल करने में बहुत आशंकित रहते हैं। साथ ही, एक आम गलतफहमी भी होती है कि यदि ऐसे प्रश्न का उत्तर गलत हुआ तो उनके पूरे प्रश्न के अंक कट जाएँगे।

इसलिए एक शिक्षक के रूप में मेरा पहला काम अन्तिम परीक्षा में मूल्यांकन की पद्धति से उनको परिचित करवाना था। उन्हें इस बात का एहसास करवाना था कि किसी संख्यात्मक प्रश्न के केवल उत्तर के अंक सबसे कम होते हैं, जबकि उस तक पहुँचने के चरणों का महत्व अधिक होता है; इसके पीछे तर्क यह है कि जोर केवल अन्तिम परिणाम पर ही नहीं होता, बल्कि इस पर भी होता है कि अवधारणा को कितनी अच्छी तरह से समझा गया है। मैंने निम्नलिखित पद्धति से संख्यात्मक प्रश्नों को कारगर ढंग से और समुचित सफलता के साथ करने में विद्यार्थियों की मदद की :

- उनको मेरा पहला सुझाव था कि वे संख्यात्मक प्रश्नों को हल करने का प्रयास करने से पहले सभी विवरणात्मक प्रश्नों तथा बहु–विकल्पों वाले प्रश्नों को पूरा कर लें।
- किसी संख्यात्मक प्रश्न को हल करने का पहला कदम उसे कम से कम तीन बार पढ़ना है। पहली बार के पढ़ने में कतई यह नहीं सूझेगा कि उसे कैसे हल करना है। दूसरे और तीसरी बार के पढ़ने से कुछ समझ बनेगी कि क्या पूछा गया है।
- अगला कदम संख्यात्मक प्रश्न में दी गई सभी जानकारी को सम्बन्धित चिह्नों के साथ लिख लेना होगा तथा यह भी कि किस चीज की गणना करने के लिए कहा गया है। इसे एक बॉक्स के भीतर बन्द किया जा सकता है – जिसे हम बॉक्स 1 कह सकते हैं।
- अब विद्यार्थी (काम करने के कॉलम में) वे सभी फार्मूले लिख सकते हैं जो उनके विचार में यहाँ लागू होते हों। फिर वे एक–एक करके अनुपयुक्त फार्मूलों को अलग करके अन्त में सही फार्मूला चुन सकते हैं। यह तय कर लेने के बाद उस फार्मूले को भी लिखकर एक बॉक्स में रखा जा सकता है – जिसे हम बॉक्स 2 कह सकते हैं।
- तब विद्यार्थी बॉक्स 2 में लिखे गए फार्मूले में उचित स्थानों तथा चिह्नों की जगह उन मानों तथा परिमाणों को रख सकते हैं जिन्हें उन्होंने बॉक्स 1 में चिह्नित किया था। मान रखे गए फार्मूले को फिर बॉक्स 3 में रखा जाता है।
- फिर विद्यार्थी गणना करता है और उत्तर को उपयुक्त इकाई के साथ एक अन्य बॉक्स 4 में लिखता है।
- इसका एक उदाहरण देने के लिए, मैं एन.सी.ई.आर.टी. की कक्षा 12 की पाठ्य–पुस्तक में हल किए गए एक संख्यात्माक प्रश्न (पेज 72, उदाहरण 3.3) का उल्लेख करना चाहूँगी।
- डेनियल सैल के लिए मानक इलेक्ट्रोड पोटेंशियल 1.1 वोल्ट है। नीचे दी गई रासायनिक क्रिया के लिए मानक गिब्स एनर्जी की गणना कीजिए :

$$Zn_{(s)} + Cu^{2+}_{(aq)} \longrightarrow Zn^{2+}_{(aq)} + Cu_{(s)}$$

इसे पढ़ने के बाद विद्यार्थी दी गई जानकारी को नीचे दिए गए बॉक्स 1 में और उपयोग किए जाने वाले फार्मूले को बॉक्स 2 में इस प्रकार लिख लेता है:

$E^0_{cell} = 1.1V$

इस आयनिक समीकरण से विद्यार्थी को यह पता लगता है कि इलैक्ट्रॉन बदलाव 2 का है

$F = 96487 \text{ C mol}^{-1}$

बॉक्स 1

$\Delta_r G^0 = -nFE^0_{(cell)}$

बॉक्स 2

$$\Delta_r G^0 = -2 \times 96487 \text{Cmol}^{-1} \times 1.1\text{V}$$
$$= -21227 \text{ J mol}^{-1}$$

बॉक्स 3

$$\Delta_r G^0 = -212.27 \text{ kJ mol}^{-1}$$

बॉक्स 4

यह पद्धति किस प्रकार मदद करती है?

- एक तो यह व्यवस्थित है तथा इसमें विद्यार्थी से कोई भी कदम चूकता नहीं है और इसलिए वह कोई अंक भी नहीं खोता।
- यदि विद्यार्थी से गणना में कोई गलती हो भी जाती है तो भी उसके पहले के लिखे हुए चरणों का मूल्यांकन अवश्य ही किया जाएगा।
- बहु–चरणों वाले संख्यात्मक प्रश्नों में यह गणना तक पहुँचने के लिए एक तर्कसंगत प्रवाह प्रदान करता है।
- मूल्यांकन करने वाले की दृष्टि से इतने सुव्यवस्थित रूप से प्रस्तुत किए गए उत्तर पर अंक देने में आसानी होती है।

उदाहरण 3

कक्षा बारह के रसायनशास्त्र के पाठ्यक्रम का अकार्बनिक भाग सबसे अधिक भयभीत करने वाला होता है क्योंकि इसकी विषयवस्तु में धातु विज्ञान की प्रक्रियाओं और उत्पादों तथा धात्विक यौगिकों के गुणों का विस्तृत विवरण होता है। यह एक अन्य ऐसा हिस्सा है जिसे सीखना तथा याद रखना कठिन होता है। वास्तव में, मेरे विद्यार्थियों में से अनेक इस भाग के कुछ हिस्सों को छोड़ दिया करते थे क्योंकि न वे इसे सीखना चाहते थे और न ही उन्हें, रटकर याद करने के अलावा, इसे सीखने का कोई बेहतर तरीका मालूम था। इसके अतिरिक्त, पाठ्य–पुस्तक सिर्फ चुने हुए गुणों की सूची देती थी और संक्षेप में उनको समझाती थी, जबकि सन्दर्भ पुस्तकों में प्रत्येक गुण को विस्तार से समझाया गया होता था। यह इस विषय की चुनौती का एक और पहलू था क्योंकि विद्यार्थी, हमेशा नहीं तो ज्यादातर, सन्दर्भ पुस्तकों में दी गई सभी सम्भव जानकारियों को याद करने की सोचते थे। वास्तव में यह आवश्यक नहीं था। विद्यार्थियों की सहायता से हमने इस समस्या से निपटने की एक विधि निकाल ली। एक उदाहरण लें – धात्विक यौगिकों के रासायनिक गुणों में, विद्यार्थियों को ऐसे यौगिकों के गुण सीखना थे जैसे पोटैशियम परमैंगनेट, पोटैशियम डाइक्रोमेट, सोडियम क्लोराइड, सोडियम कार्बोनेट और ऐसे ही अन्य। हमने इसके लिए निम्न पद्धति अपनाई :

- विद्यार्थियों को कम से कम पाँच सदस्यों वाले समूहों में बाँटा गया और समूहों ने पूरी तरह कक्षा के घण्टों में ही काम किया। इस काम में से कुछ भी घर नहीं ले जाया गया।
- प्रत्येक समूह को एक विशेष धातु के यौगिकों पर काम करने को कहा गया।
- समूह को पहले यह सुनिश्चित करना था कि उसके हर सदस्य के पास पाठ्य–पुस्तक की एक प्रति और कम से कम दो अलग–अलग सन्दर्भ पुस्तकों का सैट हो।

समूह किस तरह काम करते थे?

- प्रत्येक समूह अपनी जानकारी को ए 4 आकार के पेजों पर दर्ज करता था, और आमतौर पर यह जिम्मेदारी ऐसा विद्यार्थी लेता था जिसकी लिखावट सुगमता से पढ़ी जा सकती थी।
- इसके बाद पूरा समूह पाठ्य–पुस्तक में उस यौगिक के बारे में पढ़ता था। फिर वे यौगिक को बनाने की विधियाँ और उसके द्वारा दर्शाए जाने वाले रासायनिक गुणों को लिख लेते थे।
- इसके बाद उसे बनाने की विधियों तथा उसके रासायनिक गुणों के बारे में अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए सन्दर्भ पुस्तकों का उपयोग किया जाता था।
- समूह को दिए गए सभी यौगिकों के लिए यह पूरा काम किया जाता था और प्राप्त जानकारियों को संक्षेप में एक शीट पर इस प्रकार के प्रारूप में लिख लिया जाता था:

यौगिक का नाम	बनाने की विधि/ गुण	सम्बन्धित रसायनिक समीकरण	गुण का विशिष्ट उपयोग	गुण का प्रकार [ऑक्सीडाइजिंग (ऑक्सीकरण करना), रिड्यूसिंग (अपचयन करना) आदि]

- यहाँ हमने केवल पाठ्य–पुस्तक में बताई गई विधियों पर तथा उनके बारे में विस्तार से बात करने पर ध्यान केन्द्रित किया।
- इसके साथ ही उनके द्वारा दर्ज किए गए अनेक गुणों का प्रयोगशाला में आसानी से अवलोकन किया जा सकता था और इसलिए फिर हम प्रयोगशाला में जाकर उपयुक्त प्रयोगों को करते थे।
- प्रत्येक समूह के यौगिकों के बारे में उसके सदस्यों द्वारा जानकारी का संकलन कर लेने के बाद, उसे अन्य समूहों के साथ साझा किया जाता था जिनके सभी सदस्य जानकारी की फोटोकॉपी कर लेते थे।
- इस ढंग से चुनिन्दा जानकारी संकलित कर लेने के बाद, प्रत्येक विद्यार्थी को समान गुणों को विभिन्न यौगिकों में, उदाहरण के लिए ऐसे यौगिक जो रिड्यूसिंग (अपचयन) के गुणों को दर्शाते थे, पहचानने तथा चिहिनत करने का प्रयास स्वयं करना पड़ता था। कुछ विद्यार्थी तुलनात्मक गुणों के लिए फ्लो चार्ट्स या माइण्ड मैप्स बना लेते थे और उन्हें शेष कक्षा के साथ साझा करते थे।

उपरोक्त तीनों उदाहरणों में मैंने उन पद्धतियों को आपके साथ साझा किया है जिनका मैंने लगभग दो दशकों से अनुसरण किया है। वे इतने लम्बे समय तक मुख्य रूप से इसलिए चल सकीं क्योंकि वे विद्यार्थियों को अच्छी लगीं और इनसे उनका काम आसान हुआ। मुझे निरन्तर उनकी प्रतिक्रियाएँ मिलती रहीं। मामूली परिवर्तनों के अलावा लगातार इसी प्रकार उनका इस्तेमाल होता रहा। कुछ समय पहले सोशल नेटवर्किंग साइट्स में से एक पर मेरे विद्यार्थियों ने फ्लैश कार्डों के बारे में तथा कैसे अभी भी उन्हें उनका स्मरण आ जाता है इसके बारे में आपस में एक वार्तालाप किया!! एक शिक्षक के रूप में, मैंने जिन पुस्तकों का उल्लेख किया है उनकी अपेक्षा इस सबसे कहीं ज्यादा सीखा है। मैं आशा करती हूँ कि इन बीसेक वर्षों में अपने विद्यार्थियों की कुछ मदद कर सकी हूँ।



चन्द्रिका *अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन में काम करती हैं। उनके पास हाईस्कूल स्तर पर विज्ञान के क्षेत्र में बीस वर्षों तक कार्य करने का अनुभव है। उनसे chandrika@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।* ***अनुवाद*** *: सत्येन्द्र त्रिपाठी*



21 जब शिक्षक एक सुगमकर्त्ता होता है

निशा बुटोलिया

मैंने दो प्राइवेट स्कूलों में तीन–तीन साल तक प्राथमिक शिक्षक के रूप में काम किया है। इन दोनों स्कूलों में सभी शिक्षकों को मुम्बई के एक शैक्षणिक सलाहकार श्री रसिक भाई शाह के मार्गदर्शन में अध्ययन–प्रसंग (थीम) आधारित अध्ययन–अध्यापन प्रक्रिया का अनुसरण करने के लिए उपयुक्त सहयोग दिया गया। इस अध्यापन प्रक्रिया में अवधारणा और कौशल किसी एक थीम के आसपास केन्द्रित होते हैं। शिक्षक के सामने यह चुनौती भी होती है कि वह अपने पाठ्यक्रम को इस थीम से जोड़े।

हालाँकि अध्ययन–प्रसंग आधारित शिक्षण का पूरा विचार नूतन प्रयास है और हमने जिन गतिविधियों की योजना बनाई वे हमेशा ही रोमांचक होती थीं, लेकिन एक खास अनुभव अत्यधिक रोमांचित करने वाला था और उसे मैं आप सबके साथ बाँटना चाहूँगी।

कक्षा 3 के बच्चे 'मैं' अध्ययन–प्रसंग पर काम कर रहे थे। यह फरवरी 2009 के प्रारम्भ की बात है और मुझे गणित में द्रव्यमान, आयतन और लम्बाई के विषय–प्रसंगों (टॉपिक्स) को, साथ ही भाषा तथा ई.वी.एस. के अन्य विषय–प्रसंगों को पूरा करना था। भाषा और ई.वी.एस. की अवधारणाओं को पढ़ाना आसान था क्योंकि मैं इस विषय पर आधारित अनेक गतिविधियों की योजना बना सकती थी। मैं इसलिए परेशान हो रही थी, क्योंकि उन गतिविधियों को सोच पाना मुश्किल था जो इन सब विषयों – ई.वी.एस., भाषा और गणित की ऊपर उल्लिखित अवधारणाएँ– को एक साथ बाँध पातीं।

मैंने बहुत सोचा....इन शब्दों (द्रव्यमान, आयतन और लम्बाई) को सोचते हुए, मेरे आँखों के सामने निरन्तर तराजू की तस्वीर तस्वीर नाचती रही; पर उसका करना क्या था? क्या मैं अपने बच्चों को किसी दुकान पर ले जाऊँ, जहाँ वे देख पाएँगे कि चीजें कैसे तौली जाती हैं, तरल पदार्थों को कैसे मापा जाता है? पर ये सब तो वे रोज देखते हैं। इस अनुभव को नया और रोचक बनाने के लिए क्या किया जा सकता था? और सिर्फ दुकानदार को ही देखते रहना कोई बहुत रोमांचक बात नहीं है। क्या वह मेरे बच्चों को तराजू छूने और उससे वजन करने देगा? पर आखिर कितने बच्चे उसका इस्तेमाल कर पाएँगे – सभी 30 विद्यार्थी? हर बार उसी चीज को दोहराते रहना?...उबाऊ...। ये सब विचार मेरे दिमाग में घूमते रहे।

इसी बिन्दु पर मुझे यह रोचक विचार सूझा – क्यों न मेरे बच्चे अपना तराजू, बाट, और तरल पदार्थों को मापने के लिए पात्र बनाएँ? ये हुई न बात!

मैंने अपने बच्चों से कहा कि हम दो दिन बाद दुकानें लगाएँगे और दूसरी कक्षाओं के शिक्षकों और विद्यार्थियों को वस्तुएँ बेचेंगे। उन्होंने मुझसे बहुत सारे सवाल पूछना शुरू कर दिए, खुद ही कुछ सवालों के जवाब भी देने लगे और मुझे सुझाव देने लगे हमें इसे कैसे करना चाहिए।

हमने धीरे–धीरे आगे बढ़ना शुरू किया – वे सभी किलोग्राम (किग्रा.), ग्राम (ग्रा.), लीटर (ली.), मिलीलीटर (मिली.), मिलीमीटर (मिमी.), सेन्टीमीटर (सेमी.) और मीटर (मी.) से परिचित थे। थोड़ा दोहराव जैसा करने के बाद हम पत्थरों को इकट्ठा करने गए जिन्हें बच्चे तौल के बाटों की तरह इस्तेमाल करने वाले थे। इसके बाद हम मैदान में एक बड़ा गोला बनाकर बैठ गए। फिर प्रत्येक बच्चे ने अपने पत्थर दिखाए। उन्होंने पत्थरों पर 1 किग्रा., 500 ग्रा., 250 ग्रा., 50 ग्रा. आदि के लेबल लगा दिए। मैंने पत्थरों के आकारों पर नजर बनाए रखी – बहुत जल्दी ही उन्हें यह एहसास हो गया कि उनके पत्थरों के सापेक्षिक आकार और उनके द्वारा दर्शाई जाने वाली मात्रा में मेल होना चाहिए। उन्होंने

अपने साथियों से सीखा, एक–दूसरे की मदद की, अपनी गलतियों को सुधारा और ज्यादा चिकने पत्थरों की तलाश की।

हम वापस कक्षा में गए। साथ मिलकर, हमने तराजू बनाने के तरीकों के बारे में सोचा। हमने योजनाओं का आदान–प्रदान किया...सभी की योजनाएँ बहुत अच्छी थीं! उन्होंने मिट्टी की थालियों, स्टील की थालियों, कपों, पेपर थालियों, पत्तियों, डंडियों, लोहे की छड़ों, धागों आदि के उपयोग की सलाह दी।



मैंने उनसे उन वस्तुओं के बारे में सोचने के लिए कहा जिन्हें वे बेचना चाहते हों: एक वस्तु को एक ही बार बेचा जा सकता था। यहाँ पर, कुछ बच्चों ने कहा कि वे तेल बेचेंगे। मैंने कहा कि मुझे रस्सी की जरूरत है, क्या कोई उसे बेचने के लिए इच्छुक है? तुरन्त ही 5–6 हाथ खड़े हो गए। यहीं पर मुझे लम्बाई, द्रव्यमान और आयतन के बीच के अन्तर को तथा हम इन्हें कैसे माप सकते हैं, इन बातों की चर्चा करने का मौका मिला। हम सभी ने सम्भावित तरीकों के बारे में सोचा। तरल पदार्थों को मापने के लिए पात्रों को चुना और गहराई को मापने के लिए हमारे पास मीटर मापक थे।

फिर हम लोगों ने इस बात पर चर्चा की कि इस गतिविधि को अन्य कक्षाओं के बच्चों और शिक्षकों के लिए किस तरह रोचक बना सकते थे? हमने सोचा कि हम उन वस्तुओं का विज्ञापन करेंगे जिन्हें हम बेचने वाले थे। एक बार फिर, विज्ञापनों के लिए भी दस अलग–अलग विचार सामने आए – कागज पर लिखने के लिए नारे, जोर–जोर से बार–बार दोहराने के लिए नारे, कुछ प्रतिरूप आदि।

अगले दिन हम सभी ने अपनी दुकानों की तैयारी की। मैंने छोटी–छोटी चीजों जैसे मेजें लगाने, उनके नारों को संवारने, उनके विज्ञापनों को चिपकाने में उनकी मदद की और साथ ही मैं उनके सुझावों का भी अनुसरण करती जा रही थी।



इसके अगले दिन, हम अपनी दुकानों को लगाने की तैयारी से स्कूल पहुँचे।

सभी मेजों को दीवारों के समानान्तर लगा दिया गया। मेजों के सामने, मैंने सुन्दर नारे और विज्ञापन देखे – '2 किलो दाल खरीदें और 1 किलो मुफ्त पाएँ', 'बालों के लिए, खाना बनाने के लिए, त्वचा के लिए तेल; खरीदें और सेहतमन्द हो जाएँ'। ये मौलिक नारे थे, उनके खुद के। उनमें से कुछ ने कागज के थैले भी बनाए क्योंकि उनका कहना था कि हमें अपने पर्यावरण को स्वच्छ रखना जरूरी है।

मेरे प्यारे छोटे बच्चों में जबरदस्त उत्साह था; अपनी दुकानें लगाते हुए, वे इतने व्यस्त थे, नए–नए विचार सामने आ रहे थे और मैं वहाँ खड़ी हुई उन्हें निहार रही थी, बिलकुल अवाक!

अब दूसरे शिक्षक एक–एक करके अपने–अपने विद्यार्थियों के साथ वहाँ आए। उन्होंने बच्चों से उन्हें 3 किग्रा. आलू देने को कहा, बच्चों के साथ मोल–भाव किया, छुट्टे पैसे

माँगे और मेरे नन्हे बच्चे फिर एक बार हिसाब–किताब करने में लग गए। और हाँ, उन्होंने कागजों से भी पैसा बनाया! दूसरी कक्षाओं के लोग आए, उनके शिक्षकों ने मेरे बच्चों से पैसों पर, द्रव्यमान, आयतन, इकाइयों के परिवर्तनों, गाजरों के उपयोगों आदि पर सवाल पूछे। एक किग्रा चावल कितना होता है? अगर मैं सवा किलोग्राम खरीदूँ तो?

मेरे कुछ बच्चे हैरान–परेशान दिखाई दिए, कुछ आश्वस्त दिखे – पर कोई भी वहाँ से हटा नहीं। वे "ग्राहकों" के सवालों के जवाब देते गए।

एक शिक्षक ने अँग्रेजी में बात कर पाने के लिए मेरे बच्चों की प्रशंसा की। उन्होंने कहा कि वे धाराप्रवाह अँग्रेजी बोल पा रहे थे। मुझे बहुत खुशी हुई और गर्व का एहसास हुआ! पर मैं सोच में पड़ गई कि वे बच्चे जो अटक–अटककर अँग्रेजी बोलते थे, अचानक से क्या इसलिए धाराप्रवाह बोलने लग गए क्योंकि उन्हें बात करने के लिए एक खास सन्दर्भ मिल गया था।

लगभग 2 घण्टे बाद, जब लगभग सभी प्राथमिक कक्षाएँ हमारी दुकानों पर आकर जा चुकी थीं, हमने 'दुकान बन्द' का बोर्ड सामने लगा दिया। मेरे बच्चे थके तो लग रहे थे, लेकिन अभी भी उत्साह से भरे हुए थे।

हम सभी ने देखा कि दालों और अनाज के दाने पूरे फर्श पर बिखरे हुए थे। अब क्या किया जाए? हमने सोचना शुरू किया। फिर मैंने एक योजना उनके सामने रखी – क्या हम इन्हें बटोरकर कूड़ेदान में फेंक दें? वे सभी चिल्लाए, "नहीं!" (हमने पिछले अध्ययन–प्रसंग में 'हम जो खाना खाते हैं' के बारे में चर्चा की थी)। फिर हम सभी ने कुछ ऐसा करने का सोचा जो उपयोगी रहे। एक बच्चे ने सुझाव दिया कि हम इन सारे दानों को उठाकर वापस घर ले जाएँ। कुछ देर सोचने के बाद, हमने तय किया कि हम उन दानों को बगीचे में बो देंगे। हम सभी ने फर्श पर बिखरे हुए दानों को इकट्ठा करना शुरू किया, बगीचे में गए, जमीन में गड्ढे किए, उनमें बीज बोए और अपनी पानी की बोतलों से उन भावी पौधों में पानी दिया।

रोज हम यह अपेक्षा करते थे कि उन बीजों में से कुछ निकलेगा और एक दिन, ऐसा हुआ। यह वाकई में एक उपलब्धि थी!

दानों को बोने के बाद जब हम कक्षा में वापस गए, तो मैंने सुझाव दिया कि हम सभी को इस गतिविधि के बारे में लिखना चाहिए – कैसे हमने इसकी योजना बनाई, क्या–क्या तैयारियाँ की गईं, उन्हें कैसे अंजाम दिया गया, लोगों से बात करने के अनुभव और कुल मिलाकर उन्हें इन गतिविधि को करके कैसा महसूस हुआ।

बच्चों ने 2–3 पूरे पन्नों की रिपोर्ट लिखी – कक्षा 3 के बच्चे! मैं तो बिलकुल ही चकित रह गई! जब उनसे दूसरे दिए गए विषयों पर लिखने के लिए कहा जाता था तो वे एक या दो पैराग्राफ लिखा करते थे, पर आज तो वे लिखते ही चले गए... अपने शब्दों में... कोई बहुत धाराप्रवाह अँग्रेजी में नहीं..., लेकिन मेरा यकीन मानिए, वह उनकी योजनाओं, तैयारियों और उनकी कड़ी मेहनत के बारे में किया गया एक मौलिक और सटीक चिन्तन था। उन्होंने मुझसे कई सवाल पूछे – मुख्यत: हिन्दी और गुजराती शब्दों के अनुवाद पर और कभी–कभी वाक्य संरचनाओं को लेकर। मुझे एहसास हुआ कि ये बच्चे तो बहुत होशियार हैं; पहले मैं ही गलती कर रही थी। मैंने इन बच्चों को लिखने के लिए उपयुक्त सन्दर्भ नहीं दिया था।

मूल्यांकन

हम सतत समग्र मूल्यांकन (सी.सी.ई.) को अपनाया करते थे। मेरे बच्चों को हमेशा ही यह बात पता थी कि उनकी शिक्षक निश्चित ही चीजों का रिकार्ड बनाए रखेंगी। मुझे अपने बच्चों के साथ अपने अवलोकनों को साझा करने में कोई दिक्कत नहीं थी।

मेरे पास अँग्रेजी भाषा के विभिन्न पहलुओं – शब्दावली, व्याकरण, स्पेलिंग, लिखावट, सृजनात्मक लेखन – का मूल्यांकन करने के लिए मेरे बच्चों की रिपोर्टें थीं, और साथ ही मैंने उन अवलोकनों का भी रिकार्ड रखा हुआ था जब अन्य शिक्षकों और विद्यार्थियों के साथ उनका वार्तालाप होता था।

गणित के लिए, मैं हर मेज पर गई और उनसे किलोग्राम को ग्राम में, मीटर को सेन्टीमीटर में, लीटर को मिलीलीटर में परिवर्तित करने के, और इसी से मिलते–जुलते अन्य उचित प्रश्न पूछे।

ई.वी.एस. के लिए, प्रश्नों और उत्तरों के लिए कोई बहुत गुंजाइश नहीं थी, पर मैं पर्यावरण के प्रति उनकी संवेदनशीलता से जुड़े पहलुओं पर अपने अवलोकन दे सकी।

टिप्पणी– मूल्यांकन के ये सभी मापदण्ड सी.बी.एस.ई. के मानकों के अनुरूप हैं।

चिन्तन

जब मैंने बैठकर इस पूरे अनुभव के बारे में विचार किया, तो मुझे लगा कि मैंने किया क्या था? इस सबमें मेरी क्या भूमिका थी?

मेरे बच्चों ने बाट तैयार किए थे, उन्होंने ही दुकानें तैयार की थीं, उन्होंने सवाल उठाए थे, उन्होंने मेरी मदद माँगी थी, उन्होंने ही तमाम सुझाव सामने रखे थे।

वे सब कुछ सीख गए थे – पैसे, द्रव्यमान, आयतन, लम्बाई, अनाजों, दालों, सब्जियों के उपयोग के बारे में और ज्यादा बातें। उन्होंने नारे तैयार किए थे, उन्होंने शिक्षकों और विद्यार्थियों से अँग्रेजी में बात की, उन्होंने लोगों द्वारा पूछे जाने वाले सवालों को ठीक–ठीक समझा, उन्होंने रिपोर्टें लिखीं, उन्हें प्लास्टिक के बजाय कागज के थैलों के उपयोग का महत्व समझ आया, हमने कक्षा की सफाई की और कुछ अंकुर बोए।

गणित, ई.वी.एस., भाषा – मुझे लगा कि यह एक परिपूर्ण कक्षा थी!

हाँ, मैंने उनकी सहायता की और उन्हें प्रोत्साहन दिया। मैंने उन्हें मौका दिया। उन्होंने सारा काम किया, मैंने सिर्फ चिंगारी को हवा दी, मैं सुगमकर्त्ता हो गई थी!



निशा *बुटोलिया अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बंगलौर में भाषा टीम की सदस्य हैं। वे कई वर्षों तक प्राथमिक विद्यालय में शिक्षिका एवं अकादमिक समन्वयक रही हैं। थीम आधारित अध्ययन–अध्यापन प्रक्रिया पर भी उन्होंने लम्बे समय तक काम किया है। उनसे nisha@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।*
अनुवाद *: भरत त्रिपाठी*



22 भूगोल में कुछ अवधारणाओं का अभिनव शिक्षण

तपस्या साहा

मेरे लिए 'अभिनव शिक्षण' का अर्थ

'अभिनव शिक्षण' से मैं क्या समझती हूँ? नवीनता आविष्कार या खोज नहीं है; यह दो बातों पर ध्यान केन्द्रित रखते हुए उस विषय या अवधारणा को देखने का एक ढंग है जिसे मैं पढ़ाना चाहती हूँ। पहली, मैं बच्चों को **क्या** सम्प्रेषित करने का प्रयास कर रही हूँ और दूसरी उसे मैं **कैसे** करने वाली हूँ। इस 'कैसे' वाले भाग में **विस्मय का गुणात्मक तत्व होना चाहिए; विद्यार्थी के मन में सहसा उस अवधारणा का बोध हो जाने के अचरज का भाव जगना चाहिए**। शिक्षण के तरीके को विद्यार्थी के जीवन सन्दर्भ से जुड़ने वाला और थोड़ा चुनौतीपूर्ण होना बेहद जरूरी है। शिक्षक को बच्चे को पर्याप्त मानसिक स्वतंत्रता देना चाहिए।

अनोखी स्थिति

मांडवा,सिरोही, राजस्थान के अज़ीम प्रेमजी स्कूल में एक छोटा आँगन है जो लम्बाई, चौड़ाई में 30 फुट X 15 फुट से ज्यादा नहीं है। स्कूल में यही एक ऐसी जगह है जिसमें उसके सभी चालीस बच्चे एक साथ इकट्ठे हो सकते हैं; यह जगह उन सबके, एक–दूसरे की पहुँच से बाहर जाए बगैर, जितनी वे चाहते हैं उतनी दौड़–भाग करने के लिए पर्याप्त बड़ी नहीं है। इसलिए वे एक–दूसरे के काफी नजदीक थे, हालाँकि उन्हें इस बात का बोध नहीं था। मैं इस स्थान का उपयोग बहु–स्तरीय, बहु–कक्षा वाली तथा साथियों से परस्पर सीखने वाली गतिविधियों के लिए करना चाहती थी।

बच्चों को (शिक्षा का अधिकार कानून के मानकों के हिसाब से) उनकी आयु के अनुसार दाखिला दिया गया था। पहली कक्षा के बच्चे कभी स्कूल नहीं गए हैं, दूसरी और तीसरी कक्षाओं में कुछ बच्चे स्कूल जा चुके हैं, कुछ स्कूल छोड़ चुके बच्चे हैं और कुछ पहली बार स्कूल आए हैं; इसलिए बच्चों के शैक्षणिक स्तर बहुत भिन्न नहीं थे, हालाँकि उनकी उम्रों में अन्तर था।

मैं इस अवसर का उपयोग सभी चालीस बच्चों के एक साथ कुछ सीख सकने के लिए करना चाहती थी।

विषय–प्रसंग सं. 1

ऋतुएँ किस कारण होती हैं?

उद्देश्य

1. विद्यार्थी स्वयं यह बात देखें कि सूर्य, आँगन से दूर होता हुआ दक्षिण की ओर जा रहा है और हवा में महसूस होने वाली हल्की ठण्ड से इसका सम्बन्ध है।
2. सूर्य के चारों ओर पृथ्वी की गति (परिक्रमा) ही गर्मी तथा ठण्ड की ऋतुओं का कारण होती है।

गतिविधि

यह गतिविधि 29 दिनों, 10 सितम्बर से 8 अक्तूबर, तक चलती रही। बच्चों ने 10, 14, 17, 20, 26 तथा 28 सितम्बर को और 3 तथा 4 अक्तूबर को मिलाकर 8 प्रेक्षण किए।

बच्चों ने उन तारीखों पर जब अच्छी चमकदार धूप निकली तब एक विशेष समय पर आँगन में प्रवेश करने वाली सूर्य की किरणों के पड़ने की स्थिति को चिह्नित किया।

चरण

1. सभी तीनों कक्षाओं के बच्चों के मिले–जुले समूह ने आँगन में सुबह 8.12 बजे प्रवेश करने वाली सूर्य की किरणों की भूमि पर स्थिति को सफेद ऑइल पेंट से चिह्नित किया।

2. सभी बच्चों ने किरणों का चिह्नित किया जाना देखा। इस चिन्ह के आँगन में होने के कारण बच्चे बिना किसी प्रयास के उसे हमेशा देख सकते थे।

3. एक शिक्षक प्रेक्षण का दिनांक तथा समय एक चार्ट पर दर्ज कर लेता था जो आँगन की दीवार पर लगा हुआ था।

4. शिक्षकों तथा बच्चों ने प्रेक्षण के अन्तिम दिन चिह्नों की दूरी को नापा।

अन्तिम कार्य

1. शिक्षक ने बच्चों से पूछा कि क्या इन दिनों सुबह के समय थोड़ी अधिक ठण्ड हो रही थी और यदि ऐसा था तो उसका क्या कारण था। वे इस बात से तो सहमत थे कि ठण्डक ज्यादा थी पर वे उसके कोई कारण नहीं बता सके।

2. जैसा हमने साथ–साथ अवलोकन किया, बच्चों ने जमीन पर बनाए गए चिह्नों को दिन ब दिन अधिक तिरछा होते हुए पाया। पहले तथा अन्तिम चिह्न के बीच में 28 से.मी. का बड़ा फासला पाया।

3. शिक्षक तथा बच्चे सूर्य की स्थिति देखने के लिए दरवाजे पर गए। सूर्य की किरणों की दिशा के साथ उसकी तुलना करने पर बच्चों को स्वयं यह एहसास हुआ कि सूर्य दक्षिण की ओर हट रहा था।

4. सभी इस बात पर सहमत हुए कि सूर्य का दक्षिण की ओर विचलन ही उसकी किरणों के तिरछे होते जाने का कारण था।

5. सभी इस बात को मानसिक रूप से देख पा रहे थे कि कुछ ही दिनों की अवधि में कोई भी सूर्य की किरणें आँगन में प्रवेश नहीं करेंगी।

6. सभी ने इस तथ्य का अवलोकन किया और समझा कि जब सूर्य दक्षिण की ओर हटता जाता है तो शीत ऋतु होती है। जब वह उत्तर की ओर हटता है तब गर्मी की ऋतु होती है।

7. सबने यह स्वीकार किया कि सूर्य की गति के कारण ही ऋतुओं का परिवर्तन होता है।



ऋतुएँ– छायाओं के स्थान–परिवर्तन

विषय–प्रसंग सं. 2
"अक्षांश तथा देशान्तर की रेखाएँ क्यों खींची जाती हैं?"
यह गतिविधि कक्षा 6 तथा उससे ऊपर की कक्षाओं के विद्यार्थियों के लिए निर्मित की गई थी।

इस गतिविधि के पहले, मैंने बच्चों से अक्षांश तथा देशान्तर रेखाओं के बारे में पूछा और पाया कि उन्हें अक्षांश तथा देशान्तर की कुछ पूर्व जानकारी थी, लेकिन वे इन बातों के बारे में भ्रमित थे :

1. इन रेखाओं की आवश्यकता क्यों होती है?

2. अक्षांश तथा देशान्तर की इन रेखाओं को कैसे पढ़ा जाता है?

उद्देश्य

1. अक्षांशों और देशान्तरों को पढ़ना।

2. यह समझना कि ये निर्देशांक (को–ऑर्डिनेट्स) हैं, जो कागज की एक (दो–आयामी) कोरी शीट पर ही नहीं, बल्कि एक गोले, अर्थात ग्लोब, पर भी खींचे गए हैं।

3. यह समझना कि अक्षांश तथा देशान्तर रेखाएँ किसी स्थान की एकदम सही स्थिति पता करने में हमारी सहायता करती हैं।

पृष्ठभूमि
यह गतिविधि सिरोही जिले के श्योगंज ब्लॉक में लगे एक

'बाल मेले' के दौरान कक्षा 6, 7, तथा 8 के विभिन्न स्कूली बच्चों के साथ की गई थी।

गतिविधि 1

"मैं कहाँ हूँ?"

सामग्री

1. ऊन के विरोधी रंगों – पीले तथा मैरून – के दो गोले।
2. कार्डों के 8 जोड़ों का सैट ए जिसमें से 4 जोड़ों पर 1 से 4 तक की संख्याएँ लिखी हों।

1	2	3	4
2 कार्ड	2 कार्ड	2 कार्ड	2 कार्ड

कार्डों के दूसरे 4 जोड़ों पर क्रमशः ए, बी, सी तथा डी लिखे हों।

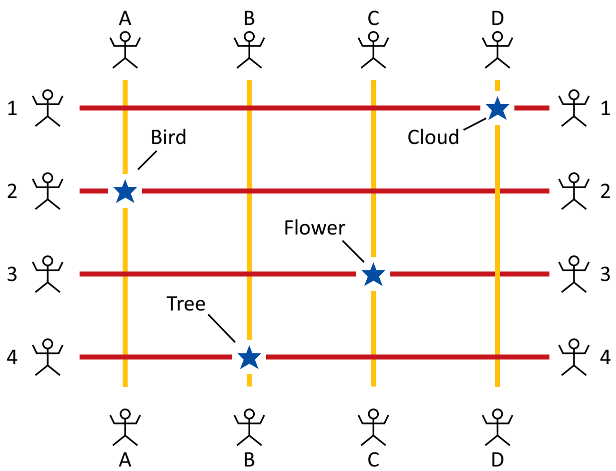
A	B	C	D
2 कार्ड	2 कार्ड	2 कार्ड	2 कार्ड

3. सैट बी जिसमें 4 कार्ड हों जिनमें से एक–एक पर एक बादल, पेड़, फूल तथा चिड़िया के चित्र हों।

बादल	पेड़	फूल	चिड़िया

चरण

1. विद्यार्थियों को चार समूहों में बाँटा गया।
2. हर समूह को स्पष्ट निर्देश दिए गए।
3. समूह ए में 16 विद्यार्थी थे जिनमें से प्रत्येक सैट ए के कार्डों में से एक–एक कार्ड लिए हुए था और उन विद्यार्थियों को चित्र 1 में दिखाए गए अनुसार खड़ा किया गया था। जिन विद्यार्थियों के पास समान संख्या/अक्षर वाले कार्ड थे वे एक–दूसरे की ओर आमने–सामने मुँह करके खड़े थे और वे एक विशेष रंग का ऊनी धागा भी पकड़े हुए थे, जिससे कि सभी अक्षर वाले पीले ऊन के साथ और सभी संख्याओं वाले मैरून रंग के साथ थे। इस प्रकार बना क्षेत्र चित्र 1 की तरह दिखाई दे रहा था।
4. समूह बी के विद्यार्थी "बादल", "पेड़", "फूल" और "चिड़िया" के चित्रों वाले कार्ड लिए हुए थे और वे ऊन की रेखाओं के बिन्दुओं में से अपनी पसन्द के किसी भी बिन्दु पर खड़े हो गए।



चित्र–1

5. समूह सी के विद्यार्थियों ने पूछा कि इन "बादल", "पेड़", "फूल" तथा "चिड़िया" में से प्रत्येक कहाँ स्थित था।
6. समूह डी के विद्यार्थियों ने निर्देशांकों को ध्यान से देखकर तथा एक–दूसरे से विचार–विमर्श करके इन प्रश्नों के उत्तर दिए।

स्वेच्छा से आगे आए एक बच्चे की सहायता से मैंने समझाया कि किसी चीज की स्थिति का पता कैसे लगाया जा सकता है और किस निर्देशांक का उल्लेख पहले करना पड़ता है।

गतिविधि 2

"गंतव्य स्थान"

सामग्री

i. विरोधी रंगों – हरा तथा नीला – के ऊनी धागों के दो गोले।

ii. कार्डों के 10 जोड़ों, अर्थात 20 कार्डों, का सैट ए, जिनमें से :

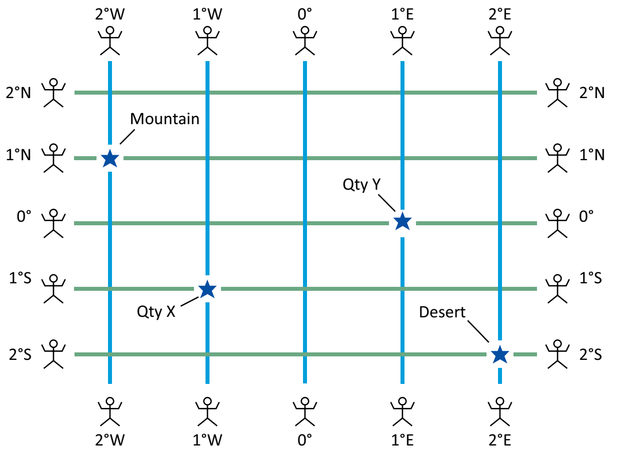
- कार्डों के दो जोड़े 0° निरूपित करते हैं।
- कार्डों के 8 जोड़े 1° उत्तर, 2° उत्तर, 1° दक्षिण, 2° दक्षिण, 1° पूर्व, 2° पूर्व, 1° पश्चिम तथा 2° पश्चिम को निरूपित करते हैं (इनमें से प्रत्येक को 2 कार्डों द्वारा निरूपित किया जाता है)।

iii. कार्डों का सैट बी, जिसमें 4 कार्ड होंगे और उन पर "पहाड़", "शहर एक्स", "शहर वाई", और "रेगिस्तान" के चित्र हों।

चरण

1. विद्यार्थियों को अक्षांश रेखाओं तथा देशान्तर रेखाओं वाले सैट ए के कार्डों का उपयोग करते हुए अपने को उसी तरह व्यवस्थित करने के लिए कहा गया जैसा उन्होंने संख्याओं तथा अक्षरों वाले कार्डों के साथ किया था। कुछ एटलस भी, यदि उनकी जरूरत पड़े तो उपयोग करने के लिए रखे गए थे।

   यहाँ समूह बी के विद्यार्थियों ने संख्या तथा अक्षर वाले कार्डों के बजाय अक्षांश तथा देशान्तर रेखाओं वाले कार्ड ले लिए। विद्यार्थियों की स्थिति अब वैसी होती है जैसी चित्र 2 में दर्शाई गई है।



चित्र–2

2. समूह सी के विद्यार्थी "पहाड़", "शहर एक्स", "शहर वाई", तथा "रेगिस्तान" की तस्वीरों वाले कार्डों के साथ अपनी पसन्द की स्थितियों पर खड़े हो गए।

3. समूह डी के विद्यार्थियों ने प्रत्येक तस्वीर वाली चीज की स्थिति पूछी और समूह ए के विद्यार्थियों ने आपस में सलाह करके उनके प्रश्नों के उत्तर दिए।

स्वेच्छा से आगे आए एक विद्यार्थी की सहायता से मैंने समझाया :

- अक्षांशों तथा देशान्तरों के संख्या–नाम किस तरह दिए जाते हैं।
- किसी स्थान की स्थिति बताते समय किस निर्देशांक (अक्षांश तथा देशान्तर) का उल्लेख पहले किया जाता है।



अक्षांश रेखाओं और देशान्तर रेखाओं को समझना

[हालाँकि यहाँ इसका उल्लेख मैं अन्त में कर रही हूँ, पर वास्तव में मैंने इस पूरी बात को तभी उदाहरण सहित समझा दिया था जब जाल (लम्बवत तथा क्षैतिज रेखाओं का जाल) बनाया गया था।]

अवलोकन

- चूँकि यह विभिन्न स्कूलों से आए तथा विभिन्न कक्षाओं (कक्षाओं 6, 7, तथा 8) के लड़के–लड़कियों का मिला–जुला समूह था, इसलिए 'एक–दूसरे से सीखना' स्वाभाविक रूप से घटित हो रहा था।
- चूँकि यह कक्षा के भीतर होने वाला सामान्य क्रियाकलाप नहीं था, इसलिए बच्चे किसी भी प्रकार के बोझ से मुक्त थे। वे प्रसन्न और यह जानने के लिए उत्सुक थे कि 'खुले मैदान में अक्षांश तथा देशान्तर के पाठ को

सिखाने वाला यह किस तरह का खेल था?'

- ऊपरी कक्षाओं के बच्चों ने निर्देशों को स्पष्ट रूप से समझ लिया और इससे फिर उनसे छोटे बच्चों को भी उन्हें समझने में मदद मिली। ऐसा इसलिए भी हुआ क्योंकि निर्देश तथा शिक्षण के साथ वास्तविक प्रदर्शन भी जुड़ा हुआ था।
- विभिन्न स्कूलों के बच्चों के बीच में स्पर्धा की एक अन्तर्धारा का आभास होता था, हालाँकि उसे खुले तौर पर व्यक्त नहीं किया गया था। पर मैंने एक अच्छी बात देखी कि इसकी वजह से उन्होंने समस्या/प्रश्न को समझने में एक दूसरे की मदद की।
- सारे कार्डों के समाप्त हो जाने के बाद भी वे खेल को जारी रखना चाहते थे।
- विद्यार्थी निर्देशों को पूरी तरह से समझ गए थे और फिर वे इस खेल को अपने आप खेल सकते थे।



तपस्या *वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन में स्कूल कोर टीम से जुड़ी हुई हैं। उनके पास हाईस्कूल कक्षाओं को भूगोल पढ़ाने का लगभग 14 वर्ष का अनुभव है। उनसे tapasya@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।* ***अनुवाद*** *: सत्येन्द्र त्रिपाठी*



23 सीखने की नई ऋतु

यामिनी झा

यदि हम समग्र शिक्षा में आस्था रखने वाले शिक्षकों की तरह कक्षा में जाते हैं, तो हम जानते हैं कि सार्थक शिक्षा एक प्रकार का समवेत संगीत (सिम्फनी) है जो मस्तिष्क, हृदय तथा हाथ–पैरों के समन्वित विकास से उत्पन्न होता है। शिक्षान्तर स्कूल में हम बच्चों के लिए सीखने का उल्लासमय वातावरण निर्मित करने में और अपने पाठ्यक्रम को समूह की आवश्यकता के अनुसार विकसित करने में विश्वास करते हैं। पिछले वर्ष मेरा समूह एक उल्लेखनीय रूप से बुद्धिमान तथा विचारवान समूह था। सात वर्ष की आयु वाले वे अधिकांश बच्चे ऐसी गतिविधियों में आनन्द लेते हुए प्रतीत होते थे जिनके लिए विश्वकोशों में से तथ्यों की खोज करने की आवश्यकता होती थी। वे भोजनावकाश के समय एक–दूसरे से प्रश्न पूछने के खेल खेलते, पहेलियाँ बनाने में मजा लेते, करीब–करीब हर चीज पर अपनी राय साझा करते और विज्ञान में परिकल्पनाएँ बनाने की कोशिश करते दिखते थे। वह एक ऐसी कक्षा लगती थी जिसका हिस्सा कोई भी शिक्षक बनना पसन्द करता।

चूँकि अधिकांश बच्चे अपनी संज्ञानात्मक या सोचने की क्षमताओं में सशक्त थे, इसलिए हमारा काम ऐसे अन्य क्षेत्र खोजना था जिनके विकास करने की आवश्यकता होगी। मुझे यह बात विशेष रूप से गौर करने लायक लगी कि प्रकाश तथा रंगों की खोजबीन के विज्ञान के एक अध्ययन–प्रसंग में, अधिकांश ऐसी गतिविधियों में बच्चों को आनन्द आया जिनका सम्बन्ध तथ्यों की जानकारी हासिल करने से था, उदाहरण के लिए इन्द्रधनुष कैसे बनते हैं, प्रकाश की गति 300,00 कि.मी. प्रति सैकेण्ड है आदि। उस उम्र में हमें जिस चीज की जरूरत थी, वह थी बस अपने आसपास के प्रकाश और रंगों को सराहना, इसकी खोजबीन करना कि धूप हमें कैसे प्रभावित करती है, वह हमें कैसा महसूस करवाती है, कैसे वह हमारे आसपास की भूमि पर परिवर्तन लाती है, कैसे वह हमारे आसपास के संसार में रंगों को परिवर्तित करती है आदि। हम अपने स्वयं के ढंग से केवल तभी "सोच सकते" हैं और खोज को सम्भव बना सकते हैं, जब जो हम "करते" हैं उसे हम "अनुभव" भी करें।

सोचने के क्षेत्र का अनुभव और करने के क्षेत्रों से पूर्ण एकीकरण (जिसके बारे में हम अक्सर दार्शनिक ढंग से सैद्धान्तिक बातें करते हैं) कर पाने की क्षमता का मेरे लिए अपनी कक्षा के कार्य में समावेश कर सकना तब सम्भव हुआ जब एक सहकर्मी, श्रीमती अमीता शेट्टी कपूर, के माध्यम से मेरा परिचय शिक्षा में डाक्टर रूडोल्फ के दृष्टिकोण से हुआ। ऐसे एकीकरण का एक उदाहरण नीचे दिया गया है।

जब शीत ऋतु आने लगी तो हमने आसपास के संसार से एक विषयसूत्र को लेकर एकीकरण करने का प्रयास किया। विषयसूत्र के रूप में हमने शीत ऋतु की जाँच–पड़ताल की। शुरुआत हमने यह देखने से की कि किस बात से हमें एहसास होता है कि शीत ऋतु आ गई है। सर्किल टाइम में होने वाली "ऋतु परिवर्तन" की चर्चाओं में उन प्रोजैक्ट्स के लिए, जिनकी योजना हमने आने वाले ठण्ड के दो महीनों के लिए बनाई हुई थी, बहुत आवश्यक दिशाएँ निकलकर सामने आईं। "तापमान परिवर्तन" की चर्चा से ध्यान वस्त्रों तथा धागों पर गया। जिसमें हमने विभिन्न बुनावटों वाले कपड़ों को छूकर महसूस किया और हम बुनने की क्रिया के प्रथम चरणों को कक्षा में लेकर आए। गाँठे लगाना सीखा गया, जूते पहनने में यह सीख जुड़ गई कि अपने जूतों के फीते कैसे बाँधते हैं। यह गतिविधि जूतों के फ्लेप के काटे गए नमूनों (कट आउट) को बनाकर सीखी गई। फ्लेप में

बाकायदा छेद किए गए और बच्चों ने चरणबद्ध ढंग से उन छेदों फीते डालकर बाँधना सीखा।

इसके बाद ऊन की बुनाई करने में उनकी उँगलियाँ चलाने की कुशलता को चुनौती मिली। हमने इस प्रोजैक्ट को एक कहानी के रूप में बच्चों के सामने प्रदर्शित किया। इस कहानी को यहाँ दोहराया जा सकता है क्योंकि इसका क्रम उँगलियों से बुनाई करने के क्रम को निरूपित करता है। किसी जगह एक छोटा तालाब था (यहाँ हम ऊन से



एक फन्दा बनाते हैं, जिसमें दाहिनी तरफ का धागा ऊपर आता है), एक किंगफिशर को भूख लगी और उसने पानी में गोता मारा (यहाँ हम दिखा सकते हैं कि हम कैसे फन्दे के अन्दर उँगली डालते हैं) और पानी में से खाने के लिए एक मछली निकाल लाया (धागे को फन्दे में से खींचना)। तालाब फिर से शान्त हो गया (फन्दा फिर से उसी आकार का हो गया)। अलग–अलग बच्चे इसे भिन्न–भिन्न स्तरों की कुशलता से कर सके; महत्वपूर्ण बात उनका प्रयास करना और उस अभ्यास को जारी रखना था। इसलिए इसे एक ऐसी गतिविधि बना दिया गया जिसे बच्चे अपने खाली समय में कक्षा में कर सकते थे। यदि वे अपना काम समय से पहले कर लेते थे तो यह गतिविधि उन्हें व्यस्त रखती थी। जिन लोगों ने उसमें निपुणता हासिल कर ली थी उन्हें भी सलाइयों से बुनाई करने के लिए प्रोत्साहित किया गया। हालाँकि इसमें सहायक की भूमिका निभाने वाले व्यक्ति के सामने बहुत–सी सामग्री की व्यवस्था करने, गतिविधि का



प्रदर्शन करने के कौशलों के अलावा अत्यन्त धैर्य बनाए रखने की चुनौती होती है। बच्चे कदम–कदम पर अटक जाते हैं और प्रत्येक की उसके स्तर पर व्यक्तिगत रूप से मदद करना पड़ती है। पर यह मेहनत तब सार्थक हो जाती है जब आप देखते हैं कि बच्चों ने कितने कौशल सीख लिए हैं। मैं इस गतिविधि में अकेली ही सहायक का काम कर रही थी। लेकिन यदि यह गतिविधि पहली बार की जा रही हो तो हाथ के काम में मदद करने के लिए एक और व्यक्ति का होना निश्चित ही उपयोगी होगा।

इसके बाद, 'भोजन' के विषय का अन्वेषण किया गया जिसमें मैथी की चपाती बनाने जैसे प्रोजैक्ट्स को प्रारम्भ से अन्त तक किया गया। एक इकट्ठे समूह की तरह बच्चों ने मैथी काटना, मसाले डालना, आटा गूँथना सीखा। जब 26 बच्चे बारी–बारी से उसी आटे को गूँथते हैं तो आटा वाकई में बहुत बढ़िया मड़ जाता है। फिर उन्हें हर मेज पर मड़े हुए आटे की छोटी–छोटी लोइयाँ दी गईं जिनको उन्होंने अपनी पसन्द के अनुसार चपाती के रूप में बेलने की कोशिश की। वे अपनी–अपनी चपाती रसोईघर में ले गए। जिन्हें खुद के ऊपर भरोसा था उन्होंने सहायक के निरीक्षण में उसे पकाया भी।

'ऋतु' के विषयसूत्र के अन्वेषण को तब एक दूसरे आयाम में ले जाया गया जब अगले प्रसंग – 'शिक्षान्तर में पेड़/पौधे' – में मनुष्य से हटकर प्रकृति हमारे ध्यान का केन्द्र हो गई। प्रोजैक्ट के पहले दिन की खास बात स्कूल में

लगाए गए पहले पेड़ को देखने जाना था। तब हमें मालूम हुआ कि क्यों वटवृक्ष को स्कूल के प्रतीक चिन्ह की तरह चुना गया था। यह हम सबके लिए स्कूल में अपनी जड़ों को खोजने जैसा था, जिसके चलते हर बच्चे ने बरगद के पेड़ पर लगी एक पत्ती के चित्र के रूप में अपनी भावनाओं को दर्शाया और उस माह के लिए कक्षा के एक वृक्ष की रचना की। अगले दिन हर बच्चे का अपना–अपना एक पेड़/पौधा था जिसे उन्होंने अपनी प्रकृति की सैर के बाद चुना था। पूरे सप्ताह भर वे उस पेड़ के पास थे – उसको छूकर महसूस करते हुए, उसका चित्र बनाते हुए, पत्तियों की छापें लेते हुए, छाल की छापें लेते, इस तरह के तथ्यों की पड़ताल करते हुए कि एक पूरे साल के दौरान, फलों, फूलों, बीजों, आयु के अनुसार ऊँचाई (कितनी मंजिलें, सीढ़ियाँ, फैली हथेली के विस्तार की माप, आदि) की दृष्टि से पेड़ किन परिवर्तनों से गुजरा।

अधिकांश शोध का मार्गदर्शन बगीचे की देखरेख करने वाले माली भैया ने किया। यह ऐसा विषय था जिसमें सहायक के रूप में प्रबन्धन करने की कम से कम जरूरत थी। हर बच्चा स्कूल के अलग–अलग कोनों में किसी ताड़ के पेड़, या आम के पेड़ या बाँस के झाड़ या तुलसी के पौधे आदि के पास जमा हुआ था। उनमें इसको लेकर इतना उत्साह था कि वे कक्षा में अपना काम समय से पहले पूरा कर लेते ताकि वे अपने पेड़ के बारे में किसी नई बात की खोज कर सकें। वे इसमें ऐसे तल्लीन हो जाते कि एक–दूसरे से बात करना भी भूल जाते भले ही वे पेड़ के नीचे बगल में ही बैठे हों। अन्त में, प्रकृति के साथ इस जुड़ाव के परिणामस्वरूप एक सुन्दर पुस्तिका निकल कर आई, जो अनोखी थी क्योंकि उसमें हर बच्चे के अपने विचार थे – कोई कहानी या हृदय से महसूस की गई कविता, हाथ/पैर से नापे गए तथ्य आदि। हर चित्र भी उस रिश्ते को निरूपित करता था जो उसे बनाने वाले बच्चे ने अपने पेड़ से जोड़ा था। बाँसों का झुरमुट हाथों वाले एक ऐसे पौधे जैसा दिखाई दे सकता था जो हाथ बढ़ाकर आकाश को छूने की कोशिश कर रहा हो। एक आम का वृक्ष हमें ऐसा एहसास करा सकता था कि उसे अपने को बर्फ से बचाने के लिए नुकीली पत्तियाँ रखने की जरूरत थी। यह पूरी तरह से कार्य रूप में 'करके सीखना' था।

'ऋतु' के विषयसूत्र की यह यात्रा आगे भी जारी रही जब ये वृक्ष हमारे पंछियों के घरों में बदल गए। एक पक्षी अभयारण्य(जो प्रवासी पक्षियों का निवासस्थल है) के भ्रमण–दौरे के परिणामस्वरूप 'ऋतु' का सम्पूर्णता से एकीकरण हो गया। बच्चों ने, समूहों में अवलोकन किए और पक्षियों के तीन अलग–अलग आवास–स्थलों की रचना की, जिनका निर्माण कागज की लुगदी से किया गया था। किंगफिशर पक्षियों की सुरंग कक्षा के बगल में रेत के क्षेत्र में बनी काल्पनिक झील में खोद कर बनाई गई। हमने बाँसों के ऊँचे झुरमुटों में एक घोंसले के साथ छिपे हुए एक मोर को भी ढूँढ़ निकाला। छोटी–छोटी जानकारियों के विस्तृत विवरण हम वयस्कों को भी समृद्ध बनाते रहे, क्योंकि उनसे यह साफ जाहिर होता था कि बच्चों ने कितने ध्यान से पक्षियों का अवलोकन किया था।

इन सभी विषय–प्रसंगों (थीम्स) में कुछ आवश्यक मूल तत्व थे –बच्चों की आयु के लिए विषयवस्तु का उपयुक्त होना; सर्किल टाइम के दौरान दिन के कार्य की दिशा तय होना; एक कोने में ब्लैकबोर्ड पर बनाए गए चित्र जो विषय–प्रसंग पर शिक्षक की दृष्टि को दर्शाते थे और जो प्रतिदिन बदल जाते थे; कविताएँ, कभी हाव–भाव पूर्ण अंग–संचालन के साथ और कभी उसके बिना; संवेदनशील क्षेत्रों को उभारने वाली कहानियाँ; विषय–प्रसंगों के पूरा होने को निरूपित करने के लिए मानसिक–मानचित्रण।

कक्षा में गायन, काव्य, कला आदि का भरपूर समावेश होता था। तीन माह की समाप्ति के बाद हमने जो विशेषता देखी, वह थी बच्चों का काव्य, संगीत तथा कला के प्रति प्रेम। यहाँ तक कि शब्दों की सूची बनाने में भी बच्चे जो शब्द या वाक्य लिखते थे उसके सामने कोई चित्र बना होता था, क्योंकि उन्होंने वह सब चुपचाप आत्मसात कर लिया था और गहराई से अनुभव किया था।

बच्चों को अधिक सीखने और रचनात्मक होने की जरूरत होती है, लेकिन उसके पहले हम शिक्षकों को रचनात्मक

होने की आवश्यकता है। हम सभी को विषय को महसूस करने की, फिर विचार में उसकी रचना करने की और क्रिया में उसका प्रदर्शन करने की आवश्यकता होती है।

शिक्षकों की तरह हमें वाकई में अधिक से अधिक सीखने की जरूरत होती है और यह केवल पुस्तकों से नहीं होना चाहिए। हमें जरूरत होती है एक अन्तर्यात्रा की, जहाँ हम पीछे हट जाएँ, अपने जीवन में बच्चों– जैसे विस्मय को शामिल करें, फिर से प्रकृति का और अपने आसपास के संसार का अवलोकन करें,चीजों को प्राकृतिक रूप से अनुभव करें तथा क्रियान्वित करें। इससे हमारा काम सहज ही सटीक ढंग से होने लगता है और बच्चे को सीखने में सराबोर कर देता है। यही एकमात्र तरीका हमारी दृष्टि में बदलाव लाता है, हमें जागरूक बनाता है तथा शिक्षक की तरह तैयार करता है।



__यामिनी__ शिक्षा के क्षेत्र में पिछले 12 वर्षों से काम कर रही हैं। वे समग्र शिक्षा के क्षेत्र में आत्म–निर्देशित सीखने वाली और खोजी हैं। उन्हें वाल्डोर्फ ऐजुकेशन एण्ड ऐंथ्रोपॉलॉजी से प्रेरणा मिली है। उन्होंने 5 वर्ष ऐजुकैम्प के साथ काम किया है जहाँ वे इंटैल के 'टैक्नॉलॉजी इन ऐजुकेशन प्रोजैक्ट' का तथा दिल्ली में विप्रो ऐप्लाइंग थॉट इन स्कूल्स के 'क्वालिटी इन ऐजुकेशन (शिक्षा में गुणवत्ता)' प्रयास का नेतृत्व कर रही थीं। उन्होंने गुड़गाँव के शिक्षान्तर स्कूल में भी पढ़ाया है जो शिक्षा में श्री अरविन्द के दर्शन पर आधारित एक प्रगतिशील स्कूल है। वे अपना समय एक शोधकर्ता, उद्यमी तथा पालक की भूमिकाएँ निभाने में व्यतीत करती हैं। उनसे yamini.jha.7@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। __अनुवाद :__ सत्येन्द्र त्रिपाठी



24 विज्ञान शिक्षण में भावनात्मक दृष्टिकोण

श्रीनिवासन कृष्णन

विज्ञान को सामान्यतया तथ्यों तथा विधियों के समूह की तरह देखा जाता है। पर, यही वह दृष्टिकोण है जिसके प्रति विज्ञान सीखने के दौरान अनेक बच्चे प्रतिक्रिया करते हैं और जिसका परिणाम इस विषय के प्रति अरुचि हो सकती है, जो काफी खेदजनक है। इस लेख में, मैं जिस स्कूल में पढ़ाता हूँ वहाँ विज्ञान शिक्षण के लिए अपनाए गए दृष्टिकोण की चर्चा करूँगा, जिसमें कक्षा के भीतर ऐसा उपयुक्त वातावरण निर्मित करने का प्रयास किया जाता है जो शिक्षक तथा विद्यार्थी दोनों के लिए लाभकारी हो।

विज्ञान जिन बुनियादी कौशलों को गहराई से सिखाने का प्रयास करता है, वे हैं : जानकारी इकट्ठी करना, इस जानकारी को तालिकाओं तथा ग्राफों (लेखाचित्रों) जैसे उपयुक्त रूपों में प्रदर्शित करना, सरल विश्लेषण तथा उपयुक्त रिपोर्ट लिखना। इसमें शामिल होने वाले अन्य कौशल हैं : तार्किक निष्कर्ष निकालने तथा अनुमान लगाने की क्षमता, इकट्ठी की गई जानकारी में गणितीय सम्बन्ध देखना, कार्यकारी प्रतिरूप (मॉडल) बनाना, इत्यादि। अब, यह सुनिश्चित करने के लिए कि बच्चे इन कौशलों को पूर्णतया विकसित करने में संलग्न रहें, किसी टॉपिक (विषय–प्रसंग) में उनकी रुचि जगाना जरूरी है। सम्भवत: क्लास को सम्हालने की चुनौती यहीं आकर शुरू होती है। वे किसी चीज में रुचि लें इसके लिए, सम्बन्धित शिक्षक तथा स्वयं उस विषय–प्रसंग, दोनों के साथ, पर्याप्त तीव्रता के भावनात्मक जुड़ाव की आवश्यकता होती है। इस पर स्पष्ट रूप से, शारीरिक समस्याओं (जैसे थकान, दर्द, कष्ट, आदि) से लेकर विभिन्न प्रकार के सुखद या कष्टप्रद मानसिक भटकावों तक, अनेक कारकों का भी प्रभाव पड़ता है। आगे के विवरण में, ऐसी कुछ समस्याओं की चर्चा की गई है जिनका मैं अपनी कक्षा में सामना करता हूँ। यहाँ दिए गए उदाहरण अधिकांशत: भौतिकविज्ञान तथा रसायनविज्ञान से लिए गए हैं क्योंकि ये दोनों विषय मेरे लिए सबसे सहज हैं।

विज्ञान की कक्षा में हमारे तनाव और चित्त के भटकाव का एक स्रोत तब उत्पन्न होता है जब बच्चे इकाइयों (यूनिट्स) के साथ काम करना सीख रहे होते हैं। 12 वर्ष से अधिक आयु के बच्चे बीजगणित से परिचित होते हैं जिसमें x, y, a, b (जो संख्याओं के अमूर्त रूप होते हैं तथा प्रसंग के अनुसार या तो चर या अचर राशियों को निरूपित करते हैं) के साथ गणितीय प्रक्रियाएँ करके समीकरणों को हल किया जाता है। अब, भौतिक क्रियाकलापों के वर्णन में विद्यार्थी, द्रव्यमान, समय, लम्बाई, इत्यादि जैसी राशियों के बारे में सीखते हैं, जो किलोग्राम (किग्रा.), सेकण्ड (से.) तथा मीटर (मी.) जैसी इकाइयों में मापी जाती हैं। ये इकाइयाँ भी अपनी प्रकृति में इस अर्थ में बीजगणितीय होती हैं कि 10 किग्रा. वास्तव में 10 तथा किग्रा. का गुणनफल है, और 19.3 मी./से. भी 19.3 का मी. से गुणन तथा से. से विभाजन है। ऐसी इकाइयों के साथ की जाने वाली अन्य क्रियाएँ भी बीजगणित के सामान्य नियमों का इस्तेमाल करते हुए की जाती हैं। पर, इकाइयाँ उस तरह से संख्याओं के अमूर्त रूप नहीं होतीं जैसे x, y, a, b होते हैं क्योंकि गणित के किसी भी दिए गए सवाल में इनका मतलब वास्तविक संख्याओं के बराबर होना होता है। पर, विज्ञान के किसी प्रश्न में हम किग्रा. या मी. को किसी संख्या के बराबर नहीं मान सकते। वे वास्तव में बीजगणितीय नाम हैं जो बीजगणितीय नियमों का पालन करते हैं, और इसलिए वे उस प्रकार की अमूर्त राशियाँ हैं जैसी राशियों के साथ समूह सिद्धान्त (ग्रुप थ्योरी) जैसी उच्चतर स्तर की गणित की शाखाओं में काम किया जाता है। यदि इस बात को बार–बार स्पष्ट नहीं किया जाता, तो मैं पाता हूँ कि अनेक विद्यार्थियों को जटिल क्रियाकलापों

से इकाइयों के जटिल गठजोड़ों का सम्बन्ध अपने–आप सहज रूप से जोड़ पाना – उदाहरण के लिए बल (फोर्स) का किग्रा.मी./से.2 से, या दाब (प्रेशर) का किग्रा./मी.से.2 से – कठिन मालूम पड़ता है। अक्सर विद्यार्थी एक राशि को दूसरी राशि समझने की गलती कर देते हैं। इस वक्तव्य पर विचार करें जिसमें एक विद्यार्थी, जब एक गेंद ऊपर फेंकी जाती है तब त्वरण (ऐक्सीलरेशन) में होने वाले परिवर्तन का वर्णन करता है। "जैसे–जैसे गेंद ऊपर जाती है वैसे–वैसे त्वरण घटता जाता है, जब तक कि वह शून्य नहीं हो जाता, जब गति (वेलोसिटी) शून्य हो जाती है और गेंद अपनी उच्चतम स्थिति पर पहुँच जाती है।" स्पष्ट रूप से यहाँ गति तथा त्वरण को एक ही बात समझ लिया गया है। गति को पहचानने की अपेक्षा त्वरण को देखना कहीं ज्यादा कठिन होता है। बार–बार के परिचय और शिक्षक के दबाव के कारण हो सकता है कि विद्यार्थी बिना समझे आदतन इकाइयों का इस्तेमाल करने लगें, लेकिन आमतौर पर उनके मतलब के बारे में थोड़ी अनिश्चितता दिमाग में कुलबुलाती हुई बनी रहती है, जो प्रारम्भिक स्तर पर, और निश्चित ही बाद में भी, उनसे बचने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन देती है।

एक अन्य अकसर पाई जाने वाली समस्या मनोभावों तथा भावनाओं के अवांछित प्रदर्शन की है। जब भी विद्यार्थियों के किसी समूह से प्रगाढ़ रूप से ध्यान केन्द्रित करने की माँग की जाती है, तो सीखने में बाधा डालने वाले अनेक प्रकार के व्यवधान उठ खड़े होते हैं। चित्त के ये भटकाव कई रूप ले सकते हैं, जैसे विद्यार्थियों का आपस में बात करने लगना, अपने साथी विद्यार्थियों को या शिक्षक को सूक्ष्म ढंग से या खुलेतौर पर छेड़ना, शारीरिक बेचैनी या उदासीन निष्क्रियता। जाहिर है कि कक्षा के शिक्षक के लिए यह जरूरी है कि वह इस तरह के व्यवहार को इस ढंग से महत्व न दे जो उसे सहन करने को बढ़ावा देता हुआ प्रतीत हो। ऐसी समस्याओं से शीघ्रतापूर्वक निपटने के आमतौर पर प्रयोग होने वाले समाधान में दण्ड का भय या अन्य दण्डात्मक उपाय शामिल रहते हैं। लेकिन इससे सीखने के दीर्घकालीन उद्देश्य में सहायता नहीं मिलती क्योंकि सामान्यतया जब ऐसे उपाय नियमित रूप से अपनाए जाते हैं तो अधिकांश विद्यार्थी ध्यान देना बन्द कर देते हैं। इसलिए, इससे निपटने का क्या कोई अन्य तरीका है?

एक बच्चे के बारे में एक रोचक बात देखने में आती है कि (सम्भवतः 18 या उसके आसपास की उम्र तक) कोई विशेष मनोभाव कुछ ही समय तक बना रह पाता है जिसके बाद वह किसी और भाव में बदल जाता है। उदाहरण के लिए, अम्लों तथा क्षारों का परीक्षण करने के लिए विभिन्न प्रकार के सूचकों (इंडिकेटर्स) के बारे में सीखने की कोशिश के दौरान, रंगों का परिवर्तन कुछ समय के लिए बहुत आकर्षक लग सकता है, लेकिन एकबारगी जब इस गतिविधि का नयापन समाप्त हो जाता है तो यह आकर्षण ऊब में बदल सकता है। यह फिर उत्सुकता में बदल सकता है यदि H^+ आयन के सान्द्रण (कंसन्ट्रेशन) के बारे में एक व्यापक सिद्धान्त का उल्लेख किया जाए जिसमें आगे चलकर केवल बुद्धि का इस्तेमाल करने के बजाय प्रयोग करने की आवश्यकता की सम्भावना दिखाई दे। एक सम्भावित उत्तर परिमाणों की मापें लेना हो सकता है। लेकिन कुछ समय बाद, उसमें बच्चों की दिलचस्पी पूरी तरह खत्म हो सकती है और हो सकता है कि उनकी रुचि सिर्फ सामान्य ढंग से बातचीत करने में हो।

पूरे कक्षा–सत्र के दौरान यह सिलसिला इसी प्रकार चलता ही रहता है। ऐसे सदा बदलते रहने वाले परिदृश्य में, जिस महत्वपूर्ण बात पर गौर किया जाना चाहिए, वह यह है कि जब बच्चों द्वारा रुचि दिखाई जा रही हो उस दौरान यदि उनसे गहरा संवाद और समझ का सम्प्रेषण नहीं होता तो उस कक्षा के बहुत उत्पादक होने की सम्भावना नहीं रहती। यह वयस्कों से स्पष्ट रूप से फर्क है जो ज्यादा प्रगाढ़ता के साथ लम्बे समय तक किसी चीज में रुचि बनाए रख सकते हैं। वयस्कों में विविध प्रकार की भाव दशाओं में भी सीखने की क्षमता होती है जो बच्चों के विपरीत है जिनमें इस तरह की सीमित क्षमताएँ ही होती हैं।

ध्यान न देने की समस्या से निपटने के लिए हमारे स्कूल में अपनाए जाने वाले तरीकों में से एक है शिक्षक का प्रारम्भ में ही यह साफ कर देना कि वह क्या चाहता/चाहती है। यह इस ढंग से किया जाए जिसे अनुसरण

करने योग्य, अर्थात कक्षा में विद्यार्थियों द्वारा अनुसरण करने योग्य, चरणों में व्यक्त किया जा सके। हालाँकि बच्चों के मनोभाव ऐसे होते हैं जो अपेक्षाकृत जल्दी–जल्दी बदलते हैं, पर शिक्षक यह तय कर सकते हैं कि वे किस भाव को बढ़ावा देना चाहते हैं। स्पष्ट दिशा में की गई ऐसी कार्यवाही विद्यार्थियों द्वारा अनावश्यक गतिविधियों में व्यय किए जाने वाले समय को निश्चित ही कम से कम करने में सहायक होती है। केवल इच्छा करने भर से अनुचित विचारों या भावनाओं से छुटकारा नहीं पाया जा सकता, लेकिन विद्यार्थियों में उनकी अभिव्यक्ति को निश्चित ही संशोधित करके अधिक स्वीकार्य व्यवहार में बदला जा सकता है।

एक अन्य तकनीक जो इसमें सहायक होती है वह ऐसे लक्ष्य निर्धारित करना है जिन्हें हासिल करना सुगम हो। उदाहरण के लिए, यदि विद्यार्थी किसी ऐसे विषय–प्रसंग (टॉपिक) के सवाल कर रहे हों जिसे समझने में उन्हें कठिनाई होती हो, जैसे कि मान लीजिए आघूर्णों का नियम (द लॉ ऑफ मूमेंट्स), तो हम उनसे तब तक ध्यान देने की माँग कर सकते हैं जब तक कि लगभग पाँच से दस सवाल किसी निर्धारित विधि से अच्छी तरह हल नहीं कर लिए जाते। ऐसी स्पष्ट माँगें और छोटे लक्ष्य उपलब्धि की ऐसी अनुभूति दे सकते हैं जो काफी हद तक यह सुनिश्चित कर सकती है कि पारस्परिक संवाद तथा सम्प्रेषण की कड़ियाँ मजबूत बनें और गलत व्यवहार को, उस पर केन्द्रित उपदेशात्मक भाषण दिए बगैर ही, हतोत्साहित किया जा सके। नौवीं की एक कक्षा में विद्यार्थियों से तार के उपयुक्त भार लटकाने वाले उपकरण (मास होल्डर्स) की कल्पना करने और उन्हें बना लेने के बाद उत्तोलक के नियम (लीवर लॉ) का प्रयोग करने को कहा गया। हालाँकि यह आसान है, पर फिर भी यदि कोई अच्छा भार पकड़ने वाला (होल्डर) बनाना चाहता है तो इसमें कठिनाइयाँ आती हैं। उदाहरण के लिए ऐसा होल्डर जो मीटर रूलर पर आसानी से खिसकाया जा सके पर साथ ही जो उसमें भार रख देने पर फिसले नहीं। उनके प्रारम्भिक प्रयासों में हताश करने वाले मौके भी आए जिनके साथ ही शिकायतें आईं और आमतौर पर उनकी दिलचस्पी कम होती दिखी। लेकिन, जब उनसे, वे जो कर रहे थे, उस पर ज्यादा ध्यान देने के लिए कहा गया, तो आखिरकार वे कुछ अच्छे कारगर उत्पाद बनाने में सफल हो गए। यदि उनके शुरुआती अनुभवहीन प्रयासों को लगातार सहारा नहीं दिया गया होता, तो हो सकता था कि वे कोशिश करना ही छोड़ देते या कल्पना और वास्तविक उत्पाद के फासले को तय करने का कोई भी प्रयास नहीं करते।

अन्त में, मैं बच्चों से की जा सकने वाली कुछ ऐसी माँगों के बारे में टिप्पणियाँ करना चाहूँगा जो उनकी समझ में नहीं आ सकतीं। उदाहरण के लिए, तब तक उनसे ध्यान केन्द्रित करते रहने को कहना जब तक कि कोई नियम उनकी समझ में नहीं आ जाता, या उनसे एक दी गई अवधि में एक अभिनव विचार या समाधान प्रस्तुत करने को कहना – ये ऐसी माँगें हैं जिनके साथ बच्चे भावनात्मक रूप से नहीं जुड़ सकते। यह आसानी से देखा जा सकता है कि ऐसा इसलिए होता है कि, तार्किक दृष्टि से, एक सीमित समय में कोई शिक्षक या कोई अन्य वयस्क व्यक्ति भी उपरोक्त माँगों को पूरा नहीं कर सकता, क्योंकि सीखने तथा समझने की प्रक्रिया की कोई ठीक–ठीक विधि नहीं होती। विद्यार्थियों से, लम्बे समय तक, ऐसी माँगों को पूरा करने के लिए कहते रहने का परिणाम भावनात्मक तनाव और व्यवधान डालने वाला व्यवहार हो सकता है जिसमें सुधार करना कठिन साबित हो सकता है।

__श्रीनिवासन__ ने आई.आई.टी., मद्रास से विज्ञान में एम.एससी. तथा पुणे में आई.यू.सी.ए.ए. से अपनी पीएच.डी. पूरी की। उसके कुछ समय बाद ही वे शिक्षक की तरह सेण्टर फॉर लर्निंग, बंगलौर में कार्य करने लगे। वे मिडिल स्कूल में विज्ञान तथा उच्च कक्षाओं को भौतिक विज्ञान पढ़ाते हैं। उनसे ksrini69@gmail.com *पर सम्पर्क किया जा सकता है। __अनुवाद__ : सत्येन्द्र त्रिपाठी*



25 विज्ञान सीखने की प्रोजैक्ट-आधारित पद्धतियों का महत्व

प्रियंका

खेल के अवकाश के बाद विद्यार्थी अतिरिक्त जोश और स्फूर्ति के साथ अपनी कक्षाओं में लौट आए थे। उनमें से कुछ अभी भी मस्ती के मूड में थे, कुछ आराम फर्माने की कोशिश कर रहे थे,जबकि थोड़े से विद्यार्थी उत्सुकतापूर्वक अपने शिक्षक की प्रतीक्षा कर रहे थे। उनमें से एक, जो लगातार बाहर की ओर झाँक रहा था, ने घोषणा की कि शिक्षक कक्षा की ओर आ रही हैं। जैसे ही शिक्षक ने कक्षा में प्रवेश किया, हर विद्यार्थी उन्हें कुछ बताने की कोशिश करने लगा। लेकिन जल्दी ही वे समूहों में इकट्ठे होकर सभा करने की शैली में बतियाने लगे और तर्क–वितर्क करने लगे। शिक्षक भी उनमें से एक समूह में शामिल हो गईं और बाकी समूहों को भी जल्दी ही बात करने का आश्वासन दिया। क्या यह स्कूलों की सामान्य कक्षाओं का दृश्य है या यहाँ कुछ अलग चल रहा है?

कुछ ही देर में यह स्पष्ट हो गया कि ये विद्यार्थी सीखने के एक कार्य में संलग्न थे जिसे – "बिजली बचाओ" – के विषय को लेकर तैयार किया गया था। उन्होंने शिक्षक के साथ मिलकर उस कार्य की योजना बनाई थी और उस पर पिछले महीने से काम कर रहे थे। सप्ताह में एक दिन वे अपने प्रोजैक्ट पर चर्चा करते थे जिसमें सीखने की रोचक गतिविधियों की एक श्रंखला थी, जैसे :

- शिक्षक की सहायता से उनके घरों के बिजली के ताजा बिलों का अर्थ निकालना (बिजली की खपत और चुकाई जाने वाली राशि)।
- निश्चित अन्तरालों पर मीटर की रीडिंग को माता–पिता/परिवार की सहायता से दर्ज करना।
- माता–पिता/परिवार की सहायता से उनके घरों में बिजली से चलने वाले सभी उपकरणों, जैसे कि बत्तियाँ, पंखे, कूलर, मिक्सर, प्रेस आदि की सूची बनाना, जिसमें प्रत्येक पर दी गई वोल्ट तथा वाट की जानकारी बताई गई हो।
- उनके घरों के बल्बों तथा ट्यूबलाइटों को बदलकर सीएफएल लगाना (इसके लिए माता–पिता का ऐसा करने के प्रति भरोसा और सहयोग आवश्यक था)।
- बिजली बचाने के उपायों पर अमल करना, जैसे कि


BANGALORE ELECTRICITY SUPPLY COMPANY LTD.

जब उपयोग न हो रहा हो तो तुरन्त बत्तियाँ और पंखे बन्द करना, टीवी, कंप्यूटर, मोबाइल चार्जर आदि को बन्द करने के बाद प्लग निकालना आदि।

- विभिन्न उपकरणों के दैनिक उपभोग समय (निकट अनुमान के आधार पर) का एक माह तक रिकार्ड दर्ज करते जाना। उदाहरण के लिए 'x' वाट के 3 प्रकाश उपकरण 'y' घण्टों तक;'m' वाट के 2 पंखे 'n' घण्टों तक, 'a' वाट के आयरन–बॉक्स का 'b' घण्टों तक और इसी प्रकार अन्य विवरण। (विद्यार्थियों के घर से बाहर रहने के दौरान हुए उपभोग के बारे में उन्हें जानकारी देने के लिए परिवार के सदस्यों पर निर्भरता)
- नियमित अन्तरालों पर रिकार्डों और अवलोकनों को अपने साथियों तथा शिक्षक के साथ साझा करना।
- उनकी रिकार्डिंग शीट के आधार पर मासिक खपत की गणना करना तथा बिजली के शुल्क का अनुमान लगाना।
- अगले महीने के बिजली के बिल की पिछले महीने के बिजली के बिल से तुलना करना, विश्लेषण करना और समानता या असमानता पर विचार करना, तथा ऐसे मुद्दों पर चर्चा करना जैसे :
  - क्या गणना की गई यूनिटों तथा बिल में दर्शाई गई यूनिटों में कोई अन्तर या समानता थी?
  - यदि अन्तर था, तो उसके सम्भावित कारण क्या हो सकते थे?
  - क्या बिल की राशि पिछले बिल की राशि से कम या अधिक थी?
  - क्या बिजली बचाने के उपायों पर अमल करने में उन्हें किसी कठिनाई का सामना करना पड़ा?
  - वे कठिनाइयाँ क्या थीं?



  - क्या वे उन उपायों पर अमल करना जारी रखेंगे? क्यों या क्यों नहीं?
  - प्रति परिवार प्रतिदिन के औसत विद्युत उपभोग की गणना करना।
  - रिपोर्टों (समूह के आधार पर तथा पूरी कक्षा के लिए भी) का संकलन करना और उन्हें प्रस्तुत करना।
  - प्रति व्यक्ति बिजली की खपत और बचत के उपायों की दृष्टि से ज्ञात की गई जानकारियों का ऐसे ही प्रोजैक्ट पर काम कर रहे दूसरे स्कूलों (तथा अन्य देशों के भी) बच्चों के साथ आदान–प्रदान करना और उनकी तुलना करना।
- कोई पूछ सकता है या तर्क कर सकता है कि – यह सब करने की जरूरत क्या थी? यही सन्देश सीधे–सीधे दो बिलों की तुलना करके भी दिया जा सकता था। विद्युत की शब्दावली, नियमों तथा अवधारणाओं का ज्ञान बच्चों (12 से 14 वर्ष की आयु के) ने ऐसे अभ्यास के द्वारा किस तरह हासिल किया? चलिए हम कुछ सवाल अपने–आप से थोड़े अलग ढंग से पूछें – इस कार्य के पीछे सीखने के उद्देश्य क्या रहे होंगे और इस अभ्यास से सीखने की किन उपलब्धियों की हमें अपेक्षा करना चाहिए? क्या सीखने की इस प्रक्रिया का विज्ञान की प्रकृति, विज्ञान शिक्षा के प्रयोजन और शिक्षा के लक्ष्यों से तालमेल बैठता है?

इस टॉपिक को सीखने के लिए कुछ और पद्धतियों पर विचार करें जिनका स्कूलों में अनुसरण किया जा रहा है/किया जा सकता है :

1. पाठ्य–पुस्तक का अध्ययन जिसके बाद अध्याय के अन्त में दिए गए अभ्यासों के उत्तर लिखना।

2. कुछ अन्य प्रश्नों के उत्तर देना, जैसे – ऐसे 5 उपाय लिखो जिनका

अनुसरण आप बिजली बचाने के लिए कर सकते हैं।

3. विद्यार्थियों के द्वारा "बिजली बचाओ" के विषय पर चार्ट/पोस्टर/ पॉवर–प्वाइंट प्रस्तुति तैयार किए जाना और उन पर कक्षा में चर्चा करना।

4. ऊर्जा संकट या बिजली के उत्पादन तथा उसे बचाने पर आधारित कोई फिल्म/वीडियो अंश दिखाना।

5. किसी हाइडिल/थर्मल पावर प्लांट (जलविद्युत/ताप विद्युत उत्पादन केन्द्र) का भ्रमण जिसके बाद किसी विशेषज्ञ द्वारा दी गई वार्ता।

6. चर्चा के लिए आवश्यक बिन्दुओं को किसी कहानी के रूप में पिरोना, या किसी वास्तविक मिसाल के अध्ययन को शुरुआत की तरह इस्तेमाल करते हुए प्रश्नों की सहायता से आगे बढ़ना और साथ ही इसके द्वारा सीखने वालों की दिलचस्पी और भागीदारी को सुनिश्चित करना।

7. अधिक ऊर्जा की खपत करने वाले कुछ उपकरणों को बदलकर बिजली की बचत करने वाले उपकरण लगाने पर आधारित कार्य; और पहले तथा बाद के बिजली के बिलों की तुलना करना, जिसके बाद उस पर चर्चा हो।

8. बिजली बचाने के उपायों पर एक माह तक अमल करना, जानकारियों को समूह में साझा करना और उन पर अक्सर चर्चा करना, समालोचनात्मक दृष्टि से विश्लेषण और रिपोर्टिंग करना।



इस बात का ध्यान रखते हुए कि यह सूची सम्पूर्ण नहीं है, और संसाधनों, सन्दर्भ, शिक्षकों की विशेषताओं तथा अन्य कारकों पर निर्भर करते हुए सीखने–सिखाने के अन्य तरीके भी हो सकते हैं, उपरोक्त कार्यविधियों में से कौन–सी विधि :

- वास्तविक जीवन के जैसी परिस्थिति में आनन्दपूर्ण ढंग से सीखने का अवसर प्रदान कर सकती है।
- सार्थक ढंग से ज्ञान के निर्माण को बढ़ावा दे सकती है।
- सीखने वालों को उनके ज्ञान के स्वामित्व तथा उसकी जिम्मेदारी का एहसास कराएगी।
- उनके वैज्ञानिक कौशलों – जैसे अनुमान लगाना, मापन करना, जानकारियों और प्रेक्षणों को रिकार्ड करना, विश्लेषण करना, व्याख्या करना, संरचना (डिजाइन) निर्मित करना, आदि – को निखारेगी और उनमें निपुणता हासिल करने में सहायक होगी।
- युवा सीखने वालों की अवलोकन करने, पूछताछ करने तथा विचार करने की क्षमताओं का पोषण करने में सफल होगी।



- हमारे दैनिक जीवनों के महत्वपूर्ण मुद्दों के प्रति उनके दृष्टिकोणों, आदतों तथा संवेदनशीलता का रूपान्तरण करने में सक्षम होगी।
- उन्हें सामूहिक रूप से सीखने में और समूह में अपने व्यवहार को निखारने में समर्थ बनाएगी।

चलिए हम फसलों के उत्पादन के बारे में सीख रहे उच्चतर प्राइमरी तथा उससे ऊँची कक्षाओं के विद्यार्थियों के लिए सीखने की कुछ अन्य रणनीतियों की व्यावहारिकता की पड़ताल करें :

1. आसपास के खेतों तथा किसानों के साथ बार–बार जाकर परिचय प्राप्त करना और मेल–जोल बढ़ाना; फसलों की पूरी अवधि के दौरान खेती की गतिविधियों का अवलोकन करना (विद्यार्थियों के अलग–अलग समूह अलग–अलग फसलों पर ध्यान केन्द्रित कर सकते हैं); विभिन्न चरणों पर गतिविधियों के अन्तर की तुलना करना; विभिन्न चरणों पर अपने अवलोकनों को दर्ज करना; उनकी रिपोर्ट लिखना और उसे अपने साथियों के साथ साझा करना।
2. भिन्न–भिन्न भौगोलिक स्थितियों में रहने वाले विद्यार्थियों से खेती की पद्धतियों तथा फसल चक्रों के बारे में जानकारियों का आदान–प्रदान करना।
3. विद्यार्थियों के द्वारा 4–5 के समूहों में 4मी. x 4मी. के छोटे–छोटे भूखण्डों पर अलग–अलग फसलें, जैसे अनाज, फलियाँ, सब्जियाँ या फूल (या अलग–अलग जैविक खादों या जैविक कीटनाशकों का उपयोग करते हुए समान फसलें) उगाई जाना; इसमें स्थानीय ज्ञान तथा संसाधनों, दोनों की दृष्टि से शिक्षक, स्कूल तथा समुदाय का आवश्यक सहयोग दिया जाना; उपयोग की गई विधियों का आपस में आदान–प्रदान, नियमित रिकार्डों का रखना और फसल की अवधि के अन्त में रिपोर्ट प्रस्तुत करना।

प्रोजेक्ट–आधारित पद्धतियाँ नई नहीं हैं और प्रोजेक्ट–आधारित सीखने के इतिहास में पीछे जाएँ तो इसकी शुरुआत डुई (1933) द्वारा मानी जा सकती है। आमतौर पर प्रोजैक्ट्स विशेष स्थिति से सम्बन्धित होते हैं; उनके लिए विद्यार्थियों की ओर से किए गए प्रयास और भागीदारी आवश्यक होती है; उनमें विभिन्न प्रकार की सीखने–सिखाने की गतिविधियों का किया जाना जरूरी होता है; ज्यादा करके उनके अन्त में कोई देखा जा सकने वाला उत्पाद होता है, जैसे कि रिपोर्ट, योजना, मॉडल आदि और शिक्षक के सहयोग से वे काफी लम्बी अवधि तक चलते हैं।

प्रोजैक्ट–आधारित सीखने में हम क्या महत्व देखते हैं?

प्रोजैक्ट वाला दृष्टिकोण विद्यार्थियों का ध्यान उसके व्यावहारिक अर्थ पर केन्द्रित करता है और विज्ञान सीखने की प्रक्रिया के मूल आधार तक जाता है। यह विद्यार्थियों को स्वामित्व की अनुभूति सहित उनकी सहज गति से खोजबीन करने, अनुभव करने और सीखने का भरपूर अवसर देता है। यह सीखने वालों को इस पर चिन्तन–मनन करने के लिए प्रेरित करता है कि "तुम क्या जानते हो, तुम्हें क्या जानने की आवश्यकता है, और तुम उसे कैसे जानोगे।" तालिका 1 में, विज्ञान सीखने की प्रोजैक्ट–आधारित पद्धति में निहित मूल्यों को विशेष रूप से दर्शाने

r kfy d k 1

प्रोजैक्ट–आधारित सीखने का महत्व	सीखने–सिखाने की प्रक्रिया के लिए निहितार्थ
अर्थपूर्ण तरीके से बच्चों के दिमागों को व्यस्त रखना	▪ बच्चों की स्वाभाविक जिज्ञासा की पूर्ति करता है और उसका पोषण करता है। ▪ ज्ञान के अर्थपूर्ण निर्माण को प्रोत्साहित करता है। ▪ रिपोर्टिंग तथा चिन्तन सहित, वैज्ञानिक कौशलों को बढ़ावा देता है। ▪ स्कूल के सीखने को विद्यार्थियों के वास्तविक जीवन से जोड़ता है। ▪ रोजमर्रा के अनुभवों की जाँच–पड़ताल करने और उनका विश्लेषण करने को प्रेरित करता है।

बच्चों की पूर्वधारणाओं का मूल्य समझना और उनसे सम्बन्ध जोड़ना	▪ विद्यार्थियों की पूर्वधारणाएँ(जो अवलोकनों तथा संसार के साथ सम्पर्क के द्वारा निर्मित होती हैं) सीखने का आधार बनती हैं। ▪ ज्ञान के निर्मित होने के दौरान गलत या वैकल्पिक धारणाओं का समाधान करने में सहायक होता है।
योग्यताओं का पोषण करना और स्वयं की संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं के बोध (मेटाकॉगनीशन) को सहारा देना	▪ स्वतंत्र रूप से सीखने, समीक्षात्मक तथा तार्किक ढंग से सोचने, सवालों को हल करने तथा पूछताछ करने को सुगम बनाता है। ▪ बच्चे के स्वयं सीखने के स्वामित्व के परिणामस्वरूप उसे इस बात का बोध होता है कि वह क्या जानता है और क्या नहीं जानता। ▪ सीखने के आनन्द का पोषण करना और जीवनपर्यंत सीखने वाले तैयार करना।
सीखने के तरीके सीखना	▪ कार्य–आधारित अनुभव किया जाने वाला सीखने का तरीका। ▪ सीखने वाले सीखने के लक्ष्यों तथा रणनीतियों को निर्धारित करने की शुरुआत से लेकर पूरे समय कार्यों से जुड़े रहते हैं। ▪ प्रोजैक्ट कार्य में सहायक होने वाले वातावरण की प्रकृति के परिणामस्वरूप विद्यार्थी सामाजिक सीखने के कौशल, विभिन्न दृष्टिकोणों के प्रति आदर, वस्तुपरक नजरिया, वैज्ञानिक पूछताछ की भावना और मानववाद की दृष्टि हासिल करते हैं।
सीखने वाला सीखने की प्रक्रिया केन्द्र में होना	▪ शिक्षक इन बातों में केवल सहायक की भूमिका निभाता है: ▪ सीखने के संसाधनों तक पहुँचना ▪ वैज्ञानिक कौशलों को निखारना ▪ सीखने का सहयोगात्मक वातावरण सुलभ कराना ▪ किए गए कार्य का प्रमाणीकरण करना ▪ वास्तविक श्रोताओं के समक्ष रिपोर्ट का प्रस्तुतिकरण
कक्षा की सीमाओं को विस्तारित और पारगम्य बनाना	▪ सीखने की प्रक्रिया स्कूल की सीमाओं से निकलकर समुदाय तक फैल जाती है। ▪ सीखने की प्रक्रिया और उसके परिणाम धीरे–धीरे समुदाय में फैलते हैं। ▪ कक्षा के बाहर निकलकर सीखने की गतिविधि विद्यार्थियों को जिम्मेदार नागरिकों में रूपान्तरित करती है।

का एक प्रयास किया गया है।

सीखने तथा विकास एवं प्रोजैक्ट–आधारित सीखने के लिए मूल्यांकन

समकालीन स्कूली शिक्षा का चलन सत्र के अन्त में होने वाले सकल पाठ्यक्रम पर आधारित मूल्यांकन से हटकर सतत और सर्वांगीण मूल्यांकनों की ओर हो गया है। यह बदलाव प्रतिमानों में हुए उस परिवर्तन के बाद आया है जिसमें योग्यता के आकलन को केवल सीखने के मूल्यांकन की दृष्टि से न देखा जाकर उसे सीखने तथा विकास के मूल्यांकन की तरह देखा जाने लगा है। मूल्यांकन के इस दृष्टिकोण से प्रोजैक्ट–आधारित सीखने का तालमेल

बहुत सुन्दरता से बैठता है। प्रोजैक्ट–आधारित अध्ययन में, केवल अन्तिम उत्पाद को ही नहीं आँका जाता, जैसा कि मूल्यांकन के पारम्परिक रूपों में होता है। किसी भय या तनाव के बगैर, सीखने की प्रक्रिया के दौरान, शिक्षकों को विद्यार्थियों ने कितना और क्या सीखा इसका मूल्यांकन करने का अवसर मिलता है। मूल्यांकन का प्रयोजन सिर्फ अंक या स्तर (ग्रेड) देने से कहीं आगे जाता है। यह बच्चे के विकास के लिए सीखने की प्रक्रिया को सुनिश्चित करने तथा फिर से उसकी रणनीति बनाने में मदद करता है, साथ ही यह उनके दृष्टिकोण, सामाजिक व्यवहार, विश्वास और मूल्य तंत्र को निर्मित करने में भी सहायक होता है। इकट्ठे किए गए प्रमाणों के आधार पर यह शिक्षक को बच्चे के विकास की योजना के लिए नक्शा बनाने का अवसर देता है। विद्यार्थियों को उनके साथियों तथा शिक्षकों/सलाहकारों से तत्काल मिलने वाले रचनात्मक प्रतिउत्तर (फीडबैक) उनके आत्म–मूल्यांकन का आधार बनते हैं, उनके अवधारणात्मक तथा प्रक्रियात्मक ज्ञान में रह गई कमियों को जानने, समीक्षात्मक ढंग से सोचने, कमियों पर मनन करने और आगे की राह बनाने में उनकी मदद करते हैं।

शिक्षकों को पाठ्यक्रम के उद्देश्यों, विषयवस्तु, आधारभूत सुविधाओं, सीखने वालों की आवश्यकता, स्थानीय सन्दर्भ, तथा उनकी खुद की योग्यता तथा सहजता पर निर्भर करते हुए विविध प्रकार की सीखने की पद्धतियों का उपयोग करने की आवश्यकता होती है। कोई भी एकमात्र विधि पाठ्यक्रम के सभी उद्देश्यों को पूरा करने में शिक्षकों तथा विद्यार्थियों की मदद नहीं कर सकती। इसलिए विज्ञान के कारगर सीखने–सिखाने में कई पद्धतियों का विवेकपूर्ण मिश्रण होना जरूरी है, जिनमें से प्रोजैक्ट–आधारित सीखना भी एक है। प्रोजैक्ट–आधारित अध्ययन का उद्देश्य वास्तविक जीवन की ऐसी समस्याओं की पड़ताल करना है, जो लम्बी चलने वाली अवधि तक विद्यार्थियों तथा शिक्षकों के लिए रुचिकर, प्रासंगिक, महत्वपूर्ण और मूल्यवान होती हैं। यह गतिविधियों की एक श्रंखला के द्वारा किया जा सकता है, जिनमें कक्षा में होने वाली चर्चा, संचार माध्यमों से जानकारी एकत्रित करना, स्थानीय समुदाय में उपलब्ध ज्ञान के संसाधनों का उपयोग करना और मुख्य रूप से शिक्षकों के मार्गदर्शन में सरल जाँच–पड़तालें करना शामिल हैं। इस दृष्टिकोण का महत्व विद्यार्थियों द्वारा ज्ञान के निर्माण और उसके स्वामित्व में, वैज्ञानिक योग्यताओं और मूल्यों के पोषण में और सबसे महत्वपूर्ण रूप से वास्तविक जीवन की स्थितियों में सीखने में निहित होता है।

(लेखिका इस अभ्यास को साझा करने के लिए डी.एल.एफ. पब्लिक स्कूल, गाजियाबाद की आभारी हैं और वैश्विक नागरिकों को तैयार करने के उनके प्रयासों की सराहना करती हैं।)

References

Dewey, J. (1933). How We Think. A Restatement of the Relation of Reflective Thinking to the Educative Process. Boston: D.C

NCERT. (2005.) National Curriculum Framework. National Council of Educational Research and Training. New Delhi

NCERT (2006). Position Paper of National Focus Group on Teaching of Science. National Council of Educational Research and Training. New Delhi

डॉ. प्रियंका *अज़ीम प्रेमजी इंस्टीट्यूट फॉर एसेसमेंट एण्ड एक्रिडिटेशन, नई दिल्ली में वरिष्ठ विशेषज्ञ हैं। उन्हें शोधकर्ता, शिक्षक तथा शिक्षक प्रशिक्षक के रूप में काम करने का 14 वर्ष का अनुभव है। अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन में वे विज्ञान शिक्षण, सी.सी.ई. सहित कक्षा–आधारित मूल्यांकनों, बड़े पैमाने पर किए जाने वाले मूल्यांकनों तथा साथ ही मूल्यांकन और विज्ञान शिक्षण से सम्बन्धित शोधकार्यों तथा प्रशिक्षण में संलग्न हैं। उनसे priyanka@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।* ***अनुवाद*** *: सत्येन्द्र त्रिपाठी*



26 आओ प्रयोग करें

, d v fHkuo foKku dk;Zkkyk dsvuqHko

शारंगौड़ा, रमेश एवं
परिमलाचार्य एस. अग्निहोत्री

कार्यशाला के बारे में

हाईस्कूलों के विज्ञान शिक्षकों के लिए 1 से 4 सितम्बर, 2012 को सेण्टर फॉर लर्निंग (सी.एफ.एल.), वरदेनाहल्ली, बंगलौर में विज्ञान शिक्षण पर एक कार्यशाला का आयोजन किया गया था। सी.एफ.एल. एक पंजीकृत चैरिटेबिल सोसायटी (परोपकार के लिए बनी संस्था) है। यह लगभग 70 विद्यार्थियों तथा 20 वयस्क व्यक्तियों का समुदाय है; जो एक अर्ध–आवासीय स्कूल की तरह काम करते हैं।

कार्यशाला में 30 सदस्यों ने भाग लिया। कार्यशाला के विषय–प्रसंग (थीम) और मॉड्यूल्स की कल्पना और उन्हें विकसित करने का काम सी.एफ.एल. के शिक्षकों द्वारा किया गया था। यादगीर के अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन डिस्ट्रिक्ट इंस्टीट्यूट के सदस्यों ने यादगीर जिले के स्कूलों में विज्ञान शिक्षण की स्थिति पर एक अध्ययन किया। इस कार्यशाला के लिए तैयारी के रूप में विज्ञान की पाठ्य–पुस्तक का विश्लेषण सी.एफ.एल. के स्रोत व्यक्तियों के द्वारा किया गया था।

इस कार्यशाला का उद्देश्य विज्ञान शिक्षण के बारे में दिलचस्पी और जोश पैदा करना था।

हमारी पूर्व धारणाएँ

प्रारम्भ में हम कार्यशाला के बारे में गम्भीर नहीं थे क्योंकि हमारे विचार पिछले अनुभवों से प्रभावित थे। इसका एकमात्र लाभप्रद पहलू इसका आयोजन–स्थल अर्थात बंगलौर शहर था। कार्यशाला के केन्द्रीय विषय, 'विज्ञान शिक्षण', के बारे में हमारी पूर्व धारणा का आधार स्रोत व्यक्तियों के द्वारा विज्ञान शिक्षण के बारे में दी गई कुछ प्रस्तुतियाँ और उनके बाद हुई चर्चाएँ थीं।

हमें हुए आश्चर्य

हम इन पूर्व धारणाओं के साथ बंगलौर पहुँचे और हमें पहला सुखद आश्चर्य आयोजन–स्थल, बंगलौर से 35 कि.मी. दूर 22 एकड़ में फैली हरी–भरी भूमि थी। दूसरा अचरज सी.एफ.एल.की समुदाय–आधारित स्वयं–सेवा की संस्कृति थी, हालाँकि हमारे साथ अतिथियों की तरह बर्ताव किया गया।

हमारे लिए क्या योजना बनाई गई थी?

भागीदारों तथा सीखने वालों के रूप में हमारे लिए कार्यशाला की संरचना अपने–आप में सराहना की हकदार थी। कार्यशाला की समय–सारिणी में औपचारिक तथा अनौपचारिक सत्रों के मिश्रण ने वास्तव में हमारी बहुत मदद की। सत्रों में खुद अपने हाथों से काम करने के अनुभव तथा विशेषज्ञों के साथ चर्चाओं का अच्छा संयोजन किया गया था। हमने विज्ञान तथा शिक्षा के बारे में चर्चाएँ की । पहले तीन दिनों के लिए, हमारी विशेषज्ञता के विषय – भौतिकविज्ञान, रसायनविज्ञान, जीवविज्ञान – के आधार पर हमें अलग–अलग समूहों में बाँटा गया था। चौथा दिन फीडबैक तथा समापन के लिए निर्धारित किया गया था। सत्रों का समय और मिल–जुलकर काम करने तथा अनौपचारिक चर्चाओं के लिए हमें भरपूर समय देने का ध्यान रखते हुए जिस तरह नियोजित किया गया था, वह बहुत अच्छा लगा। इन चर्चाओं के माध्यम से पुरानी दोस्तियाँ फिर से ताजा हो गईं।

कार्यशाला का विषय–प्रसंग, अर्थात 'आओ, हम प्रयोग करें' सीखने वालों पर केन्द्रित था, जिसने हमें अनुभवजन्य तथा पूछताछ–आधारित सीखने का रसास्वादन करने का अवसर प्रदान किया। चुनी गई विषयवस्तु हमारे लिए नई



प्रकृति ही हमारी प्रयोगशाला



स्रोत व्यक्ति : यासमीन जयतीर्थ, श्रीनिवासन के. तथा तेजस्वी शिवानन्द

नहीं थी। हममें से अधिकांश लोग जिन्होंने कार्यशाला में भाग लिया उत्तर–पूर्व कर्नाटक के थे; हमें विज्ञान की जानकारियाँ या तो "बस मिल जाती थीं" या हम उन्हें "रूपान्तरित करते थे", पर ऐसा दुर्लभ रूप से ही होता था जब हम उन्हें अनुभव करते थे। विज्ञान की आधारभूत अवधारणाओं का आत्म–अनुभव हमारे लिए नया था। पूछताछ–आधारित सीखना हमारे लिए एक बिलकुल ही नई अवधारणा था। वहाँ के प्रयोगों की सरलता और उनके लिए उपयोग की गई कम लागत की सामग्री ने बुनियादी वैज्ञानिक प्रयोगों की जटिलता और लागत के बारे में हमारी धारणा को पूरी तरह ध्वस्त कर दिया। सी.एफ.एल. में बड़ी और परिष्कृत प्रयोगशालाएँ होने की हमारी कल्पना एकदम बदल गई जब 10 X 10 वर्ग फुट या 15 X 15 वर्ग फुट क्षेत्र में निर्मित प्रयोगशालाओं से तथा कम लागत के आवश्यक उपकरणों और कच्ची सामग्री से हमारा परिचय करवाया गया। जीवविज्ञान के अधिकांश प्रयोगों के लिए प्रकृति ने स्वयं ही प्रयोगशाला की तरह काम दिया। स्रोत व्यक्ति अपने क्षेत्रों में पर्याप्त योग्यता–प्राप्त तथा निपुण थे। प्रत्येक दिन का दूसरा सत्र हमारी अपेक्षाओं तथा आवश्यकताओं – जो किसी भी स्रोत व्यक्ति के लिए एक चुनौती होती है – के लिए निर्धारित था। लेकिन वे सुगमकर्त्ता इतने सूझबूझ वाले थे कि उन्होंने हमारे द्वारा पेश की गई हर माँग को पूरा किया, जिसको हमने बहुत सराहा।

वास्तव में यह सत्र उनसे भिन्न था जिनका हमें पहले अनुभव हुआ था। इस सत्र का ध्यान मुख्य रूप से सीखने वाले की ज्ञान की प्यास को तृप्त करना था। कार्यशाला में इस तथ्य ने हम लोगों में विज्ञान शिक्षण के बारे में वाकई में रुचि पैदा की।

हमने जो प्रयोग किए उनमें से कुछ इस प्रकार थे :

भौतिकविज्ञान: रे बॉक्स, रे डायग्राम्स (रेखाचित्र), लैंसों के द्वारा प्रतिबिम्ब बनना, मल्टी मीटर का उपयोग करना, ब्रैड बोर्ड की उपयोगिता, विभिन्न इलेक्ट्रॉनिक अवयव तथा बुनियादी इलेक्ट्रॉनिक सर्किट्स (परिपथ)।

रसायनविज्ञान: इल्क्ट्रोलिसिस (विद्युत अपघटन), कण्डक्टिविटी (चालकता) मीटर, हॉफमैन का उपकरण, छोटे–पैमाने का रसायन विज्ञान : क्लोरीन बनाना तथा ज्वालामुखी – अमोनियम डाईक्रोमेट क्रिस्टल के विघटन का मनोरम दृश्य।

जीवविज्ञान: प्रकाश–संश्लेषण, इकोलॉजी (परिस्थिति – विज्ञान) का अध्ययन – क्वाड्रेटिक विधि, डीएनए ऐक्सट्रैक्शन (निष्कर्षण), स्टोमेटा लीफ (पत्ती) का अवलोकन तथा मिटोसिस का अवलोकन।

उपरोक्त प्रयोगों में से प्रत्येक को इस प्रकार रचा गया था कि वे हमारे दिमागों में प्रश्नों के विस्फोट को उकसा दें। इन प्रयोगों के माध्यम से 'अनुभवजन्य सीखना' तथा 'पूछताछ–आधारित सीखना' से हमारा सामना और घनिष्ठ परिचय हुआ।

उदाहरण के लिए तेजस्वी शिवानन्द ने जीवविज्ञान के प्रयोगों के भ्रमण में हमारी सहायता की। भागीदारों का आकलन करने के लिए प्रारम्भ में प्रकाश संश्लेषण के बारे में संक्षिप्त

चर्चा की गई। तब उन्होंने प्रयोग की विस्तृत जानकारी दी और उसके नियंत्रक कारकों के बारे में बताया। फिर हम सभी को एक बीकर, पानी, सोडियम कार्बोनेट. तरल साबुन तथा एक इंजेक्शन की सिरिंज दी गई। हम सबने सोडियम बाइकार्बोनेट का बहुत पतला घोल तैयार किया।

फिर हमने उसमें तरल साबुन की एक–दो बूँदें डालीं। इसके बाद एक पेड़ की उपयुक्त मोटाई तथा उम्र की कुछ पत्तियाँ (कण्ट्रोल के लिए) इकट्ठी की गईं। फिर आकार के नियंत्रण के लिए, इन पत्तियों को एक पंचिग मशीन की सहायता से छोटे, गोल टुकड़ों में काट लिया गया। ये टुकड़े पिस्टन को निकालकर सिरिंज में डाल दिए गए। फिर पिस्टन को वापिस लगा दिया गया। फिर इंजेक्शन की सुई से सोडियम कार्बोनेट का कुछ घोल पिस्टन को पीछे खींच कर सिरिंज में भर लिया गया। फिर सिरिंज में मौजूद चीजों को धीरे–धीरे हिलाकर मिलाया गया और फिर उन्हें बैठने दिया गया। एक मिनिट के भीतर ही पत्तियों के सारे टुकड़े नीचे बैठ गए। फिर हममें से कुछ ने अपनी सिरिंजों को अंधेरे में रखा और कुछ ने उन्हें सीधे सूर्य के प्रकाश में रखा। जब हम प्रतीक्षा कर रहे थे, तो निम्नलिखित सवाल उठ खड़े हुए :

1. सोडियम कार्बोनेट क्यों डाला गया था?
2. तरल साबुन का कार्य क्या था?
3. पत्तियाँ नीचे क्यों बैठ गईं?


प्रकाश संश्लेषण

सभी सम्भावित भौतिक कारणों पर चर्चा की गई और हम इन निष्कर्षों पर पहुँचे कि :

1. सोडियम कार्बोनेट ने प्रकाश संश्लेषण में कार्बन डाईऑक्साइड, जो इस प्रक्रिया के लिए अति आवश्यक है, प्रदान करके सहायता दी।

2. तरल साबुन सर्फेस टैंशन (पृष्ठ तनाव) कम कर देता है, इसलिए पत्तियों की सतह पर मौजूद हवा के बुलबुले गायब हो गए।



3. चूँकि पत्तियों का घनत्व ज्यादा होता है, इसलिए वे सिरिंज की तली में बैठ जाती हैं।

हमारी चर्चा और जिन निष्कर्षों पर हम पहुँचे, वही 'विज्ञान शिक्षण' पर हुई इस कार्यशाला के उद्देश्यों का मूल तत्व था।

दूसरी रोचक घटना भौतिक विज्ञान की प्रयोगशाला में घटित हुई। हम एक ब्रैड बोर्ड का उपयोग करते हुए बुनियादी इलेक्ट्रॉनिक सर्किट्स का निर्माण करने में संलग्न थे।

हमें दिया गया कार्य पानी की टंकियों के ओवरफ्लो से बचने के लिए पानी के स्तर का संकेत करने के लिए एक उपयोग किया जाने लायक इलेक्ट्रॉनिक सर्किट बनाना था। हममें से सभी ने अपना हाथ आजमाया और एक को छोड़कर सभी वांछित सर्किट बनाने में सफल हो गए। लेकिन हमारा एक साथी उसमें बुरी तरह असफल हो गया। उसने कई बार सर्किट को निर्मित करने की कोशिश की पर उसका बजर (चेतावनी देने वाली घण्टी) नहीं बजा। फिर

उसने अपने मित्र द्वारा निर्मित किए गए सर्किट को खोल डाला और उसे फिर से बनाने का प्रयास किया तथा उसमें सफल भी हो गया। दोबारा फिर से उसने उसे दिए गए अवयवों (कम्पोनेंट्स) से सर्किट को बनाने की कोशिश की पर एक बार फिर असफलता ही उसके हाथ लगी। उसने हर कम्पोनेंट के काम करने की जाँच की और पाया कि बजर काम नहीं कर रहा था।

खराब कम्पोनेंट को ढूँढ़ निकालने के लिए उसने अपने हर कम्पोनेंट को अपने मित्र के काम कर रहे सर्किट के कम्पोनेंट की जगह लगाकर देखा। बजर के खराब पाए जाने के बाद उसने उसकी जगह एक नया बजर लगाया, पर परिणाम वही निकला। उसने दो बार बजर को बदलकर देखा लेकिन कोई परिणाम नहीं निकला। तब वह इस नतीजे पर पहुँचा कि गड़बड़ी बजर में न होकर सर्किट में थी। फिर एकदम शुरू से उसने हर कनेक्शन को समुचित सावधानी से जोड़ते हुए सर्किट को बनाया, लेकिन अन्तिम परिणाम फिर वही था – असफलता। अन्ततः, उसने हताश होकर फिर से एक नया बजर लगाकर एक आखिरी कोशिश करने का निर्णय लिया। आखिरकार, इस बार उसके सर्किट ने बीप की आवाज के साथ उसका स्वागत किया!

यह पूरा घटनाक्रम 'अनुभवजन्य सीखने' तथा 'पूछताछ–आधारित सीखने' का उदाहरण है। इसी प्रक्रिया ने उसे चार खराब बजर यंत्रों को ढूँढ़ निकालने में सफलता दिलाई, हालाँकि यह कतई उसका उद्देश्य नहीं था।

कार्यशाला के दौरान हमारा दिमाग

सीखने वाले की तरह जब हमारा सामना इस प्रकार के सीखने के वातावरण से होता है, तो हम अपने को पूरी तरह सीखने की प्रक्रिया में संलग्न अनुभव करते हैं। ऐसी कार्यशाला में हर क्षण हमारा दिमाग बार–बार जुड़ता है, केवल कार्यशाला की विषयवस्तु से ही नहीं, बल्कि कार्यशाला में सम्पन्न की गई प्रक्रिया से भी। साथ–साथ इसका मनन भी चलता है कि उसे हम कैसे अपनी कक्षा के कामकाज में इस्तेमाल कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, जब डॉ. यासमीन "कक्षा में माइक्रो कैमिस्ट्री (सूक्ष्म रसायनविज्ञान)" के बारे में बता रही थीं, तब हम कक्षा में रसायनों के उपयोग को लेकर अपनी शंकाओं के बारे में सोच रहे थे। फिर, जब हमने माइक्रो कैमिस्ट्री को आजमाया और उसके सुरक्षा उपायों के बारे में आश्वस्त हो गए, तो हम जान गए कि हम उसका अपनी कक्षा में इस्तेमाल कर सकते थे। हमें उसकी विषयवस्तु–"क्लोरीन बनाना"–के बारे में जरा भी चिन्तित नहीं थे।

अन्तर्दृष्टियाँ

1. सीखने वालों के रूप में, हम सभी ने 'अनुभवजन्य सीखने' तथा 'पूछताछ–आधारित सीखने' की इस पद्धति को सराहा जो निश्चित रूप से हमारी अपनी कक्षाओं में कारगर होगी।
2. जिस तरह हमने इस कार्यशाला में औपचारिक तथा अनौपचारिक अवसरों के मिश्रण का आनन्द लिया, उसी तरह वह हमारे विद्यार्थियों के लिए भी सच है।
3. जैसे हमने यहाँ स्रोत व्यक्तियों के ज्ञान की गहराई की सराहना की, वही बात हमारे लिए भी सच है।
4. कक्षा के कामकाज में विद्यार्थियों की जरूरतों को पूरा करना, और हाथ से करके देखने के लिए तथा मार्गदर्शन सहित पूछताछ–आधारित सिखाने और सीखने के लिए पर्याप्त समय देना अत्यन्त महत्वपूर्ण है।
5. प्रयोगशाला का कक्षा के साथ एकीकरण बेहद जरूरी है।
6. विज्ञान शिक्षा के लिए कक्षा के कामकाज में मार्गदर्शन सहित पूछताछ–आधारित तथा अनुभवजन्य सीखने को जोड़ना आज के समय की जरूरत है।

निष्कर्ष

निश्चित ही, यदि विज्ञान शिक्षण हमारे आसपास के संसार को समझने के लिए पूछताछ की भावना को नहीं उकसाता तो उसका कोई अर्थ नहीं है। किसी खोजी के लिए प्रकृति और उसकी सूक्ष्म विशेषताओं को समझना एक चुनौती भरा कार्य होता है। विज्ञान शिक्षण पर हुई यह चार–दिवसीय कार्यशाला खोजने की इसी भावना तथा रुचि को प्रोत्साहित करने का एक प्रयास था। इसके स्रोत

व्यक्ति तथा कार्यशाला का उनका सावधानी और सूझबूझ भरा नियोजन उसकी सफलता के प्रमुख कारक थे। इसके आयोजन–स्थल, वातावरण, सभी प्रबन्ध तथा त्रुटिरहित समन्वय ने सभी भागीदारों की सुविधा तथा सहजता को सुनिश्चित किया। चलिए हम भी प्रयास करें, और अपनी कक्षाओं में इस कार्यशाला से प्राप्त हुए सीखने को प्रभावी ढंग से सफल बनाएँ!

शारंगौड़ा, *यादगीर तालुक एवं जिले में मोटनहल्ली के शासकीय हाई स्कूल में और* ***रमेश,*** *कोंकल्ल के शासकीय हाईस्कूल में विज्ञान शिक्षक हैं।* ***परिमलाचार्य एस. अग्निहोत्री,*** *अजीम प्रेमजी फाउण्डेशन के डिस्ट्रिक्ट इंस्टीट्यूट, यादगीर के सदस्य हैं।*

सुगमकर्त्ता का दृष्टिकोण

सेण्टर फॉर लर्निंग बीस वर्षों से भी अधिक समय से अस्तित्व में है। स्कूल के रूप में, हमें इस बात का अन्वेषण करने की पूरी स्वतंत्रता उपलब्ध रही है कि हमारे विषयों में सीखने का क्या मतलब है। अनेक संगठनों तथा व्यक्तियों ने उदारतापूर्वक हमारी सहायता की, पर फिर भी धन की उपलब्धता ने हमारे शैक्षणिक अन्वेषण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। सन 2000 में अपने स्थायी परिसर में स्थानान्तरण के बाद से, सी.एफ.एल.स्थानीय स्कूलों के साथ भी, पहले अनौपचारिक रूप से और फिर कक्षाओं के बीच पारस्परिक क्रियाकलापों के रूप में काम करता रहा है। हम लोग विचार करते रहे हैं कि इन सम्बन्धों का लम्बे समय तक सतत चल सकने वाला विस्तार कैसे किया जाए अर्थात यह सिर्फ एक–एक बार की काफी ऊर्जा खपाने वाली गतिविधि न हो।

कुमारी एल. ए. मीरा मेमोरियल ट्रस्ट (के.एल.ए.एम.एम.टी.) उन संगठनों में से है जिन्होंने सी.एफ.एल.की प्रारम्भ से ही निरन्तर सहायता की है। उन्होंने पुस्तकों, प्रयोगशाला की सामग्री तथा उपकरणों जैसे कि टिकर टाइमर्स, रे बाक्सों आदि के लिए अनुदान दिए हैं।

के.एल.ए.एम.एम.टी.ने 2012 में सी.एफ.एल.को एक सम्मेलन/कार्यशाला का आयोजन करने के लिए एक अनुदान देने का प्रस्ताव रखा। उसके पहले, सी.एफ.एल. ने मगाडी क्षेत्र (जहाँ हमारा स्कूल स्थित है) के स्थानीय शासकीय स्कूल शिक्षकों की एक बैठक आयोजित की थी। माह में एक बार वे शिक्षक करीकुलम डेवेलपमेण्ट ऑफीसर (पाठ्यक्रम विकास अधिकारी) के साथ बैठक करते हैं। ऐसी ही एक विशेष बैठक में हमने अनुशासन तथा सीखने के मुद्दे की पड़ताल की थी। दोपहर को हमने शिक्षकों से मिलकर चर्चा भी की थी और हमने विज्ञान की कुछ सामग्री का भी प्रदर्शन किया था जिसका हमारे यहाँ निर्माण किया गया था। उनकी ओर से दोनों को सराहा गया। शिक्षकों ने सुझाव दिया था कि इस सिलसिले को दोहराना या जारी रखना उपयोगी होगा। इसके लिए, जिन विचारों पर चर्चा हुई उनमें अनुशासन तथा कक्षा के प्रबन्धन पर एक बैठक, दूसरी भाषा के रूप में अँग्रेजी पढ़ाना और विज्ञान शिक्षण की सामग्री का विकास शामिल थे। इनमें से अन्तिम बात के पक्ष में निर्णय हुआ और हम उस काम में जुट गए।

विचार करने की पहली बात यह थी कि क्या ऐसी कार्यशाला उपयोगी होगी? दूसरी, इस कार्यशाला का लक्ष्य कौन लोग होंगे? तीसरी, इसे आयोजित करने का सर्वोत्तम समय कब होगा और यह कितने दिन की होगी? इन सवालों पर चर्चा करने के लिए और फीडबैक पाने के लिए हमने अनौपचारिक रूप से अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन के श्री उमाशंकर पेरिओडी से बात की। उन्होंने हमें बहुत प्रोत्साहित किया। साथ ही सुझाव दिया कि उसे वाकई में सार्थक बनाने के लिए कम से कम तीन या चार दिन की आवश्यकता होगी। उन्होंने सहृदयतापूर्वक फाउण्डेशन द्वारा इस बारे में एक सर्वेक्षण करवाने की पेशकश भी की। अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन ने कार्यशाला की लागतों में के.एल.ए.एम.एम.टी. द्वारा दिए गए अनुदान से रह गई कमी को भी पूरा करने की पेशकश की। साथ ही हमें अपनी कार्यशाला का उस तरीके से नियोजन करने की स्वतंत्रता प्रदान की जिस तरीके से हम चाहते थे।

यह तय किया गया कि हम यह कार्यशाला मुख्य रूप से आठवीं, नौवीं तथा दसवीं कक्षाओं के हाई स्कूल विज्ञान शिक्षकों के लिए आयोजित करेंगे, क्योंकि इस स्तर पर विज्ञान अधिक अकादमिक (सैद्धान्तिक) और शायद प्रदर्शन करने तथा वास्तविक जीवन से उसके लिए उदाहरण ढूँढ़ने की दृष्टि से अधिक

कठिन हो जाता है। हमें लगा कि यह पता लगाने के लिए सर्वेक्षण बहुत उपयोगी होगा कि शिक्षकों को क्या कठिन लगता है, कक्षाओं में उपयोग करने के लिए क्या सामग्री उपलब्ध है और इन कक्षाओं में पढ़ाए जाने वाले टॉपिक्स क्या हैं।

हमने 1 से 4 सितम्बर की अवधि चुनी जिसकी शुरुआत सप्ताहान्त से हो रही थी। कार्यशाला की अन्तिम सूची में मगाडी क्षेत्र, यादगीर जिले (अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन का कार्यक्षेत्र), चामराजनगर के स्कूलों के तथा तमिलनाडु, आन्ध्रप्रदेश और कर्नाटक में विभिन्न संस्थाओं द्वारा संचालित कुछ स्कूलों के लगभग 30 शिक्षक शामिल थे।

बैठक के लिए तैयारी के कार्य में दो या तीन मुख्य विषय शामिल थे :

पहला यह पता लगाना था कि पाठ्यक्रम को किस चीज की आवश्यकता थी और यह तय करना कि उसमें से हम किस चीज की पूर्ति कर सकते थे। इसके लिए हमें राज्य की पाठ्य–पुस्तकों को देखना और उनमें वर्णन किए गए टॉपिक्स तथा प्रयोगों की सूची बनाने की जरूरत थी। सी.एफ.एल. के वरिष्ठ विद्यार्थियों में से एक ने हाल ही में अपनी परीक्षाएँ समाप्त की थीं और वह कन्नड़ पढ़ सकता था, इसलिए उसने सार–संक्षेपों को बनाने के काम की जिम्मेदारी ले ली। उसने अपनी बारहवीं कक्षा के लिए विज्ञान का अध्ययन किया था। वह स्कूल की प्रयोगशालाओं से भी अच्छी तरह परिचित था, इसलिए, जिन प्रयोगों को किया जा सकता थे तथा जिन उपकरणों का उपयोग किया जा सकता था, उनको उसने अपने आलेख में शामिल किया। एक परोक्ष टिप्पणी : सी.एफ.एल. में विद्यार्थी एक रे बॉक्स (किरन बक्सा) का उपयोग करते हुए प्रकाश के प्रयोग करते हैं, इसलिए उसने कहा कि, 'किताब कहती है कि आप पिनों का उपयोग करके रिफ्रेक्शन (अपवर्तन) के कोण को ज्ञात कर सकते हैं। मुझे पता नहीं है कि यह काम करेगा या नहीं।' तब मुझे उसे बताना पड़ा कि जब हम स्कूल और कालेज में थे तो हमने ठीक वही किया था और वह बहुत अच्छी तरह काम करता है!

अगला काम यह तय करना था कि शिक्षकों के साथ हमें जो समय मिलने वाला था उसमें हमें किन टॉपिक्स का समावेश करना चाहिए था। हमें यह बात स्पष्ट थी कि जो विषयवस्तु पाठ्य–पुस्तकों में है, जो कुछ आधुनिक टॉपिक्स हैं तथा वे चीजें जिनमें हमें लगा कि शिक्षकों को आनन्द आएगा, इन सबमें एक सन्तुलन होना चाहिए। हमें यह भी महसूस हुआ कि इसके लिए भी समय होना चाहिए कि भागीदार खुद सुझाएँ कि वे क्या देखना और करना चाहते हैं।

तीसरी बात दिन के कार्यक्रम की संरचना इस प्रकार करना थी कि हम जो भी महत्वपूर्ण समझते हैं उस सबको समय दे सकें। आवासीय कार्यशाला के पीछे यही विचार था कि भागीदारों के साथ मिल–जुलकर काम करने के लिए भरपूर समय मिले और उन्हें परिसर का आनन्द लेने का अवसर मिले। इसलिए आखिरी दिन के कार्यक्रम की रूपरेखा में इन बातों को ध्यान में रखा गया। पहले दिन एक बहुत संक्षिप्त अनौपचारिक परिचय के बाद, सुबह के कार्यक्रम में तीन समानान्तर सत्र थे जिनके बीच में चाय का अवकाश था। शिक्षकों के तीन अलग–अलग समूह भौतिकविज्ञान, रसायनविज्ञान तथा जीवविज्ञान की प्रयोगशालाओं में गए। दोपहर में एक लम्बे भोजन–अवकाश के बाद, वे एक–दूसरे के साथ अपने अनुभव बाँटने के लिए प्रयोगशालाओं में लौटे। शाम को पैदल भ्रमण और मिलने–जुलने के लिए खाली रखा गया था। रात्रि के भोजन के पश्चात, हमने घण्टे भर शिक्षण के सामान्य पहलुओं, विज्ञान की प्रकृति, इत्यादि के बारे में चर्चा की। अगले दो दिनों के कार्यक्रमों की रूपरेखा भी कुछ इसी प्रकार की थी, पर दोपहर का एक सत्र सावन दुर्ग के भ्रमण के लिए था। अन्तिम दिन का सत्र भागीदारों के फीडबैक और सामूहिक फोटोग्राफ के लिए था।

भागीदारों की प्रतिक्रियाएँ हमारे लिए बहुत मूल्यवान थीं। हमने जान–बूझकर सत्रों को सीमित रखा था और उनमें बहुत ज्यादा चीजों को करने की कोशिश नहीं की। इसके पीछे हमारा उद्देश्य अनौपचारिक रूप से अपने अनुभवों को साझा करने और विचार–विनिमय करने तथा किसी के द्वारा किए गए प्रदर्शन को देखने के बजाय चीजों को खुद बनाने के लिए समय देना था। इस बात को भागीदारों ने महसूस किया और सराहा। उन्होंने यह सुझाव जरूर दिया कि हम पहले ही उन्हें उन टॉपिक्स के बारे में सूचित कर सकते थे जिनका हम कार्यशाला में समावेश करने वाले थे, ताकि वे उनका अध्ययन करके आते। एक अन्य सुझाव यह था कि सभी शिक्षकों को तीनों प्रयोगशालाओं में काम करने के बजाय किसी खास विषय के शिक्षकों को उसी विषय में जुटे रहना चाहिए था। पर मैं इससे सहमत नहीं होऊँगी क्योंकि मुझे लगता है कि सभी विज्ञान शाखाओं को जोड़कर उनका एकीकरण होना चाहिए।

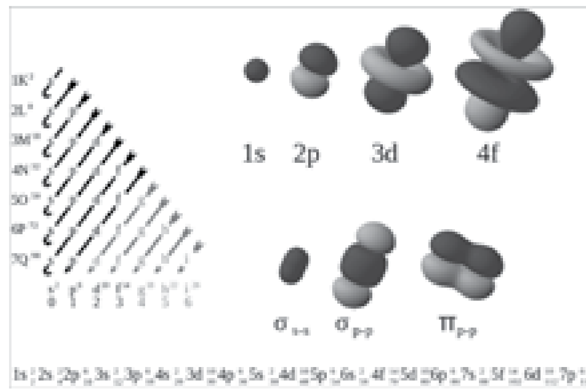
एक स्मृति जो मेरे मन में अंकित है वह भागीदारों के अपने कंडक्टिविटी (चालकता) मीटरों की जाँच करने से जुड़ी है। जब एलईडी (सूचक बत्ती) जल उठी तब उनके चेहरों पर खिली मुस्कानें वाकई में खूबसूरत थीं!

डॉ. यासमीन जयतीर्थ *शिक्षक, सेण्टर फॉर लर्निंग, बंगलौर।* ***अनुवादः*** *भरत त्रिपाठी*



27 हैलो दीदी!

नीरजा राघवन



हैलो दीदी

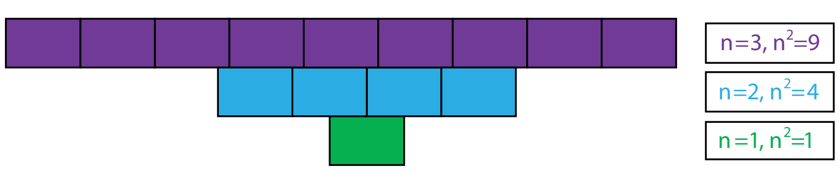
मैं राजघाट में विद्यार्थी थी। आपने एक वास्तुकार की सिर के बल उलटी हुई इमारत की उपमा का इस्तेमाल करते हुए क्वांटम यांत्रिकी से हमारा परिचय कराया। रसायन शास्त्र में कमजोर होने के बावजूद मैं वह परिचय भूली नहीं हूँ। आपको यहाँ पाकर बहुत खुशी हुई। कृपया मुझे अपने नेटवर्क में जोड़ लें।

नमस्कार,

एमएसटी

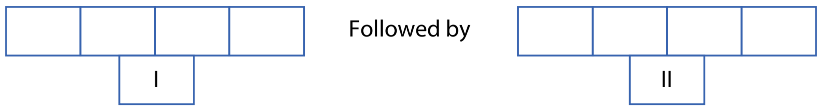
इस मेल ने, जो एक वर्ष पहले मेरे लिंक्ड इन इनबॉक्स में आई थी, मुझे उस नूतन शिक्षण पद्धति की याद दिला दी जो मैंने पहली बार रसायनशास्त्र पढ़ाते वक्त अपनाई थी – किसी किताब (उन दिनों इण्टरनेट तो था नहीं) में से पढ़ने के बाद।

इलैक्ट्रॉनिक विन्यास के सिद्धान्त को आत्मसात करना विद्यार्थियों के लिए कठिन होता है: जहाँ इलैक्ट्रॉन परमाणुओं की नाभि के आसपास मौजूद एक के ऊपर एक चढ़े खोलों में भर जाते हैं और उनके भरने की अधिकतम दर $2n^2$ होती है (जहाँ n खोलों की संख्या हो), और खोल के कक्षों को एकल रूप से भरते जाते हैं जब तक की उससे ज्यादा ऊँचे स्तर के खोल को न भरना हो। इस किताब में एक पागल वास्तुकार द्वारा बनाई गई इमारत की उपमा के उपयोग का सुझाव दिया गया था। पागल इसलिए क्योंकि उसने प्रत्येक मंजिल पर n^2 कक्ष बनाने का सुझाव दिया: और प्रत्येक कक्ष में अधिकतम सिर्फ दो लोग ही रह सकते थे। इस परिणाम के साथ इमारत की पहली तीन मंजिलें ऐसी दिख रही थीं:

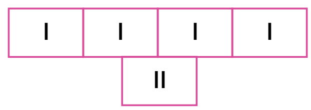


अब जो 'उलटी पलटी' इमारत सामने थी उसे किराएदारों से भरना था: पर प्रत्येक कक्ष में सिर्फ दो लोगों को ही रखा जा सकता था। चूंकि वे लोग नखरे दिखाने वाले थे, उन्होंने तब तक जोड़े बनाने से इनकार कर दिया जब तक कि उनके लिए एक मंजिल ऊपर जाने के अलावा कोई चारा नहीं बचता था!

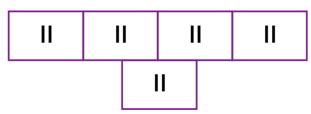
इसका अर्थ यह था कि मंजिलों में लोग आनुक्रमिक ढंग से रहने लगे (एक खड़ी रेखा एक किराएदार को दर्शाती है), लिहाजा:



और फिर, चूँकि निचली मंजिल पूरी भर चुकी थी, इसलिए अगले चार किराएदार पहली मंजिल पर स्थित चार उपलब्ध कक्षों में फैल जाते हैं, लिहाजा:

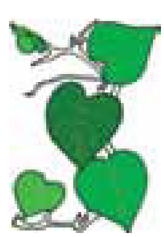


और जोड़े तभी बनाए जब सारे कक्ष एकल रूप से भर चुके थे, लिहाजा:



यह उपमा इसी ढंग से और ऊपर की मंजिलों तक बढ़ती जाती। कक्षा में बैठे विद्यार्थी इस सरल सिद्धान्त का उपयोग करते हुए अपने आप कक्षों के भरने के स्वरूप का चित्र बना सकते थे, कि कोई भी तब तक किसी के साथ कमरा साझा नहीं करता जब तक कि उसके सामने कोई और भी ज्यादा कठिन विकल्प ही न रह जाए: यानी एक और मंजिल चढ़कर रहने का विकल्प!

इस ईमेल से, मुझे यह एहसास हुआ कि यह इलैक्ट्रॉनिक विन्यास को समझाने का सरल पर सशक्त नवीन प्रयोग था।



नीरजा राघवन *अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय के स्रोत केन्द्र में प्राध्यापक हैं। वे एकैडमिक्स व पैडागॉजी खण्ड में काम करती हैं। उनसे neeraja@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।*
अनुवाद *: भरत त्रिपाठी*



[k.M 1 %lh[kus dk vkuUn



28 शिक्षण का नवाचारी तरीका

मैत्रेयी

आज की दुनिया में ऐसी कई सारी चीजें हैं जिन्हें हम अनेक तरीकों से सीख सकते हैं। मुझे लगता है कि व्यक्तियों के रूप में यह हमारे लिए, बेहद महत्वपूर्ण है कि हम जो भी पढ़ रहे हों उसे सीखने–समझने का सही मार्ग तलाशें। चाहे वह किसी गणित के सवाल को हल करने का तरीका हो या यह समझना कि टेलीफोन कैसे काम करता है, या यह कि पत्तियाँ हरी क्यों होती हैं। मुझे लगता है कि सभी की सीखने–समझने की एक अलग शैली होती है। एक बार जब हम समझ लें कि हमारे मजबूत पक्ष क्या हैं, तो हम उस समझ को अपने भले के लिए इस्तेमाल करते हुए उसे अच्छे से सीख सकते हैं। मैंने पाया है कि जब मेरे सामने सीखने को कई चीजें होती हैं, तो उन सभी को सीखने का मेरा तरीका भी अलग–अलग होता है। पर कभी–कभी मेरे लिए यह समझ पाना एक चुनौती रही है कि अमुक चीज को सीखने के लिए कौन–सा तरीका सर्वोत्तम होगा।

सीखने की प्रक्रिया में निश्चित रूप से उपयोग में लाई जाने वाली शिक्षण पद्धति या शैली का बहुत बड़ा हाथ होता है। सेण्टर फॉर लर्निंग (सी.एफ.एल.) जैसे स्कूल में जहाँ मैंने सात साल तक जीवन बिताया, मुझे अपनी गति से सीखने का समय दिया गया और छूट दी गई। ऐसी कक्षाओं में होने के कारण, जहाँ विद्यार्थियों की संख्या महज तीन से लेकर अधिकतम आठ तक होती थी, चर्चाओं और सवालों को एक–एक करके लिया जा सकता था ताकि सबके सन्देहों को दूर किया जा सके। स्कूल की ऐसी संरचनाओं के कारण विद्यार्थियों और शिक्षक के बीच के रिश्ते की विशेषताएँ थीं : चर्चाएँ, प्रश्न और शिक्षा। मैंने इस संरचना का अपने अकादमिक और गैर–अकादमिक, दोनों तरह के कार्यों में भरपूर लाभ लिया।

स्कूल में ग्यारहवीं और बारहवीं कक्षा के दौरान हमने कुछ ऐसे प्रोजैक्ट किए जिनमें मुझे लगा कि, विद्यार्थी और शिक्षक, दोनों की भूमिकाओं की दृष्टि से सीखने और सिखाने की अलग पद्धति का इस्तेमाल किया गया था। हमने दो प्रोजैक्ट किए थे, एक जमीन से सम्बन्धित था और दूसरा मानवाधिकारों से। दोनों ही अनोखे थे और उसका कारण इन अध्ययन–क्षेत्रों को समझने के लिए हमारे द्वारा अपनाई गई पद्धति थी।

मानवाधिकार प्रोजैक्ट हमारे सामान्य अध्ययन प्रोजैक्ट का हिस्सा था। 'सामान्य अध्ययन' बारहवीं कक्षा में पाठ्यक्रम का हिस्सा था, जिसमें हर साल एक नया अध्ययन–प्रसंग लिया जाता है। ये अध्ययन–प्रसंग कोई भी ऐसे सामाजिक या पर्यावरण आदि से सम्बन्धित मुद्दे हो सकते थे जिनसे जुड़कर हम गहराई से उनका अध्ययन कर सकते हों।

मानवाधिकार प्रोजैक्ट के माध्यम से हमने मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा और बाल अधिकार घोषणा का अध्ययन करने का लक्ष्य रखा। प्रोजैक्ट की योजना इस तरह से बनाई गई थी कि हमारे पास एक सैद्धान्तिक भाग भी था और एक प्रायोगिक भाग भी, ताकि हम जो पढ़ रहे हों उसे वास्तव में भौतिक रूप से महसूस भी सकें। पहले तो, मानवाधिकार घोषणा को देखने के पूर्व ही, शिक्षकों ने हमें चर्चा करने के लिए, जिसमें वे खुद भी शामिल हुए, प्रेरित किया जहाँ हमने इस बात पर विचार–विमर्श किया कि मनुष्यों के रूप में हम अपने लिए किन–किन बातों को जरूरी मानते थे, और अपने को किन–किन चीजों का अधिकारी मानते थे। हमसे इस बात की कल्पना करने को कहा गया कि अगर हमें कोई समाज/समुदाय निर्मित करना हो तो "तुम्हारे लोगों के पास किस तरह के अधिकार होंगे? वे क्या–क्या पाने के अधिकारी होंगे?" ये वे प्रश्न थे जिनके उत्तर देने की हमने कोशिश की। इसके बाद, हमने घोषणाओं को सविस्तार पढ़ा। अनुच्छेद दर अनुच्छेद पढ़ा



कक्षा का एक दृश्य – विचारों का आदान–प्रदान

और पाया कि जिन बातों को हमने किसी समाज के लिए जरूरी पाया था वे उस उद्घोषणा में भी थीं।

यदि हम पढ़ने–सीखने की इस पद्धति को देखें तो मुझे ऐसा लगता है कि यह हमें चीजों के बारे में ज्यादा गहराई से सोचने में मदद करती है। जब हमने उन चीजों के बारे में सोचना शुरू किया जिन्हें हम जरूरी समझते थे, तो एक बात से दूसरी बात निकलती गई। जैसे इस बात से लेकर कि पानी निशुल्क उपलब्ध होना चाहिए या नहीं, इस बात तक कि स्कूलों/कॉलेजों आदि में आरक्षण होना चाहिए या नहीं, हमने गम्भीर बहसें कीं। चर्चा के दौरान हम जुड़े हुए बहुत से अलग–अलग बिन्दुओं पर जाते रहे और हमें लगा कि इस बात पर एक आम सहमति बनाना बहुत कठिन है कि हमारे 'नए' समाज में हर व्यक्ति किन चीजों का अधिकारी होगा। चर्चा, सहमति और असहमति की इस प्रक्रिया ने ऐसी गुंजाइश उपलब्ध करवाई जहाँ कोई 'सही' या 'गलत' उत्तर नहीं था। मुझे लगता है कि ऐसा खुला अवसर मिलने पर चर्चा की इस पूरी प्रक्रिया से आपको इन चीजों के बारे में सोचने में मदद भी मिलती है और आप अपने विचारों को स्पष्ट ढंग से कह पाते हैं।

इस प्रोजैक्ट का एक हिस्सा था लोगों से जाकर बात करना और उनसे कुछ सवाल पूछना। जैसे क्या वे उन्हें मिले हुए अधिकारों से अवगत हैं और वे जिन चीजों को पाने के अधिकारी हैं क्या वे उन्हें मिल रही हैं आदि।

इस पद्धति में, हम जो भी प्रसंग पढ़ रहे होते थे, उसे समझाने के लिए और उत्तरों की खोज के लिए हमारे शिक्षक हमें 'वास्तव में' सम्बन्धित जगह पर भेजते थे। हमें खुद जाकर देखना पड़ता था कि क्या लोग जिन अधिकारों के हकदार हैं वे वास्तव में उन्हें मिल रहे थे या नहीं। इस प्रक्रिया के दो भाग थे। पहली में लोगों से मिलना और स्थानों के दौरों पर जाना। हम बंगलौर की एक–दो झुग्गी बस्तियों में गए और वहाँ रह रहे लोगों से बात करके यह जानने का प्रयास किया कि नागरिक होने के नाते वे जिन अधिकारों के हकदार थे उन्हें नजर में रखते हुए उन लोगों की स्थिति कैसी थी और उन्हें किन समस्याओं का सामना करना पड़ रहा था आदि। मुझे लगा कि मैंने सबसे ज्यादा समझ इसी प्रोजैक्ट से हासिल की। दूसरे भाग में हमें किसी एक ऐसे व्यक्ति से बात करना थी जिससे हम रोज मिलते थे। उससे वे सवाल पूछना थे जो हमें कक्षा में सूझते थे। हम सभी ने या तो घरों में काम करने के लिए आने वाले लोगों से बात की या सब्जी बेचने वालों से, या दूसरे अपार्टमेंट्स के चौकीदारों से बात की। इस अभ्यास के माध्यम से हमने जाना कि लोगों को वे अधिकार, जिन्हें हम सबसे बुनियादी अधिकार समझते हैं, जैसे स्वच्छता, आश्रय, शिक्षा आदि अभी भी व्यावहारिक रूप से नहीं मिल रहे हैं। इस बात से, कि उन लोगों ने खुद हमें यह सब सुनाया और अपने घर दिखाए, हमें उनकी वास्तविक स्थिति का पूरा एहसास हुआ। यदि मैंने इसे किसी पाठ्य–पुस्तक में पढ़ा होता, तो मुझे यकीन है कि मेरे ऊपर इसका इतना असर नहीं होता।

मुझे लगता है कि वास्तव में कुछ सीखने के इस अनुभव ने मुझ पर और निश्चित ही मेरे साथियों पर बहुत गहरा प्रभाव छोड़ा। मुझे लगता है कि किसी चीज को अनुभव



अन्वेषण और खोज

के माध्यम से सीखना, किताब में पढ़ लेने से बहुत अलग होता है क्योंकि हम यथार्थ में उन चीजों का अनुभव करते हैं। हम अपने आसपास होने वाली चीजों को देखते हैं, सुनते हैं और समझते हैं, और जब आपको कोई चीज इस ढंग से सिखाई जाती है या आप स्वयं सीखते हैं, तो उसकी बात ही अलग होती है।

एक अन्य ऐसा प्रोजेक्ट, जिसमें हम जो पढ़ रहे थे उसे हमने अनुभव किया, वह भूमि प्रोजैक्ट था जिसे हमने स्कूल में किया। यहाँ सीखने की प्रक्रिया का काफी बड़ा हिस्सा सामान्य अवलोकन, मालूमातों को दर्ज करने और सबके साथ बाँटने का था। एक बार फिर, हमारे शिक्षकों ने हमें प्रोत्साहित किया कि जिस भूमि पर हम रह रहे थे उसके बारे में जानने, उसे समझने के लिए इन्हीं तरीकों का प्रयोग करें।

सी.एफ.एल. परिसर बंगलौर के बाहरी इलाके में बड़ी–सी खूबसरत भूमि पर स्थित है। स्कूल की इमारतें परिसर के एक भाग में केन्द्रित हैं और बाकी जगह को कम से कम देख–रेख के साथ प्राकृतिक रूप से बढ़ने के लिए छोड़ दिया गया है। इसलिए वहाँ काफी संख्या में पेड़–पौधे और पशु–पक्षी पाए जाते हैं। स्कूल के पाठ्यक्रम के अंश के रूप में भूमि के साथ जुड़कर उसपर काम करना एक अहम भाग है– चाहे उसका मतलब बागवानी हो, खरपतवार की सफाई हो, पक्षियों को निहारना हो या बस उस पगडण्डी पर चहलकदमी करना जो विद्यार्थियों ने बनाई है।

अपने आसपास की किसी चीज के बारे में जानने–सीखने के लिए अवलोकन को एक महत्वपूर्ण ढंग के रूप में इस्तेमाल करने के लिए हम इस प्रोजैक्ट में शामिल हुए। हमने उस भूमि के बारे में जिसमें हम रहते हैं, उन पौधों के बारे में जो वहाँ उगते हैं, विभिन्न ऋतुओं के पक्षियों इत्यादि के बारे में समझ हासिल की। यह पद्धति अत्यन्त दिलचस्प थी क्योंकि हम विद्यार्थियों को परिसर के अलग–अलग भागों में अवलोकन के लिए न्यूनतम दिशानिर्देशों के साथ अकेला छोड़ दिया गया था।

हमसे शुरू में इतना ही कहा गया "सिर्फ देखो, और जो कुछ भी देखो, सूंघो, सुनो और महसूस करो, उसे लिखते जाओ।" वहाँ, कुछ देर के लिए, हमें जो कुछ भी दिखा उसे समझने–जानने के लिए हम खुद ही जिम्मेदार थे। कुछ घण्टों तक उन स्थानों पर घूमने के बाद, हम लोग वापस आते और हमने जो अवलोकन किए होते उन्हें किताबों में या इण्टरनेट पर तलाश करते। इसके साथ ही, हम अपने शिक्षकों और मित्रों के साथ अपने अवलोकनों को बाँटते। इस तरह, सबको इससे लाभ होता और यह एक ऐसी प्रक्रिया बन गई जिसमें प्रत्येक व्यक्ति कुछ नया सीख रहा था – शिक्षक भी और विद्यार्थी भी!

मुझे लगता है कि यह पद्धति जिसमें जो भी तलाश करना होती है वह स्वयं बच्चों को करने दी जाती है, बड़ी ही रोचक है। इस वजह से कि इस पद्धति में लोग खुद अवलोकन करते हैं और जो कुछ भी वे देखते हैं उसे साझा करते हैं, मुझे लगता है कि हमने केवल कक्षा में बैठकर किताब में से वहाँ पाए जाने वाले पेड़–पौधों और पशु–पक्षियों के बारे में पढ़ने की तुलना में इस तरह से कहीं ज्यादा सीखा।

ये ऐसे दो सशक्त उदाहरण हैं कि किस तरह विद्यार्थी किसी विषय–प्रसंग को गैर–पारम्परिक ढंग से सीख सकते हैं। शिक्षक द्वारा विद्यार्थियों को पहले से तय और नियोजित पाठ्य–सामग्री के साथ व्याख्यान देने के पारम्परिक तरीके को ऐसी पद्धति में बदला जा सकता है जहाँ विद्यार्थी और शिक्षक, दोनों ही प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भागीदार हों। मैंने इस पद्धति को व्यक्तिगत रूप से बहुत लाभकारी पाया। शिक्षा के क्षेत्र में काम करने में रुचि होने के नाते मैं यह मानती हूँ कि सही परिवेश और वातावरण के साथ शिक्षक और विद्यार्थी, दोनों सीखने वाले हो जाते हैं, और फिर यह यात्रा बहुत रोचक हो सकती है।

मैत्रेयी *माउण्ट कारमैल कालेज, बंगलौर में जनसंचार का स्नातकीय अध्ययन कर रही हैं। उनसे maitreyi.10@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।* ***अनुवाद*** *: भरत त्रिपाठी*



29 भूगोल की कक्षा का मेरा एक अनुभव

तपस्या साहा

मैं सन 1965 में कोलकाता के सेण्ट मेरीज कॉन्वेण्ट में कक्षा 5 में पढ़ती थी। हमारी भूगोल की कक्षा चल रही थी। श्रीमती शान्ति नंदी हमारी भूगोल की शिक्षिका थीं। उस स्कूल में हम सब अपने शिक्षकों को 'टीचर' कहा करते थे।

वह साप्ताहिक रूप से होने वाली 'मानचित्र रचना' की कक्षा थी; हम सबने अपनी मानचित्र पुस्तिका, एटलस पेंसिल और रबर निकाल लीं। (उन दिनों बस हाथ से मानचित्र बनाना अनिवार्य था)।

उनकी कक्षाएँ हमेशा रोचक हुआ करती थीं; दुनिया के अलग–अलग भागों की उनकी वे कहानियाँ, जो 'चॉप स्टिक' को कक्षा तक ले आती थीं, और 'एक पैसे के तांबे के सिक्के' का इनाम, उनकी कक्षा की ऐसी कुछ चीजें थीं जो मुझे याद हैं।

वे कक्षा में आकर बैठ गईं। उन्होंने पिछले दो महीनों से भारत की उत्तर–पश्चिमी सीमा पर कश्मीर में किसी स्थान पर भारत और पाकिस्तान के बीच चल रही लड़ाई की बात की। हम सभी को इस बारे में पता था, क्योंकि घर पर हमने अखबारों की कतरनें काट कर रखी हुई थीं। मेरी दीदी ने उन्हें खिड़की के शीशे पर चिपका दिया था ताकि यदि पाकिस्तानी विमानों द्वारा बमवर्षा हो तो कोई हताहत न हो; हम उन दिनों में कर्फ्यू और ब्लैकआउट के बारे में जानते थे। पर टीचर ने कुछ ऐसी बात की जिसके बारे में हमने कभी नहीं सोचा था। उन्होंने हमसे एटलस निकालकर वह पेज खोलने को कहा जिस पर भारत और पाकिस्तान, दोनों देश दिख रहे हों। फिर उन्होंने दोनों देशों के बीच की सीमा की तरफ इशारा किया।

मेरे दिमाग में लड़ाई के सारे चित्र खिंच गए जब उन्होंने उस क्षेत्र की प्राकृतिक विशेषताओं का वर्णन किया। एक क्षण को मुझे लगा कि मैं दूर बैठी उनकी बातें नहीं सुन रही थी, बल्कि अपनी कल्पना में उस क्षेत्र में ही पहुँच गई थी।

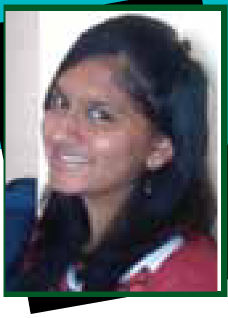
इसके बाद उन्होंने जो बताया वह बहुत रोचक था। उन्होंने हमसे सीमा पर तैनात जवानों के लिए चिट्ठी लिखने को कहा। उन्होंने कहा, "तुम लोगों को जैसा समझ आए वैसा लिखना। यह ध्यान रखना कि आधा सितम्बर बीत चुका है और इस समय हिमालय में बहुत ठण्ड होगी, सारे जवान अपने चूल्हों से कहीं दूर, अपने परिवारों से कहीं दूर, रूखे और बंजर सर्द बर्फ से ढके पहाड़ों पर हैं।" हम सब लिखने बैठ गए, मुझे याद है कि मैंने जवानों को 'प्यारे जवान दादा...' कहकर सम्बोधित किया था।

इन चिट्ठियों के साथ टीचर ने पत्रिकाएँ भेजने का भी निर्णय लिया। मुझे याद है कि मैं घर से 'इलस्ट्रेटेड वीकली' के कुछ अंक इस उद्देश्य के लिए बटोरकर स्कूल ले गई थी।

उस दिन, उस कक्षा में मेरी टीचर का उद्देश्य जो भी रहा हो, एक बात तो पक्की है कि उन्होंने 'स्थान और मानव सम्बन्ध' का सिद्धान्त हमेशा के लिए हमारे दिमाग में बैठा दिया था।

टीचर के बारे में: वे दुनिया के कई हिस्सों में जा चुकी हैं। उनके पति द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद के समय में एफ.आर.सी.एस. डॉक्टर थे। कई स्थानों पर घूमने के बाद आखिरकार वे कलकत्ता में टॉलीगंज स्थित हमारे स्कूल के पास बस गईं। उन्होंने मूक और बधिरों को पढ़ाने का प्रशिक्षण लिया था और बाद में वे कलकत्ता में 'डेफ एण्ड डम्ब स्कूल' में शिक्षिका हो गई थीं।

तपस्या साहा, *सदस्य, स्कूल्स कोर टीम, अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, बंगलौर। उनसे tapasya@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।* ***अनुवादः*** *भरत त्रिपाठी*



30 जीवविज्ञान की कक्षा में डिसेक्शन का अनुभव

अनन्या रामगोपाल

जो कक्षा जीवविज्ञान की एक सामान्य–सी कक्षा के रूप में शुरू हुई थी, जल्दी ही, डिसेक्शन करवाए जाने की खबर के फैलते ही उसका पूरा माहौल बदल गया। कक्षा में जो रोमांच फैल गया था उसे महसूस किया जा सकता था। सचमुच में डिसेक्शन! उस समय मुझे आगे जाकर शल्य चिकित्सक बनने का जुनून सवार था और इस दिशा में पहली बार हाथ आजमाने का यह मुझे अच्छा मौका लगा। एक मृत बकरे के दिल को अपने हाथों में पकड़ने का विचार: जो हालाँकि थोड़ा घिनौना तो था पर साथ ही अविश्वसनीय रूप से रोमांचक था। जैसे कि रक्त–परिसंरचरण तंत्र पहले ही पर्याप्त रोचक न रहा हो।

दिन बीतते चले गए और हम लोग धैर्यपूर्वक उस डिसेक्शन का इन्तजार करते रहे। 15 बकरों के दिल हासिल करना हमारी शिक्षक के लिए भी खासा चुनौती भरा साबित हुआ लेकिन उनके स्थानीय कसाई ने आखिरकार ने उन्हें इतने दिल उपलब्ध करा दिए और डिसेक्शन का दिन आ ही गया।

उस दिन प्रयोगशाला में दाखिल होते समय मैं इतने रोमांच से भरी हुई थी कि मेरे कदमों में एक स्वाभाविक उछाल थी। अपने सभी मित्रों के सामने यह शेखी बघारने के बाद कि मैं किस तरह से दिल का डिसेक्शन करूँगी, वह समय



आ ही गया था। जिस पहली चीज ने मुझे चौंकाया वह थी उस दिल से आ रही गंध। वह खून की बिलकुल अलग और साफ समझ में आने वाली गंध थी। उसके कारण मेरा मन होने लगा था कि मैं दरवाजे से निकल कर भाग जाऊँ और डिसेक्शन के बारे में बिलकुल भूल जाऊँ। पर मैं वहीं अपनी जगह पर डटी रही और फिर बकरे के उस दिल तक पहुँची। वह गाढ़े लाल भूरे से रंग का था और जैसा मैंने सोचा था उससे छोटा था। इसमें से छोटी सफेद नलियाँ निकल रही थीं और यह वाकई एक अनोखा नजारा था। एक दिल पर तीन लोगों को काम करना था और मैंने जल्दी से कुछ मित्रों के साथ अपना दल बना लिया। हम सभी को सर्जिकल दस्ताने, छुरियाँ और सर्जिकल कैंचियाँ दी गईं और काम पर लगने को कहा गया। दस्ताने से सजे हाथों में बकरे के दिल को लिए हुए मेरी आँखों के सामने तकरीबन वे सभी यशस्वी शल्यक्रियाएँ घूम गईं जिन्हें मैं भविष्य में करने वाली थी। गंध कम हो गई और मैं सीधे उस दिल के चीरफाड़ में लग गई। इतना तो कहना ही पड़ेगा कि वह दिल बहुत घिनौना था। घिनौना और बहुत चिकना। हमें महाधमनी (दिल में से निकलने वाली अनेक सफेद नलियों में से एक) को तलाशने के लिए कहा गया और उसी के किनारे–किनारे दिल को चीर देने के निर्देश दिए गए। महाधमनी का पता लगाना कोई बहुत आसान काम नहीं था। पेय पदार्थ को घोलने वाली नली के जैसे दिखने वाले एक औजार द्वारा, जिसका सम्भवत: कोई वैज्ञानिक नाम रहा होगा, को इधर–उधर डालने और टटोलने के बाद, आखिर वह महाधमनी मिल गई और फिर सबसे पहला चीरा लगाया गया। मुझे काफी उत्कंठा थी। मैं दिल का अंदरूनी भाग देखने जा रही थी।

मुझे नहीं पता कि मुझे वहाँ ठीक–ठीक क्या दिखने की अपेक्षा थी। दिल की चीरफाड़ करना उतना आसान नहीं

था जितना मैं उसे मान रही थी। पहले तो उसे सही ढंग से पकड़ना ही हिम्मत का काम था लेकिन उस छुरी को दिल के आरपार भेदना तो अथक प्रयास सिद्ध हुआ। और जब अन्ततः मैंने छुरी को दिल में पूरी तरह से उतार दिया तब उस दिल का करीब–करीब संहार हो चुका था। मैं फिर भी अविश्वसनीय रूप से गर्व से फूली नहीं समा रही थी। दिल का अन्दरूनी हिस्सा सपने जैसे लग रहा था। खून के थक्कों, रक्त वाहिकाओं, कड़े अस्थिबंधों और मोटी दीवारों से भरा हुआ। इस बात पर भरोसा करना बहुत मुश्किल था कि इतनी साधारण–सी दिखने वाली कोई चीज इतने असाधारण रूप से जटिल उद्देश्य को कैसे पूरा कर पाती है।

एक ऐसी लड़की के लिए जो कुछ हफ्तों पहले तक किसी खुले हुए दिल के आसपास भी खुद को खड़ा हुआ पाने की कल्पना नहीं कर सकती थी, अब एक दिल को खुद खोलना और उसके अन्दर ताक–झाँक भी करना, यह एक बहुत बड़ी उपलब्धि थी, और यह हृदयरोग विशेषज्ञ बनने की कल्पना की दिशा में मील का पहला पत्थर प्रतीत हुई।

मेरी जीवविज्ञान की शिक्षिका तो बहुत अद्‌भुत हैं, और रक्त परिसंचरण तंत्र भी बहुत रोचक प्रतीत होता है, पर दिल को खोलना और उसे अच्छी तरह से देखना लगभग दूसरी ही दुनिया का अनुभव था जिसकी जगह मुझे नहीं लगता कोई और चीज ले सकती है। सिर्फ एक मेरी शिक्षिका जैसी अद्‌भुत शिक्षिका ही थीं जो कर्तव्य की पुकार से आगे जाकर इतनी मेहनत करके वे दिल ले आईं। वे आसानी से अध्याय को पारम्परिक ढंग, यानी पाठ्य–पुस्तक में से पढ़ाकर, समाप्त कर सकती थीं, लेकिन वे एक कदम आगे गईं और मुझे और मेरे सभी मित्रों को जीवन में एकबारगी आने वाला अनुभव दिलाया। मुझे याद नहीं है कि मैंने कभी अपनी कक्षा को किसी अवधारणा में इतना दिलचस्पी लेता हुआ पाया जितना उस दिन प्रयोगशाला में। यह दिखाता है कि एक छोटी–सी पहल भी बहुत दूर तक जा सकती है।



__अनन्या रामगोपाल,__ कक्षा 9, इनवैन्चर अकैडमी। उनसे ananya.ramgopal@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। __अनुवाद__ : भरत त्रिपाठी

शिक्षकों का ई-मंच: टीचर्स ऑफ इण्डिया

गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा के लिए कार्यरत अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन ने इसकी पहल की है। वर्ष 2008 में शिक्षक दिवस पर इसका शुभारम्भ किया गया था। यह बहुभाषी पोर्टल राष्ट्रीय ज्ञान आयोग द्वारा प्रस्तावित एवं समर्थित है। प्राप्त प्रतिक्रियाओं,सुझावों तथा अनुभवों को ध्यान में रखकर इसे और अधिक सुगम और सहज बनाने का प्रयास किया गया है। यह निशुल्क है तथा हिन्दी, कन्नड़, तमिल, तेलुगू तथा अँग्रेजी में www.teachersofindia.org पर उपलब्ध है।

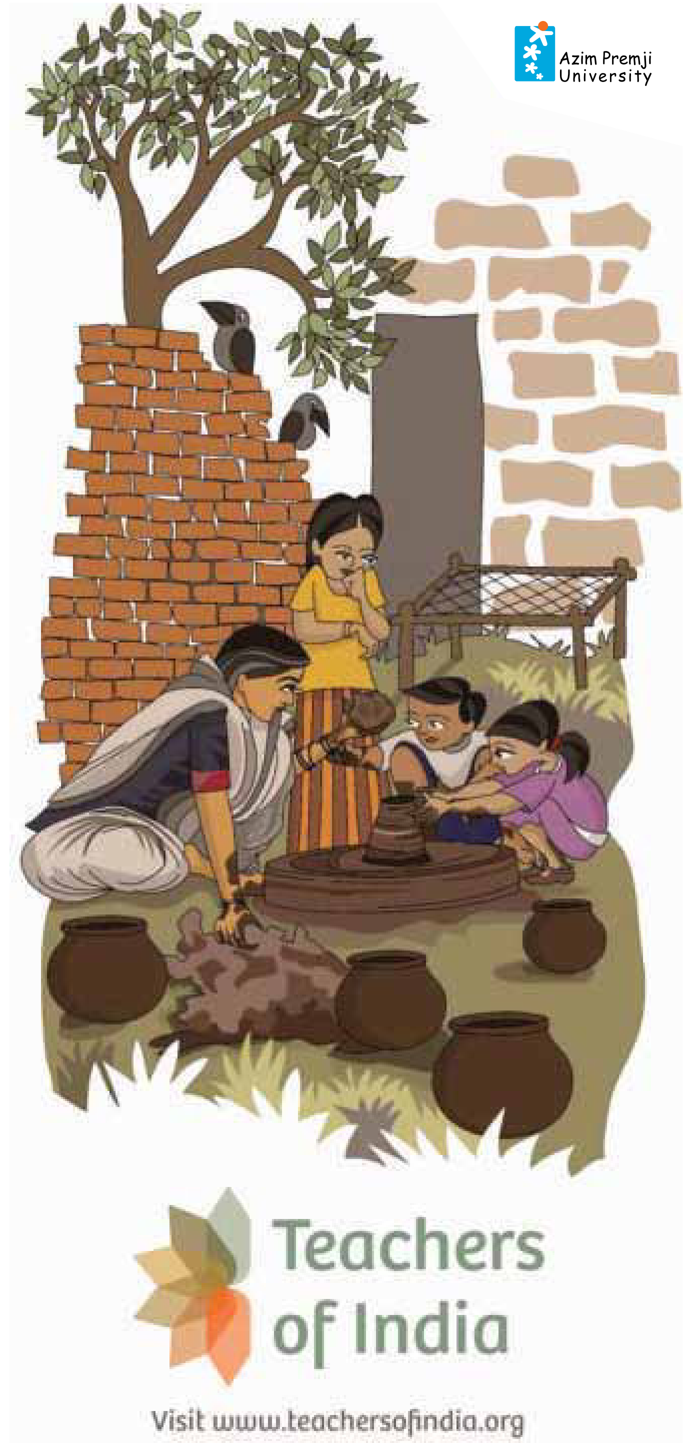
यह एक ऐसा मंच है जहाँ शिक्षक अपनी पेशेवर क्षमताओं को बढ़ा सकते हैं। वे इस मंच पर–

- विभिन्न विषयों, भाषाओं और राज्यों के शिक्षकों से संवाद कर सकते हैं।
- शैक्षणिक विधियों और उनके विभिन्न पहलुओं पर अपने विचारों, अनुभवों का आदान–प्रदान कर सकते हैं। शिक्षण विधियों, स्कूल के अनुभवों, आजमाए गए शैक्षिक नवाचारों या नए विचारों पर लिख सकते हैं।
- विभिन्न स्तम्भों के माध्यम से टीचर्स ऑफ इण्डिया पर भागीदारी कर सकते हैं।
- विभिन्न शैक्षिक विषयों, मुद्दों पर लेख, शैक्षणिक निर्देशिकाएँ, माडॅयूल्स आदि टीचर्स ऑफ इण्डिया से सीधे या विभिन्न लिंकों के माध्यम से प्राप्त कर सकते हैं।

टीचर्स ऑफ इण्डिया में *कक्षा संसाधन* तथा *शिक्षक विकास* के अन्तर्गत सामग्री प्रस्तुत की जा रही है। इनमें पाठ योजना, गतिविधि, वर्कशीट, पीपीटी, ऑडियो, वीडियो, ईबुक, लेख, इमेज के रूप में विभिन्न सामग्री है।

टीचर्स ऑफ इण्डिया है आप सबके लिए

वे जो स्कूल में पढ़ा रहे हैं, वे जो भविष्य के शिक्षक हैं, वे जो शिक्षकों को तैयार कर रहे हैं–यानी शिक्षक अध्यापक। साथ ही शिक्षक–शिक्षा में संलग्न संस्थाएँ, शिक्षा विभाग, स्कूल शिक्षा के प्रशासक और विश्वविद्यालयों से भी टीचर्स ऑफ इण्डिया का उतना ही सरोकार है। टीचर्स ऑफ इण्डिया का उद्देश्य तभी पूरा हो सकता है जब अधिक–से–अधिक व्यक्ति इसमें भागीदारी करें। इसका लाभ उठाएँ।



हमें लिखें, ईमेल या फोन करें। आपका स्वागत है।

अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन
134, डूड्डाकन्नेली, विप्रो कारपोरेट ऑफिस के बाजू में,
सरजापुर रोड, बंगलौर 560 035
Email: teachers@azimpremjifoundation.org
Ph: 09731788446

अगला अंक

स्कूली शिक्षा में आकलन

अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन

#134, डूड्डाकन्नेल्ली,
विप्रो कॉरपोरेट ऑफिस के बाजू में,
सरजापुर रोड, बंगलौर 560 035, भारत
दूरभाष : 91–80–6614900 / 01 / 02 फैक्स : 91–80–66144903
ई–मेल : learningcurve@azimpremjifoundation.org
वेबसाइट : **www.azimpremjifoundation.org**

Also visit Azim Premji University website at
www.azimpremjiuniversity.edu.in

Azim Premji University
अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का प्रकाशन

For suggestions or comments and to share your views or personal experiences, do write to us at **learningcurve@azimpremjifoundation.org**

131181

Azim Premji University

RESOURCE KIT

This resource kit has been compiled from Issues XII, XIII, XIV and XV of the Learning Curve on the themes of Science in School Education, Language in School Education, Mathematics in School Education and Social Science in School Education, respectively.

This resource kit is not by any means an exhaustive one. It has been put together with the help of several individuals who work in the field of education, all of whom we would like to sincerely thank for their time and effort.

SCIENCE



Some Resource Books that help make Science Fun

1. The Third Book of Experiments, Leonard De Vries, Carousel Books
2. Science Works, Ontario Science Centre, Ontario
3. Toying Around with Science, Bob Friedhoffer, Franklin Watts, New York
4. The Science Explorer, P. Murphy, E. Klages, L. Shore, An Owl Book
5. 700 Science Experiments for Everyone, Compiled by UNESCO, Doubleday
6. 100 Amazing Science Fair Projects, Glen Vecchione, Goodwill Publishing House, New Delhi
7. 365 Simple Science Experiments with Everyday Materials, Richard Churchill, Sterling Publishers
8. The Book of Experiments, Leonard De Vries, Carousel
9. Joy of Learning, (Standards 3 to 5), Center for Environmental Education, Ahmedabad, India
10. Experiments for You, John Tollyfield, Evans Brothers, London
11. How to Turn Water Upside-Down, Ralph Levinson, Beaver Books, London
12. Experiments with Everyday Objects, Kevin Goldstein-Jachson, Granada Publishing, New York
13. Simple Science Experiments, Batstord, Hans Jurgen Prees
14. Let's Discover Science, David Horsburgh, Oxford University Press
15. Chai Ki Pyali Mein Paheli, Partho Ghosh & Dipandar Home (Hindi) National Book Trust, New Delhi 110016
16. UNESCO Source book for Science in the Primary School, Harlen & Elstgeest, National Book Trust, New Delhi 110016
17. Soap Bubbles, C.V. Boys, (Eng/Hin), Vigyan Prasar, C-24 Qutub Institutional Area, New Delhi 110016
18. The Chemical History of a Candle, Michael Faraday (Eng/Hin), Vigyan Prasar, New Delhi, info@Vigyanprasar.gov.in
19. Science in Everyday Life, J.B.S. Haldane, Vigyan Prasar, New Delhi, info@Vigyanprasar.gov.in
20. VSO Science Teacher's Handbook, Andy Byers, Ann Childs, Chris Lane (Hindi) Eklavya, Bhopal, pitara@eklavya.in
21. Environment & Self-Reliance, Yona Friedman, Eda Schaur (Eng/Hin), Vigyan Prasar, New Delhi
22. Energy & Self-Reliance, Yona Friedman, (Eng/Hin) Vigyan Prasar, New Delhi, info@vigyanprasar.gov.in
23. The Story of Physics, T. Pammanabhan (Eng/Hin) Vigyan Prasar, New Delhi,info@vigyanprasar.gov.in
24. On the Various Forces of Nature, Michael Faraday, Vigyan Prasar, New Delhi, info@vigyanprasar.gov.in
25. The Insect World of J. Henri Fabre, Vigyan Prasar, New Delhi, info@vigyanprasar.gov.in
26. The Autobiography of Charles Darwin, Vigyan Prasar, New Delhi, info@vigyanprasar.gov.in
27. The Bicycle Story, Vijay Gupta, Vigyan Prasar, New Delhi, info@vigyanprasar.gov.in
28. Aakash Darshan Atlas, Gopal Ramchandra Paranjpe, NCERT, Sri Aurobindo Marg, New Delhi 110016
29. Preparation for Understanding, Keith Warren, illus. by Julia Warren, UNESCO
30. Resonance Journal of Science Education, Indian Academy of Sciences
31. Bal Vaigyanik, Eklavya, Bhopal

Courtesy : **Aha! Activities, Eklavya, Bhopal**

Websites & E-Resources for Middle and Primary School Science

1. LET'S DISCOVER SCIENCE PART I By David Horsburgh (out of print but downloadable as a pdf file from the link: http://vidyaonline.org/arvindgupta/david1.pdf)
2. LET'S DISCOVER SCIENCE PART II By David Horsburgh (out of print but downloadable as a pdf file from the link: http://vidyaonline.org/arvindgupta/david2.pdf)
3. LET'S DISCOVER SCIENCE PART III By David Horsburgh (out of print but downloadable as a pdf file from the link: http://vidyaonline.org/arvindgupta/david3.pdf)
4. LET'S DISCOVER SCIENCE PART IV By David Horsburgh (out of print but downloadable as a pdf file from the link: http://vidyaonline.org/arvindgupta/david4.pdf)
5. LET'S DISCOVER SCIENCE PART V By David Horsburgh (out of print but downloadable as a pdf file from the link: http://vidyaonline.org/arvindgupta/david5.pdf)
6. LEARNING ABOUT LIVING PART ONE By David Horsburgh (out of print but downloadable as a pdf file from the link: http://vidyaonline.org/arvindgupta/D6.pdf)
7. LEARNING ABOUT LIVING PART THREE By David Horsburgh (out of print but downloadable as a pdf file from the link: http://vidyaonline.org/arvindgupta/D7.pdf)
8. THINKING AND DOING By David Horsburgh (out of print but downloadable as a pdf file from the link: http://vidyaonline.org/arvindgupta/thinkanddo.pdf)
9. SMALL SCIENCE for Classes I to V (with the accompanying Workbooks and Teachers' Books) Homi Bhabha Centre for Science Education,TIFR, Mumbai. http://www.hbcse.tifr.res.in/smallscience.
10. http://www.arvindguptatoys.com/ contains an enormous list of books on enlivening science learning, rated by Arvind Gupta. Many of them can be downloaded for free.
11. LOW COST EQUIPMENT FOR SCIENCE AND TECHNOLOGY EDUCATION - Vol. 1 - Compiled by UNESCO http://unesdoc.unesco.org/images/0010/001023/102321eb.pdf Provides ideas on how to make school science equipment using inexpensive materials.
12. LOW COST EQUIPMENT FOR SCIENCE AND TECHNOLOGY EDUCATION - Vol. 2 - Compiled by UNESCO - http://unesdoc.unesco.org/images/0007/000728/072808eb.pdf Provides ideas on how to make school science equipment using inexpensive materials.
13. http://www.exploratorium.edu/ is a fascinating website with tons of resources, activities and continuous updating to reflect the latest developments in the field.
14. http://www.johnkyrk.com/ has links to animations of cell structure, cell biology, DNA, etc.
15. http://www.bbc.co.uk/schools/scienceclips/ages/8_9/circuits_conductors_fs.shtml has an interactive tutorial on conductors.
16. http://www.primaryschool.com.au/scienceresults.php?kla=Science%20and%20Technology&unit=Switched%20On has links to several interactive lessons like the one above.
17. http://www.juliantrubin.com/bigten/pathdiscovery.html allows the user to simulate online repetitions of famous experiments or inventions.
18. http://www.freeindia.org/biographies/greatscientists/has biographies of Indian scientists.
19. http://www-gap.dcs.st and.ac.uk/~history/Indexes/Indians.html has info on ancient Indian mathematicians.
20. http://www.calcuttaweb.com/people/ snbose.shtml has some more biographies of Indian scientists.
21. http://www.shodor.org/succeed/curriculum/FOR/observation.html contains an interactive module to test one's observation powers.
22. http://www.scienceclass.net/PowerPoints/NOSO_Test_Review.ppt contains a PPT that talks of the nature of science.
23. http://www.scienceclass.net/PowerPoints/NOS_Test_ReviewGT.ppt contains a second such PPT.
24. http://www.scienceclass.net/ Teachers_Lessons.htm contains many valuable links to lessons on science topics for middle school level.
25. http://www.science-class.net/TAKS/taks.htm has many links to PPTs that elaborate specific concepts for middle school.
26. http://teachers.net/lessons/posts/1228.html (a website leading from http://www.curriki.org/xwiki/bin/view/Coll_rmlucas/LabClassificationofShoes?bc=;Coll_rmlucas.10 Classification) describes an activity wherein children have to classify shoes, so as to understand the importance of classification. (Useful in all branches of science, particularly chemistry and biology.)
27. http://www.encyclomedia.com/videoarctic_food_chain.html has a video on the arctic food chain.
28. http://www.kbears.com/ocean/octopus/index. html has a presentation and info on the octopus.
29. http://magma.nationalgeographic.com/ngexplorer/0309/articles/mainarticle.html contains rich info on underwater life.
30. http://www.seaworld.org/animal-info has a plethora of links and info on animals.
31. http://www.seaworld.org/funzone/ coloringbooks/pdf/emp-penguin.pdf has a colouring page for kids to have fun, when learning about animals.
32. http://kids.nationalgeographic.com/Animals/CreatureFeature/ is a superb site where you can click on an animal to find out more about it. The 'more' includes facts, a video with sound, a map of places where it can be found, etc.
33. Resources for Teaching Middle School Science (1998) - http://books.nap.edu/catalog.php? record_id=5774 (ISBN 0309057817) National Science Resources Center of the National Academy of Sciences, National Academy of Engineering, Institute of Medicine, and the Smithsonian Institution
34. Resources for Teaching Elementary School Science (1996) - http://books.nap.edu/catalog.php?record_id=4966 (ISBN 0309052939) National Science Resources Center of the National Academy of Sciences and the Smithsonian Institution
35. http://www.exploratorium.edu/explore/ handson.html contains many online as well as hands on activities for children of this age group and younger.

36. http://fi.edu/tfi/activity/act-summ.html contains many online as well as hands on activities for children of this age group and younger.
37. http://www.bbc.co.uk/schools/scienceclips/ages/10_11/science_10_11.shtml contains activities listed alphabetically, topic wise.
38. http://www.bbc.co.uk/schools/scienceclips/ages/9_10/changing_sounds.shtml contains simple sorting and tabulation exercises for Class V and below.
39. http://www.bbc.co.uk/schools/scienceclips/ages/10_11/forces_action.shtml contains more complicated tabulation and interpretation exercises for Class VI/VII.
40. http://www.bbc.co.uk/schools/teachers/ks4/bitesize_chemistry.shtml contains chemistry assessment worksheets for Classes VIII and IX.
41. http://www.bbc.co.uk/schools/gcsebitesize/chemistry/classifyingmaterials/ contains exercises for assessing classification of matter, atomic structure, bonding and formulae/ equations for Class VIII and above.
42. http://www.bbc.co.uk/schools/gcsebitesize/physics/electricity/ has some thinking-type questions for Class VIII and above.
43. http://www.bbc.co.uk/schools/gcsebitesize/physics/forces/ has excellent questions for Classes VII, VIII and above.
44. http://cse.edc.org/products/onlinecurr/ catalog.asp has an online catalogue of web-based resources for middle and elementary school science.
45. http://www.explorelearning.com/index.cfm?method=cResource.dspView&ResourceID=491 has a beautiful animation of the photoelectric effect, can be shown to Class VIII.
46. http://www.explorelearning.com has a number of interactive simulations to learn science, appropriate for this age group.
47. http://cse.edc.org/products/onlinecurr/WBMISearchResults.asp has a complete list of topics and the modules available therein, for students of this age group and a little older as well.
48. http://www.blupete.com/Literature/Biographies/Science/Scients.htm has links to biographies of scientists.
49. http://www.juliantrubin.com/bigten/path discovery.html is a website with a collection of links for discovery and invention.
50. http://www.fordham.edu/Halsall/science/sciencesbook.html is an Internet Sourcebook for the History of Science.
51. http://www.middleschoolscience.com/ tunefork.htm has a good activity for learning about the tuning fork and sound vibrations, suitable for Classes VII and VIII.
52. http://www.pbs.org/benfranklin/exp_ shocking.html has a lovely interactive simulation of the kite experiment performed by Benjamin Franklin.
53. http://www.pbs.org/teachers/sciencetech/ has grade-wise, topic-wise lesson plans for middle and primary school science teaching.
54. http://www.learner.org/resources/series90.html has a set of videos on the science of teaching science.
55. http://www.outlookindia.com/scriptur11w2.asp?act=sign&url=/full.asp?fodname=20050328&fname=Science&sid=1 has NobelPrize-Winning Science Discoveries made palatable for children.
56. http://www.teachernet.gov.uk/teachingand learning/subjects/science/science_teaching_resources/ provides links to a number of e-teaching learning resources for primary science.
57. http://www.firstscience.com/home/ is a leading online popular science magazine featuring articles on important breakthroughs, the latest science news, video clips, blogs, poems, facts, games and a whole lot more science-related content.
58. Chakmak: Science magazine for children http://www.eklavya.in/go/index.php?option=com_content&task=category&sectionid=13&id=57&Itemid=84
59. Sandarbh: A resource bank for teachers http://www.eklavya.in/go/index.php?option=com_content&task=category&sectionid=13&id=51&Itemid=72
60. Srote: Science and Technology features - http://www.eklavya.in/go/index.php?option=com_content&task=category&sectionid=13&id=56&Itemid=81
61. http://www.gobartimes.org/20090315/20090315.asp is a bi-monthly children's magazine highlighting news and views on environment and development through comic strips, cartoons, quizzes, essay competitions and interactive pages. It also serves as a useful teaching aid in classroomsfor teachers.
62. http://edugreen.teri.res.in/index.asp is a website for children that makes environmental learning fun
63. http://www.nuffieldcurriculumcentre.org/go/Default.html provides links to websites of various science projects that undertake to enliven science teaching
64. http://www.exploratorium.edu/ifi/resources/workshops/teachingforconcept.html provides a link to the paper "Teaching for Conceptual Change: Confronting Children's Experience; Watson, Bruce and Richard Kopnicek; Phi Delta Kappan, May 1990".
65. http://teachone.tripod.com/biology/ - compendium of resources on biology
66. http://www.nabt.org/websites/institution/index.php?p=38 - compendium of resources on biology
67. http://surfaquarium.com/NEWSLETTER/ biology.htm - compendium of resources on biology
68. http://www.accessexcellence.com/ - link related to biology and health issues
69. http://physicsworld.com/ - news, views and information for the global physics community
70. www.iop.org - A website from the Institute of Physics, it also has collections of resources, activities, for teachers at school and college level
71. www.physics.org – a guide to physics on web, this one website has the data base of more than 400000 physics websites and is still growing.
72. Time Life's Illustrated World of Science (1961 – 2003), Hong Kong: Time Life Inc. For details on all the Time Life Encyclopedia series of books visit the webpage: http://www.librarything.com/author/timelifebooks&all=1Thos. This covers a range of topics across disciplines: a visual treat for learners from multiple age groups, especially a school-going child.

Some Books containing Activities & Games in Science

Class	Topic
Little Toys, Arvind Gupta; National Book Trust, New Delhi	
V	Trees (Pg.33) [See also "My Book of Trees" by Nimret Handa], Area (Pg. 37), Volume (Pg.37)
VI	Area (Pg. 37), Volume (Pg. 37), Colour (Pg. 33), Pressure (Pg. 9), Siphon Action (Pg. 11), Pump (Pg. 13), Wind Energy (Pg.19), Sound/Vibration (Pg.15)
VII	Pressure (Pg. 9), Siphon Action (Pg. 11), Pump (Pg. 13), Wind Energy (Pg.19), Sound/Vibration (Pg.15), Static Electricity (Pg. 47), Friction & Gravity (Pg.31), Conversion of Potential Energy into Kinetic (Pg. 25), How Engines Work (Pg.21), Gear Wheel Motion, Circular and Linear Motion (Pg.17), Archimedes Principle (Pg.53)
VIII	Conversion of Potential Energy into Kinetic (Pg. 25), How Engines Work (Pg.21), Gear Wheel Motion, Circular and Linear Motion (Pg.17), Archimedes Principle (Pg.53), To understand flight (Pg. 41)
Ten Little Fingers, Arvind Gupta; National Book Trust, New Delhi	
V	Volume (Pg. 22), Weight (Pg. 13), Shape (Pg 11), Size (Pg. 12)
VI	Volume (Pg. 22), Pulleys (Pg. 25)
VII	Pulleys (Pg. 25)
Toy Bag, Arvind Gupta; Eklavya, Bhopal	
VII	Centripetal Force (Pg. 13)
Predator: The Forest Food Chain Game; Ampersand Press, Washington	
V	Food Chain (to be adapted to Indian animals and vegetation)
Science Fair Projects Energy, Bob Bonnet & Dan Keen; SCHOLASTIC	
V and VI	Energy

Class	Topic
Understanding Science - Level Two, Peter Clutterbuck; SCHOLASTIC	
V	Plants, Animals, Food Chain, Seeds, Vertebrates/Invertibrates, Habitats
VI	Gases, Liquids, States of Matter, Force & Motion
VII	Sound, Light, Energy, Digestive System, Respiratory System
Super Science Crosswords, Katherine Burkett; SCHOLASTIC	
V	Plants, Seeds, Vertebrates
Penguins Swim but Don't get wet, Melvin & Gilda Berger; SCHOLASTIC	
V	Animals
The Usborne Internet Linked Library of Science: Earth and Space, Howell, Rogers & Henderson; SCHOLASTIC	
VI	Earth Science
The Usborne Big Book of Experiments; SCHOLASTIC	
V	Plants & Animals
VI	States of Matter, Gases, Expansion & Contraction, Light & Sound, Plants & Animals, Forces & Motion
VII	Acids & Alkalis, Everyday Chemicals, Light & Sound, Electricity and Magnetism, Forces & Motion
VIII	Electricity and Magnetism
My Book of Trees, Nimret Handa; SCHOLASTIC	
V	Trees
Scholastic Encyclopedia of Animals, Laurence Pringle	
V and VI	Animals

Class	Topic
The Illustrated Encyclopedia of Science; Pentagon Press	
VI & VII	Changes, Everyday Materials, Earth Science
The Illustrated Encyclopedia of Earth; Pentagon Press	
VI & VII	Animals, Earth Science
Kingfisher Young Knowledge Materials: Liquids, Solids, Gases; Clive Gifford	
VI	Everyday Materials, Changes

Class	Topic
100 things you should know about Science, Steve Parker; Miles Kelley Publishing	
VI	Forces & Motion, Light & Sound, Everyday Materials
Sharing Nature with Children, Joseph Bharat Cornell	
V & VI	Food Chain, Plants, Animals, Birds
Simple Nature Experiments with Everyday Materials, Anthony D Fredericks	
V & VI	Plants, Animals, Birds, Insects

Some Important Organisations in Science Education

Sl. No.	Topic	Topic
1.	Agastya International Foundation	Address : Kataria House, 219 Kamaraj Road, Bangalore - 560042 Phone : 080-25548913-16 Website : www.agastya.org E-Mail : maagastya@vsnl.com
2.	Avehi-Abacus Project	Address : Third floor, K.K. Marg Municipal School, Saat Rasta, Mahalaxmi, Mumbai- 400 011 Phone : (022)2307 5231, (022)2305 2790 Website : http://avehiabacus.org E-mail : avcab@vsnl.com
3.	Bangalore Association for Science Education (BASE)	Address : Jawaharlal Nehru Planetarium, Sri. T. Chowdaiah Road, High Grounds, Bangalore-560001 Phone : 080-22266084, 22203234 Website : http://www.taralaya.org E-Mail : taralaya@vsnl.com
4.	Bharat Gyan Vigyan Samiti/ Indian Organizations for	Address : Basement of Y.W.A. Hostel No. II, Avenue - 21, G-Block, Saket, New Delhi-110 017. Phone : 011-2656 9943 Learning and Science Website : http://www.bgvs.org E-Mail : bgvs_delhi@yahoo.co.in, bgvsdelhi@gmail.com
5.	Center for Environment Education	Address : Nehru Foundation for Development, Thaltej Tekra, Ahmedabad - 380 054, Gujarat Phone : 079-26858002 Website : http://www.ceeindia.org E-Mail : cee@ceeindia.org
6.	Center for Science and Environment	Address : 41, Tughlakabad Institutional Area, New Delhi-110062, INDIA Phone : 011-29955124/25, 29956394, 29956401, 29956399 Website : http://www.cseindia.org E-Mail : cse@cseindia.org
7.	C.P.R. Environmental Education Centre (CPREEC)	Address : The C. P. Ramaswami Aiyar Foundation No.1, Eldams Road, Alwarpet, Chennai Tamilnadu, India. PIN - 600 018 Phone : 044-24337023, 24346526, 24349366 Website : www.cpreec.org E-Mail : cpreec@vsnl.com, ecoheritage_cpreec@vsnl.net
8.	Eklavya	Address : E-10, BDA Colony, Shankar Nagar, Shivaji Nagar, Bhopal - 462 016 Madhya Pradesh, India Phone : 0755-267 1017,255 1109 Website : http://eklavya.in
9.	Eklavya Institute of Teacher Education (EI)	Address : Eklavya Education Foundation, Core House, Off. C.G. Ellisbridge, Ahmedabad-6 Phone : 079-26461629 Website : www.eklavya.org E-mail : eklavya@ekalavya.org
10.	Homi Bhabha Centre for Science Education	Address : Mr. H C Pradhan, Tata Institute of Fundamental V.N. Purav Marg, Mankhurd, Mumbai, 400088 Phone : 022-25554712, 25580036 Website : www.hbcse.tifr.res.in E-Mail : postmaster@hbcse.tifr.res.in

Sl. No.	Topic	Topic
11	Indian Science Congress Association	Address : 14, Dr. Biresh Guha Street, Kolkata - 17 Phone : 033-2287 4530 Website : http://sciencecongress.nic.in E-mail : iscacal@vsnl.net
12.	Kalpavriksh Environment Action Group	Address : 134, Tower 10, Supreme Enclave, Mayur Vihar, Phase 1, Delhi 110 09 Phone : 011-22753714 Website : http://www.kalpavriksh.org
13.	Kerala Sastra Sahitya Parishad	Address : Parishad Bhavan, Chalappuram PO, Kozhikkode - 673 002, Kerala, India Phone : 0495-2701919, 9447038195 Website : http://www.kssp.org.in E-Mail : gskssp@gmail.com
14.	National Council for Science & Technology Communication (NCSTC)	Address : Department of Science & Technology Technology Bhavan, New Mehrauli Road, New Delhi-11001 Phone : 011-26567373, 26962819 Website : www.dst.gov.in E-Mail : dstinfo at nic dot in
15.	Navanirmiti	Address : Navnirmiti, 301,302,303, 3rd floor, A wing, Priyadarshani Apartment, Padmavati Road, IIT Market Gate, Powai, Mumbai- 400 076. Phone ; 022-25773215, 25786520 Website : www.navnirmiti.org E-mail : contact@navnirmiti.org
16.	Nuffield Foundation	Address : 28 Bedford Square London WC1B 3JS Phone : 020 7631 0566, 020 7580 7434 Website : www.nuffieldfoundation.org E-mail : info@nuffieldfoundation.org
17.	Rajiv Gandhi Foundation	Address : Jawahar Bhawan, Dr. Rajendra, Prasad Road New Delhi - 110 001, INDIA Phone : 011-23755117, 23312456 Website : www.rgfindia.org E-mail : info@rgfindia.org
18.	State Institute of Science Education	Address : S.I.S.E (Rajya Vigyan Sansthan), P.S.M Campus, Jabalpur, M.P. 482001 Phone : 0761-2625776 Website : http://sisejbp.nic.in
19.	Sutradhar	Address : 59/1, 3rd Cross, 10th A Main, Indiranagar 2 Stage, Bangalore 560038. Phone : 080-25288545,25215191 Website : www.sutradhar.com E-Mail : sutra@vsnl.com
20	Tamil Nadu Science Forum	Address : Balaji Sampath, C2 Ratna Apts. AH 250, Shanti Colony, Annanagar, Chennai-600040, TAMIL NADU Phone : 044-26213638 Website : bsampath@eng.umd.edu
21	Tamil Nadu State Council for for Science and Technology,	Address : Directorate of Technical Education Campus, Chennai 25 Phone : 022-22301428 Website : www.tanscst.org E-mail : enquiry@tnscst.org
22	Vidya Bhawan Society	Address : Fatehpura, Udaipur, Rajasthan 313001 Phone : 0294 2450911 Website : http://www.vidyabhawan.org E-Mail : info@vidyabhawan.org, vbsudr@yahoo.com
23	Vikram A Sarabhai Community Science Center	Address : Opp. Gujarat University, Navrangpura, Ahmedabad - 380 009 Phone : 079-26302085,26302914 Website : www.vascsc.org E-Mail : info@vascsc.org

MATHEMATICS

Some Popular Publishers of Math Books for Children

Sl. No.	Name of the Publisher	Website
1	Children's Book Trust	www.childrensbooktrust.com
2	Eklavya	www.eklavya.in/
3	Flipkart	www.flipkart.com
5	Macmillan Publishers	www.international.macmillan.com
4	National Book Trust	www.nbtindia.org.in
6	National Council of Educational Research and Training	www.ncert.nic.in
7	Navnirmiti	www.navnirmiti.org/index.html
8	Pratham Books	www.prathambooks.org
9	Scholastic India Publishing	www.scholasticindia.com/publishing.as
10	School Zone Publishing	www.schoolzone.com
11	The Mathematical Sciences Trust Society	www.mstsindia.org/
12	Vidya Bhawan Society	www.vidyabhawan.org
13	Digantar Khel Kud Society	
14	Homi Bhabha Center for Science Education, Mumbai	www.hbcse.tifr.res.in

Some Articles on Mathematics published in Sandarbh, by Eklavya, Bhopal*

Iss. No.	Title of the Article	Author
1	I Am Afraid of Mathematics	Ganga Gupta
2	Something- From the Past	Rohit Dhankar
4	An article on statistics	Stephen J.Goold
6	Understanding of Students About Mathematics	Madhav Kelkar
10	What the Teacher Said and What the Students Understood	Venu Endle
22-23	Puzzle of a Magical Pond	Vijay Shankar Verma
28	Wonderful Geometrical Figures	Abhishek Dhar
33	Relation of Circle with Radius	Jui Dadhich
40	Pieces of Paper, Algebra and Pythagoras theorem	Prakash Burte
51	My Journey	P. K. Srinivasan
52	Teaching Negative Numbers to School Children	Jayashree Subramanian
53	Series and Infinite Series	Jayashree Subramanian
54	Making Mathematics Interesting	Pramod Maithil
54	Multiplication of Negative Numbers	Jayashree Subramanian
55	Zero + Zero + Zero + Zero + ...	Jayashree Subramanian
57	Teaching Place Value and Double Column Addition	Constance Kamii and Linda Josesh
62	My Mathematics Classes and Saurabh	Mohammad Umar

*Original titles are in Hindi.

Articles from magazines published by Vidya Bhawan ERC

Title of the Book	Title of the Article	Author
Construction of Knowledge	About learning Mathematics (Also available in Hindi.)	H.K. Dewan and Ashok Kumar
	Teaching of Mathematics at Primary Stage	H.K. Dewan
	About learning Mathematics	H.K. Dewan
	Mathematics: Materials and Laboratories	H.K. Dewan
Material Development for	LMT-01 series , AMT-01 series	

Articles from "Primary Education vol.2 July-Sep 02"*

SL. No.	Title of the Article	Author
1	A way to explore Children's understanding of Mathematics	Padma M. Saragapani.
2	Errors as Learning Strategies	R.K. Agnihotri
3	Reflections on Mathematics Teaching	H.K. Dewan
4	Common Errors in Primary School Mathematics?	H.C. Pradhan
5	Does the Child Know any Mathematics	H.K. Dewan
6	Intercultural Mathematics Education in Peru	Joachim Schroeder
7	How Mathematical Ideas Grow - an extract	IGNOU's AMT series
8	Why have a Laboratory for Mathematics?	Rohit Dhankar
9	Math phobia among Teachers and Children: Glimpses from a Survey	S.N. Gananath & C Srinath
10	The Metric Mela, a Celebration of Measurement in Karnataka	K.M. Sheshagiri
11	Teaching Tribal Children Mathematics Through Real Contexts	Binaya Krushna Pattanayak

*Original titles are in Hindi.

Some NGOs working in the area of Math Education

- Eklavya, Bhopal
- Homi Bhabha Centre for Science Education, Mumbai
- Jodogyan, Delhi
- Navanirmiti, Mumbai
- Shishu Milap, Vadodara
- Suvidya, Mysore
- Vidya Bhawan Society, Udaipur

The site www.arvindguptatoys.com has several books / publications on Mathematics. For example, some of the books are 'Illustrated Maths Formulas', 'Geometry for Kids', 'Math Wonders' etc. We invite readers to visit the site.

Some Web Links to make Math Learning fun

1. http://www.mathcelebration.com/index.html
2. http://www.artofproblemsolving.com/
3. http://www.noetic-learning.com/others.jsp
4. http://cte.jhu.edu/techacademy/web/2000/heal/siteslist.html
5. http://www.cimt.plymouth.ac.uk/
6. http://vedicmathsindia.blogspot.com/
7. http://www.vedicmathsindia.org/
8. http://www.teach-nology.com/gold/basicword.html
9. http://www.mathplayground.com
10. http://www.math.com
11. http://www.mathsisfun.com
12. http://www.coolmath4kids.com
13. http://www.mathcats.com
14. http://www-history.mcs.st-and.ac.uk/BirthplaceMaps/Countries/India.html
15. http://www.teachingideas.co.uk/maths/contents.html
16. http://www.playkidsgames.com/mathGames.html
17. http://www.azimpremjiuniversity.edu.in/content/publications - At Right Angles is a publication of Azim Premji University which is a very useful resource for school mathematics

LANGUAGE

Some Government Organisations Working in the Field of Promotion and Development of Languages

Sl. No.	Name of the Organisation	Website
1	Central Hindi Directorate, New Delhi	hindinideshalaya.nic.in
2	Central Institute of Indian Languages, Mysore	www.ciil.org
3	Commission for Scientific and Technical Terminology, New Delhi	www.cstt.nic.in
4	English and Foreign Language University, Hyderabad	www.ciefl.ac.in
5	Kendriya Hindi Sansthan, Agra	www.hindisansthan.org
6	Maharishi Sandipani Rashtriya Veda Vidya Pratishthan, Ujjain	
7	National Council for Promotion of Sindhi Language, Vadodara	www.ncpsl.org
8	National Council for Promotion of Urdu Language, New Delhi	www.urducouncil.nic.in
9	National Council of Educational Research & Training, New Delhi	www.ncert.nic.in
10	National Translation Mission	www.ntm.org.in
11	Rashtriya Sanskrit Sansthan, New Delhi	www.sanskrit.nic.in

Some Non-Government Organisations Working in the Area of Language Education

Sl. No.	Name of the Organisation	Website
1	Akshara Foundation, Bangalore	www.aksharafoundation.org
2	British Council, India	www.britishcouncil.org
3	Centre for Learning, Bangalore	www.cfl.in
4	Centre for Learning Resources, Pune	www.clrindia.net
5	Digantar Shiksha Evam Khelkud Samiti, Jaipur	www.digantar.org
6	Dr. Reddy's Foundation, Hyderabad	www.drreddysfoundation.org
7	Eklavya, Bhopal	www.eklavya.in
8	Pragat Shikshan Sanstha, Phaltan, Maharashtra	www.indiaprogressiveeducation.com
9	Pratham, Mumbai	www.pratham.org
10	Rishi Valley Institute of Teacher Education Chittoor District, Andhra Pradesh	www.rishivalley.org/rvite/rvite_overview.html
11	The Promise Foundation, Bangalore	www.thepromisefoundation.org
12	The Teacher Foundation, Bangalore	www.teacherfoundation.org
13	Vidya Bhawan Education Resource Centre, V.B. Teachers College, Udaipur	www.vidyabhavansociety-seminar.org/

List of Some Popular Children's Books' Publishers

Sl. No.	Name of the Publisher	Website
1	A&A Book Trust / Arvind Kumar Publishers	www.arvindkumarpublishers.com
2	Alka Publications	www.alkapublications.com
3	Anveshi (through DC Books) - Tales from the margins a series of eight books	www.anveshi.org/content/view/172/99/
4	Bharat Gyan Vigyan Samiti (BGVS)	www.bgvs.org
5	BPI India Pvt. Ltd.	www.bpiindia.com
6	Cambridge University Press	www.cambridge.org/asia/
7	Center for Learning Resources	www.clrindia.net/materials/childrenbooks
8	Chandamama India	www.chandamama.com
9	Children's Book Trust	www.childrensbooktrust.com
10	Eklavya	www.eklavya.in
11	Eureka Books (EurekaChild An AID India Education Initiative)	www.eurekachild.org/eurekabooks
12	Hamlyn: Octopus Publishing Group	www.octopusbooks.co.uk/hamlyn/
13	Harper Collins Children's Books	www.harpercollinschildrens.com
14	India Book House	www.ibhworld.com
15	Janchetna	www.janchetnaaa.blogspot.com/
16	Jyotsna Prakashan	
17	Karadi Tales Company	www.karaditales.com
18	Katha, New Delhi	www.katha.org
19	Macmillan Publishers	www.international.macmillan.com
20	National Book Trust	www.nbtindia.org.in
21	National Council of Educational Research and Training	www.ncert.nic.in
22	Navakarnataka Publications	www.navakarnataka.com
23	Navneet Prakashan Kendra, Ahmedabad, Gujarat	
24	Oxford University Press	www.oxfordonline.com
25	Parragon Books	www.parragon.com
26	PCM Children's Magazine	www.pcmmagazine.com
27	Pratham Books	www.prathambooks.org
28	Puffin Books, Penguin Group	www.puffin.co.uk
29	Pustak Mahal	www.pustakmahal.com
30	Rajkamal Prakashan Samuha	www.rajkamalprakashan.com
31	Ratna Sagar Publishers	www.ratnasagar.com
32	Room to Read	www.roomtoread.org
33	Sahmat	www.sahmat.org
34	Scholastic India Publishing	www.scholasticindia.com/publishing.asp
35	Shree Book Centre, Mumbai	
36	Tara Books	www.tarabooks.com
37	TERI Press	www.bookstore.teriin.org/childrencorner.php
38	The Learning Tree Store	www.tltree.com
39	Thomas Nelson	www.tommynelson.com
40	Tormont Publication Inc.	
41	Tulika Books	www.tulikabooks.com
42	Two-can Publishing/Cooper Square Publishing	www.two-canpublishing.com/ www.coopersquarepublishing.com
43	Vasan Publications	www.mastermindbooks.com

Some Weblinks for Language Learning

1. http://www.bbc.co.uk/schools/magickey/adventures/dragon_game.shtml is a game that helps learn about a question and a question mark.
2. http://www.bbc.co.uk/schools/magickey/adventures/creamcake_game.shtml is a game that helps learn rhyming words, their pronunciation and use in sentences.
3. http://www.proteacher.com/cgi-bin/outsidesite.cgi?id=4731&external=http://www.sdcoe.k12.ca.us/score/actbank/sorganiz.htm&original=http://www.proteacher.com/070037.shtml&title=Graphic%20Organizers contains well-delineated writing standards, level wise.
4. http://www.lessonplanspage.com/LAK1.htm contains a whole host of ideas for language activities
5. http://www.col-ed.org/cur/lang.html has a plethora of links to lesson plans for language learning, and none of them conventional ones.
6. http://www.op97.org/ftcyber/jack/puzzles/puzzles.html has easy, medium and hard jigsaw puzzles that are based on fairy tales.
7. http://www.youtube.com/watch?v=2lVNi-FpEuY has a video of the Panchatantra story about the doves in a hunter's net (collective strength) in Hindi.
8. http://www.youtube.com/watch?v=5ODqhC-GhIc&NR=1 has a video of the Panchatantra story "The ungrateful Mouse" in Hindi.
9. http://www.youtube.com/watch?v=ANjO_VjjlDw&feature=related has a video of a story on why the sea water is salty.
10. http://www.pitt.edu/-dash/type0510a.html contains links to different versions of the story of CINDERELLA, from around the world.
11. http://www.darsie.net/talesofwonder/ contains Folk and Fairy Tales from around the World.
12. http://www.rubybridges.org/story.htm contains the inspiring story of Ruby Bridges and her teacher
13. http://www.thepromisefoundation.org/TPFLtRB.pdf is report of a Study on Learning to Read in Bengali, useful for language researchers in Indian languages.
14. http://www.thepromisefoundation.org/TPFRdK.pdf is report of a Study on Reading Difficulties in Kannada, useful for language researchers in Indian languages.

Some Websites for Language Resources

1. http://www.bookadventure.com/ki/bs/ki_bs_helpfind.asp allows the user to enter the preference (level, type of book, etc.) and then generates an entire booklist, complete with title, author name, ISBN number, etc.
2. http://school.discoveryeducation.com/ provides innovative teaching materials for teachers, useful and enjoyable resources for students and smart advice for parents about how to help their kids enjoy learning and excel in school. The site is constantly reviewed for educational relevance by practicing classroom teachers in elementary school, middle school, and high school.
3. http://puzzlemaker.discoveryeducation.com/ allows the user to create and print customized word search, criss-cross, math puzzles, and more using his/her own word lists.
4. http://www.henry.k12.ga.us/cur/Kinder.htm has a host of ideas for the classroom, to improve language, science, math, art, and many other skills.
5. http://gem.win.co.nz/mario/wsearch/wsearch.php allows you to generate your own word maze/word search puzzle.
6. http://georgemcgurn.com/articles/readingforpleasure.html has a good article on reading for pleasure.
7. http://www.atozteacherstuff.com/pages/374.shtml for a lovely idea on getting children excited about reading.
8. http://www.readingrockets.org/article/c55/ for another idea
9. Also, see: http://www.bbc.co.uk/raw/campaignpartners/ideasbank/reading/
10. http://www.vrml.k12.la.us/krause/Reading.htm has slide shows for reading for kids.
11. http://kielikompassi.ulc.jyu.fi/kookit0405/seashore/mrshrimpandsammy.htm has a film to teach pronunciation.
12. http://www.msgarrettonline.com/descripwords.html for descriptive words
13. http://esl.about.com/od/vocabularylessonplans/a/characteradj.htm for an excellent activity that develops and broadens knowledge of character adjective vocabulary.
14. http://www.scholastic.com/ispy/play/ for a set of award winning puzzles and games that allow children to discover word associations, word play and themes that help them build important learning skills including reading.
15. http://www.readwritethink.org/materials/in_the_bag/index.html for an interactive game that builds vocabulary.
16. http://learnenglishkids.britishcouncil.org Simple self-learning materials for kids.
17. www.activityvillage.co.ukThere are a number of tasks leading to language learning.
18. www.englishbee.net, English video lessons and exercises
19. www.holidays.mrdonn.org, The Diwali lesson plans and games for kids are quite innovative
20. www.abcmouse.com/ed/activitiesIt is a full online curriculum for preschool through kindergarten.
21. www.uniqueteachingresources.com Free teaching resources for language teachers
22. www.teachingenglish.org.en Free classroom materials to download short activities, lesson plans
23. http://esltopics.com Teachers can use the free material for teaching vocabulary to non-English speaking children
24. http://www.azimpremjiuniversity.edu.in/content/publications - Language and Language Teaching is a publication of AzimPremji University focusing on issues and practices relevant to language teaching

Some Weblinks to E-Books and Online Libraries

1. http://worldlibrary.net/WidgerLibrary.htm has several e-books that can be downloaded.
2. http://www.sacred-texts.com/hin/ift/index.htm has links to Indian fairy tales.
3. http://primary.naace.co.uk/activities/BigBooks/index.htm has audio-e-books for kids.
4. http://www.vrml.k12.la.us/krause/Reading.htm for slide shows that excite a child to read.
5. http://www.arvindguptatoys.com/ contains an enormous list of books on enlivening language learning, rated by Arvind Gupta. Many of them can be downloaded for free.

Books

The following books of the New Ways in TESOL series edited by Jack C. Richards present learner-centred, cooperative, communicative activities.

1. Kathleen Bailey and Lance Savage (ed).New Ways in Teaching Speaking,TESOL.1995.
2. Paul Nation. New Ways in Teaching Vocabulary, TESOL,1995.
3. Martha C. Pennington (ed). New Ways in Teaching Grammar, TESOL, 1995.
4. Richard R.Day (ed). New Ways in Teaching Reading, TESOL, 1995.
5. Ronald C. White (ed).New Ways in Teaching Writing, TESOL, 1995.

Publications

The following publications of the Regional Institute of English, South India, Bangaloreare quite innovative in their approach to English language teaching:

1. Play and Play : a set of 50 traditional games from across the country with language elements integrated at each level.
2. Play with Words: a variety of reading texts like picture cards, small books, big books and colour books to help children discover the pleasures of reading.
3. Hello English : a series of 20 interactive films providing meaningful exposure to the language with opportunities for children to talk, sing and play.
4. Enact English : a number of drama activities and songs to facilitate language learning in a natural and effortless manner.
5. Learning English is fun: about 25 audio cassettes involving the children and the teacher in a series of fun-filled interactive activities and songs.
6. English in Pictures: a number of pictures with a set of activities for each picture to help children use language in realistic contexts.

SOCIAL SCIENCE



Organisations that Work on Social Sciences at School Level - On Curriculum and Material Development Issues

Sl. No.	Name of Organisation	Location
1	Eklavya	Bhopal, MP
2	Uttrakhand Seva Nidhi	Almora, Uttarakhand
3	Nirantar	New Delhi
4	Khoj	Mumbai
5	Avehi Abacus	Mumbai
6	Swanirbhar, Organisation based in Noth 24 Pargana	West Bengal
7	SAHMAT, Safdar Hashmi Memorial Trust	New Delhi
8	Vidya Bhawan Society	Udaipur, Rajasthan
9	Digantar	Jaipur, Rajasthan
10	Pravah	Delhi

Schools that have used Innovative Methods to Teach Social Science

Sl. No.	Name of School	Location
1	The School	Chennai
2	Rishi Valley School, (Social Science and History curriculum for classes 4 to 7)	Madanapalle
3	Shishu Van	Bombay
4	Center for Learning	Bangalore, Hyderabad
5	Aadharshila	Sendhwa, MP

(Most of these schools have their websites where contacts and materials can be accessed)

Publishers in Social Sciences

- Granthshilpi - New Delhi
- Eklavya, Bhopal
- Bharat Gyan Vigyan Samiti, Delhi
- NCERT, New Delhi
- Publication Division, New Delhi
- National Book Trust, New Delhi
- Children's Book Trust, New Delhi
- Books on Social Science education by Sage Publications, New Delhi
- Books published for Children by Oxford University Press, New Delhi
- People's History Series, Tulika Publications, Chennai
- Katha, New Delhi
- Tara, Chennai
- Navayana, New Delhi

Some Useful Books

- Samajik Adhayayan - 6, 7 and 8 - Textbooks developed and published by Eklavya, Bhopal (Hindi)
- Textbook of Social Science for class 6, 7 and 8 (English, 1994): Eklavya, Bhopal.
- Textbooks of Social Science for classes 6 & 7, developed by Eklavya for Lok Jumbish Parishad, Rajasthan, 1999/2000.
- Samajik Adhayan Sikshan - Ek Prayog, published by Eklavya
- Hamari Dharati, Hamara Jeewan, textbooks for classes 6, 7 & 8, Uttarakhand Sewa Nidhi, Almora
- Workbooks for Rajasthan textbooks for Classes 6, 7 & 8.
- Workbooks of Haryana for Class 6, 7 & 8 (2008).
- Text Book of Chattisgarh for classes 3 to 8: EVS and Social Sciences, SCERT, Raipur.
- Textbooks for Ladakh Hill Council on Environmental Studies Part II for classes 4 & 5
- Our Tribal Ancestors - Prehistory for Indian Schools, part 1 & 2, Rishi Valley Education Series
- Sangam Age and Age of the Pallavas - TVS Education Society & Macmillan
- The Young Geographer series, Haydn Evans, Wheaton – Pergamon
- Geography Direct – Collins Educational
- Khushi-Khushi for class 3, 4, 5: Eklavya, Bhopal
- Apne Aas pas, textbook for classes 4 & 5, Digantar, Jaipur
- Kuchh Karen, Vidya Bhawan Society, Udaipur
- Textbooks of NCERT for class 3 to 8: NCERT, New Delhi
- Textbooks of EVS and Social Science for classes 3 to 8, SCERT, Delhi

Some Resource & Reference Books

- Itihas ke Srote, bhag – 1, A resource book for Teachers, published by Eklavya
- People, Places and Change: An Introduction to World Cultures by Berry and Ford
- Puffi n History of India series by Puffi n Books, Delhi
- Report of the seminar on Environment Studies (1995): Vidya Bhawan Society
- Social Science Learning in Schools - Documentation of the Eklavya's social science experiment, Edited by Prof Poonam Batra and published by SAGE
- Teaching Social Science in Schools - by Alex M George and Amman Madan, Published by SAGE
- Walk With Me – A guide for Inspiring Citizenship Action – Pravah, New Delhi
- Writings of Teachers Ideas for the Classroom – East West Books, Madras
- Social Studies Instruction in the Elementary School by Richard E Servey
- Learning from Confl ict by Prof Krishna Kumar
- Turning the Pot Tilling the Land by Kancha ILAIAH – Navayana Books
- Different Tales Series – Anveshi and D.C. Books, Kerala

Localised Resource Books as Models for Creation

- Our City Delhi – Narayani Gupta - Oxford University Press
- School and Society and Area Study of Mylapore – Tara Publishing

Journals

- Sandarbh (For Teachers)
- Vimarsh (for Teachers)
- Chakmak (for children)
- Contemporary Education Dialogue`
- Economic and Political Weekly
- Teacher Talk, A Journal of the TVS Educational Society
- Journal of the Krishnamurthy Schools

Films

- The Young Historians – Series of fi lms by Ms Deepa Dhanraj
- Bharat Ki Khoj, Tele Serial produced & directed by Mr Shyam Benegal
- Bharat Ki Chhap, fi lms on Indian History
- Naata(on Communalism) TISS Mumbai (Anjali Monteiro)
- India Untouched – Stalin (on Untouchability in India)
- War and Peace – Anand Patwardhan
- Making of the Mahatma – Shyam Benegal
- Ambedkar
- Nanook of the North (on the life of Eskimos)

Publishers in Social Sciences

- http://www.neok12.com/History-of-India.htm - has many videos on topics in social science
- Eklavya publications, http://www.eklavya.in
- Sangati interactive teaching learning kits, http://avehiabacus.org/about.htmlhttp://schools.india waterportal.org/
- Me and my City – sunitha Nadhamuni and Rama Errabelli Janagraha Center for Citizenship and Democracy, www.janaagraha.org
- Water related projects and resources, http://schools.indiawaterportal.org/
- Heritage related resources The Indian National Trust for National and Cultural Heritage, http://www.intach.org/
- Curriculum based story books: IETS publications http://www.ilfsets.com/solutions.asp?secid=1&menuid =3&smenuid=1&childid=1&subchildid=2&pageid=345
- http://www.worldsocialscience.org/, the site of the International Social Science Council.
- UNESCO's Social and Human Sciences page, http://www.unesco.org/new/en/social-and-human-sciences/ and Education page, http://www.unesco.org/en/education
- The IEA's • Civic Education Study link is, http://www.iea.nl/icces.html.
- Bombay Natural History Society, http://www.bnhs.org
- Kalpavriksha Environment Action Group, http://www.kalpavriksha.org
- Center for Environment Education, India, http://www.ceeindia.org/cee/index.html
- Down to Earth Magazine, http://www.downtoearth.org.in
- Center for Science and Environment, India, http://www.cseindia.org

Some other Important Websites

- www.school.discovery.com
- www.nationalgeographic.com
- www.incredibleindia.org
- www.animalplanet.co.uk
- www.greenpeace.org
-
- www.britanica.com
- www.arvindguptatoys.com